खालसा ज्ञान प्रकाश

अर्थात

गुरु ग्रन्थ का वैदिक पन्थ

(दूसरा भाग)

गुरु नानक देव जी

महर्षि स्वामी दयानन्द जी

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तक...
परिग्रहण क्रमांक ... 5110
...नन्द महिला महावि...

स्वामी अमृतानन्द जी सरस्वती

ओ३म भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

खालसा ज्ञान प्रकाश

अर्थात

गुरु ग्रन्थ का वैदिक पन्थ

(दूसरा भाग)

लेखक-
स्वामी अमृतानन्द जी सरस्वती

प्रकाशक-
स्वामी आत्मानन्द प्रकाशन मन्दिर
वैदिक साधन आश्रम यमुनानगर
(अम्बाला)

मूल्य २ रुपये

॥ ओ३म् ॥

परिचय

इस पुस्तक के लेखक श्री स्वामी अमृतानन्द जी सरस्वती (महाशय तारा चन्द जी आर्य) हैं, आप का जहां वैदिक ग्रन्थों का पर्याप्त स्वाध्याय है वहां सिक्ख इतिहास तथा गुरबाणी का भी इतना स्वाध्याय है कि जितना किसी सिक्ख भाई का भी शायद ही होगा।

आप ने पहले छोटी छोटी पुस्तकों के रूप में वैदिक धर्म के सिद्धान्तों तथा सिक्ख धर्म के सिद्धान्तों पर काफ़ी ट्रैक्ट लिखे परन्तु वह उर्दु लिपि में ही छपते रहे अब आप ने उन को हिन्दी में भी छपवाया है जो कि हिन्दी जानने वाली जनता के लिये अति लाभदायक सिद्ध होगा और हिन्दू सिक्ख अन्तर (फासला) जो कुछ स्वार्थी भाई बढ़ा रहे हैं और बढ़ा चुके हैं वह अन्तर भी पक्षपात को छोड़ कर पढ़ने वालों का अवश्य ही दूर होगा और वह समझ जायेंगे कि हिन्दू सिक्ख दो नहीं किन्तु एक ही वृक्ष की दो शाखायें हैं।

दूसरी बात नम्रता पूर्वक प्रार्थना करने की है कि पुस्तक छपने आदि में कुछ त्रुटियां रह गई हैं उनको दृष्टि में न रखते हुए, लेखक की लेखनी से निकले हुए भावों को समझने का यत्न करेंगे इसी से ही पूरा लाभ होगा। कहा गया है:-

जाति न पूछो साधू की, पूछ लीजिये ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहने दो मयान॥

मथुरा दास नवांकोट अमृतसर

विषय सूची

सं०	विषय	पन्ना
१	गुरु ग्रन्थ साहिब की आत्म कथा-	१ से ३६ तक
	भूमिका	१
	विचारारम्भ	५
	सिखों का, गुरुओं और ग्रन्थ साहिब के सम्बन्ध में विश्वास	१३
	गुरु बाणी क्यों लिखी गई	१६
	ग्रन्थ साहिब का निर्माण	२१
	दमदमा साहिब वाला न्या ग्रन्थ साहिब	२६
२	प्राचीन सोलह संस्कार	३७ से ७४ तक
	भूमिका	३७
	सोलह संस्कार	३६
	बच्चों का पढ़ना पढ़ाना	४४
	वेदोक्त विवाह संस्कार और नवीन गुरु मर्यादा पर तुलनात्मिक विचार	४७
	विवाह का पहला नियम	५४
	,, दूसरा ,,	५८
	,, तीसरा ,,	५६
	,, चौथा ,,	६०
	,, पांचवां ,,	६३
	,, छटा ,,	६६
	,, सातवां ,,	६६
	यज्ञोपवीत और मुण्डन संस्कार	७०

सं०	विषय	पन्ना
	विवाह संस्कार	७२
३	स्त्री जाति	७५ से ९२ तक
	स्त्री का कर्तव्य	७६
	पांच ककार या भेष	७९
	दोष सिखों का है	८८
	अर्थ का अनर्थ	८९
	केश विचार	९१
४	दश। सिख गुरु आर्य थे	९३ से १४० तक
	(सिख हिन्दू नहीं पुस्तक के उत्तर में)	
	हमारा नम्र निवेदन	९३
	विचारारम्भ	९६
५	गुरु घर में धन और मान के झगड़े	१४१ से १६८ तक
	भूमिका	१४१
	विचारारम्भ	१४३
	वास्तव बात यह है	१६१
६	यज्ञोपवीत संस्कार और सिक्ख गुरु	१६९ से १९० तक
	प्रस्तावना	१७०
	विचारारम्भ	१७१
७	सिक्ख गुरुओं की मातृ भाषा	१९१ से २१८ तक
	प्रस्तावना	१९२
	विचारारम्भ	१९३
	हमारी पुस्तकों की सूची	२१९

ओ३म्

सिख मत के धर्म पुस्तक

गुरू ग्रन्थ साहिब की आत्म कथा

भूमिका

जब पहले पहल गुरू अर्जुन देव जी ने ग्रन्थ साहिब लिखवाया तो इस का नाम पोथी साहिब था। जब अखनूर की बीड़ लिखी गई, तो उस के आरम्भ में ग्रन्थ साहिब का सूची पत्र लिखा गया। दसम गुरू गोबिन्द सिंह जी महाराज तक यह गुरू पदवी को प्राप्त न कर सका, बाद के कुछ सिखों ने दाअवा किया कि दसम गुरू ने आज्ञा दी है कि देह धारी गुरुओं का सिलसिला (क्रम) समाप्त हो कर अब गुरयाई ग्रन्थ साहिब को दी जावे। परन्तु नामधारी आदि कई सिख सम्परदाय इस दाअवे को स्वीकार नहीं करते। कई इतिहासकार भी लिखते हैं कि दसम गुरू के प्रलोक गमन के कई वर्ष पीछे इस को गुरू ग्रन्थ साहिब की पदवी मिली परन्तु अब इस का नाम गुरू बाबा है। और नवीन सिखों में इस को ईश्वरी ज्ञान माना जाता है।

ज्ञानी प्रताप सिंह जी के शब्दों में चार वेद ब्रह्मा जी का ज्ञान हैं या चार ऋषियों का अनुभव, कुरान मुहम्मद पर, इंजील ईसा पर, तौरेत मूसा पर नाज़ल हुई अथवा उतरी या आई मानी जाती है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब सत्गुरुओं और कई भक्तों का ज्ञान और अनुभव है (लग भग चार दर्जन या ४८ व्यक्तियों का) ज्ञान वाहिगुरू का है परन्तु प्रकाश कई हृदयों से हुआ है। आगे वह लिखते हैं कि :-

आत्मिक गुणों की जो धारा भारत के भिन्न भिन्न भागों में चल रही थी उस का संगम गुरू ग्रन्थ साहिब को बनाया गया है। भक्तों की बाणी केवल भक्ति भाव को मुख रख कर दर्ज की गई है। इस बात को नहीं देखा गया कि किसी का क्या मत (सिद्धान्त) है इस बात की परवाह नहीं की गई कि धन्ना मूर्ति पूजा करता है कबीर वैष्णव है, कोई भक्त अवतार पूजा करता है या आवागमन को मानता है यह नहीं देखा कि बाबा फ़रीद पांच नमाज़ों, पुल सरात या क्यामत को मानता है। केवल इस बात को सामने रखा है कि प्रेम भक्ति में कोई भक्त किस मन्ज़िल (पड़ाव) पर पहुंचा है।

ज्ञानी जी के उपरोक्त कथन से सिद्ध है कि-

(१) गुरू ग्रन्थ में निश्चित सिद्धान्त नहीं, यह भिन्न भिन्न धार्मिक सिद्धान्तों का संग्रह है जो उस समय भारत में प्रचलित थे।

(२) इस में केवल पंजाब या पंजाबी भाषा का ही भाग नहीं, अतः यह सारे भारत वर्ष की संयुक्त विचार धारा और भाषा का संगम है, जिस को आज कल की भाषा में भारतीय संस्कृति और हिन्दी भाषा कहा जा सकता है।

(३) इस को ईश्वरी ज्ञान या इलहामी पुस्तक मान कर इस दस्तूर को पूरा किया गया है। जो इस से पहले के मानुषी मतों, मूसाईयों, ईसाईयों और मुसलमानों आदि में चला आ रहा है, कि वह अपने अपने सम्प्रदाय की पुस्तक को इलहामी (ईश्वरी-बाणी) मानते और अपने मत के चलाने वाले को भगवान का विशेष प्रतिनिधि मानते थे। हालांकि किसी गुरू ने अपने और अपनी बाणी के सम्बन्ध में ऐसा दावा नहीं किया। महर्षि स्वामी

दयानन्द जी महाराज ने सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में ठीक ही लिखा है कि :-

(१) जिस समय नानक जी पंजाब में हुए थे उस समय पंजाब संस्कृत विद्या से सर्वथा रहित और मुसलमानों से पीड़ित था।

(२) अशिक्षित लोगों की यह प्रथा है कि वह मरने के पीछे अपने मत के संस्थापक को सिद्ध बना लेते हैं, फिर बहुत सा महात्म्य करके ईश्वर के बराबर मान लेते हैं।

(३) भला यह गपौड़े नहीं तो क्या हैं इस में नानक जी का दोष नहीं बलकि उन के चेलों का है

(४) जितने छोटे छोटे पुस्तक थे, उन सब को इकट्ठा करके जिल्द बन्धवा दो, इन लोगों ने भी नानक जी के पीछे बहुत सी भाषा बनाई, कितनों ही ने नाना प्रकार की पुराणों की मिथिया कथा के तुल्य कहानियां बना दीं।

(५) इस ने बहुत बिगाड़ कर दिया, यदि यह लोग नानक जी ने जो ईश्वर भक्ति लिखी थी उस को करते आते तो अच्छा था।

(६) सिख लोग मूर्ति पूजा तो नहीं करते परन्तु इस से बढ़ कर ग्रन्थ की पूजा करते हैं, क्या यह मूर्ति पूजा नहीं? किसी जड़ पदार्थ के आगे सर झुकाना और उस की पूजा करना सब मूर्ति पूजा है। जैसे मूर्ति वालों ने अपनी दुकान जमा रखी है वैसे इन लोगों ने भी कर ली है, जैसे पुजारी लोग मूर्ति का दर्शन कराते, भेंट भी चढ़ाते हैं वैसे नानक पन्थी लोग ग्रन्थ की पूजा करते कराते भेंट भी चढ़वाते हैं।।

(सत्यार्थ प्रकाश समुलास ११)

प्यारे पाठक ! आज सिख पन्थ देश के लिये समस्या बन गया है, वास्तव में इन को अपने घर का पता ही नहीं और न ही साधारण जनता को इस पन्थ की कुछ जानकारी ही है, इस कारण इस अज्ञान अन्धकार को दूर करने और देश और जाति में एकता लाने के लिये जरूरी हो गया कि गुरू ग्रन्थ साहिब की आत्म कथा देश के विद्वानों और साधारण जनता के सन्मुख रखें ताकि वह वास्तविकता को समझ कर मार्ग से भूले भाईयों को सन्मार्ग और सच्चाई पर लाने में समर्थ हो सकें। आशा है जिस भाव को ले कर हम इस ट्रेक्ट को लिख रहे हैं, सच्चाई देखने वाले तथा सच्चाई पसन्द भाई इस दृष्टि से इस को देखेंगे।

देश तथा जाति का सेवक
अमृतानन्द सरस्वती (स्वामी)

विचार आरम्भ

सिख पन्थ का जन्म स्थान पंजाब माना जाता है इस पन्थ के बानी और पहले गुरू, गुरू नानक देव जी का जन्म १५२६ बिक्रमी में राये भोये की तलवण्डी (जिस को अब ननकाना साहिब कहा जाता है) में हुआ था। आप के पिता कालू बेदी (खत्री) इस नगर के जमींदार राय बलार की जमीदारी की देख भाल करने वाले कारदार और पटवारी थे, इस लिये आप को मैहता भी कहा जाता था।

नानक देव जी के बचपन की सिख इतिहास और जन्म साखियों में आश्चर्य जनक (अजीबो गरीब) कहानियां लिखी हैं। मानुषी मत (मजहब) की यह प्रथा है कि वह अपने मत के बानी (संस्थापक) को इतना ऊंचा उठाने का यत्न करते हैं कि संसार में उस के बराबर दूसरा कोई भी नजर न आवे, इस दौड़ धूप में वह इतना बढ़ जाते हैं कि सर्वथा असम्भव तथा सृष्टि नियम के विरुद्ध कल्पत (फ़र्जी घटनाऐं घड़ कर उन के नाम के साथ लगा देते हैं। नानक जी के सम्बन्ध में भी यही कुछ हुआ, कई करामातें और चमत्कार उन के जीवन के साथ जोड़े गए, हालांकि वह स्वयं इन बातों के विरोधी थे और आयु भर इन त्वाहमात (भ्रम जाल) के विरुद्ध आवाज उठाते रहे, उन्हों ने जपजी साहिब में लिखा कि--

आप नाथ नाथी सब जाकी--रिद्धि सिद्धि और असाद

अर्थात परमात्मा ही सब जगत का नाथ अथवा वास्तवक

स्वामी है. इसी एक ने इस सारी सृष्टि को अपनी (नाथी) मर्यादा में जकड़ रखा है, रिद्धि सिद्धि, करामात या चमत्कार जो अज्ञानी मानते या दिखाते हैं; यह तो दूसरी ओर का स्वाद या सृष्टि नियम के सर्वथा प्रतिकूल है।

सिद्धों ने या जब जब किसी और ने आप को करामात (चमत्कार) दिखाने को कहा तो आप ने आदेश किया कि-

बाझों सच्चे नाम दे होर करामात असां ते नाहीं।

अर्थात-हम तो ईश्वर भक्ति को ही ठीक मानते है इस के अतिरिक्त और कोई करामात (चमत्कार) हमारे पास नहीं।

आप का समर्थन करते हुए गुरू अर्जुन देव जी ने इतने भारी कष्ट के समय में कहा था, कि शक्ति दिखलाने की बजाए ईश्वर का भाना (इच्छा) मानना अधिक अच्छा है।

बाबा अटल और बाबा गुरदित्ता के करामात दिखलाने पर गुरू हर गोविन्द जी नाराज़ हो गए थे।

गुरू तेग बहादर ने सीस की बली देदी, परन्तु करामात से इन्कार किया।

गुरू अमर दास जी ने "धृगसिद्धि धृग करामात" कह कर इस को लाअनत (फटकार) करार दिया है अथवा कहा है।

सब से पहिली बात जो गुरू नानक देव जी के सम्बन्ध में कही जाती है वह यह कि आप का कोई देहधारी गुरू न था, उन का गुरू परमात्मा था, और उन्हों ने सीधा अकाल पुरुष से ज्ञान प्राप्त किया था। पिता कालू जी ने जिस के पास भी नानक

जी को पढ़ने भेजा यह उल्टा उस को पढ़ा कर आए इस में ऐसा लिखने वालों का भाव यह है कि यदि वह किसी देहधारी गुरू से ज्ञान प्राप्त कर लेते तो उन को कोई विशेषता न रह जाती, और नानक जी का पद इतना ऊंचा न होता।

तारीख गुरू खालसा प्रथम भाग के पन्ना ६६ पर लिखा है कि जब गुरू नानक वीन नदी पर सदा की भांति स्नान करने गए और डुबकी लगाई, तो वर्ण देवता परमेश्वर की आज्ञानुसार आप को दरबार (राज्य सभा) में ले गया वहां इच्छाधारी पुरुख, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, कुबेर, व्यास नारद, सन्कादक, राम, कृष्ण, जरतुष्त, मूसा, ईसा, महम्मद आदिक अनन्त लोग खड़े थे। उस समय एक दिव्य पुरुख अन्दर से आया, और नानक जी को ईश्वर के हजूर (सामने) ले गया, वहां नूर ही नूर (प्रकाश ही प्रकाश) बिजली से अधिक नज़र आया वहां से आवाज़ आई, कि नानक निरंकारी। तुम को कलजुगी पुरुषों के उद्धार के लिये भेजा है, तू उन को सत्य ज्ञान वाहिगुरू जपा के भक्ति ज्ञान बढ़ा, जिस से सहजे ही वहां सब पापी भी पवित्र हो कर मुक्ति के अधिकारी हों। पहले अनेक पुरुष जो तू ने दरवाजे पर खड़े देखे हैं (ब्रह्मा से मुहम्मद तक) मैंने संसार में भेजे थे मगर इन सभों ने जा कर अपने अपने नाम जपवाए, सच्चे रस्ते जीवों को न चलाया, इस लिये इन को यह सज़ा (दण्ड) दी है कि कल्प तक इस जगह ही खड़े रहें। इन के दिखलाने के लिये तुझ को यहां बुलाया गया है, अगर तू भी अपनी पूजा करायेगा, तो इन का साथी होगा, अगर जीवों को सच्चे राह चला देगा, तो मेरे रूप में समा जाएगा।

तब इस जगह सोदर शब्द उच्चारण किया--

जित दर लख मुहमदा, लख ब्रह्मे विष्ण महेश।
लख लख राम वडेरिये, लख राही लख देस।

लख लख ओथे गोरखां, लख लख नाथां नाथ।
लख लख ओथे आसनां गुरू चेले रह राम।

लख लख देवी देवते, दानव लख निवास।

लख पीर पैगम्बर ओलिये, लख काज़ी मुल्लां शेख।
किसे शान्त न आवई बिन सत्गुर के उपदेश।

साधक सिद्ध अनगिन्त नहीं कीते लख अपार।
एतड़ियां अपवित्र है, बिन सत्गुर के शब्द विचार।

सरनाथां के एक नाथ सत् नाम कर्तार।
नानक ता की कीमत न पवे बेअन्त बे शुमार॥

(यह शब्द गुरू ग्रन्थ साहिब के आखीर के सफहों में दर्ज हैं)

ज्ञानी प्रताप सिंह जी गुरू मत फिलासफी पुस्तक में लिखते हैं कि उस वक्त गुरू जी की आयु २८, २९ वर्ष की हो चुकी थी। सुलतान पुर में एक दिन अमृत समय जाग कर सेवक को साथ ले कर गुरू जी वीन नदी पर स्नान करने गए। इतिहास बतलाता है कि आप तीन दिन लोप रहे। कई प्रकार की चर्चा हो रही थी जब लोग बेबे नानकी को कहते कि तेरा वीर डूब गया है तो बेबे जी उत्तर देते कि मेरा वीर डूबने वाला नहीं, यदि वह डूबा है तो जगत को तारने के लिये। जाल डलवाये गए डुबकी लगाने वाले उतारे गए परन्तु कोई पता न लगा।

महापुरुषों के जीवन में एक विशेष ऐसा समय आता है जब उनकी सब से ऊंची सूरत जागती है। वह अपने अन्दर प्रकाश

अनुभव करते हैं, इसी प्रकाश में वह अपना आदर्श प्रत्यक्ष करते हैं। गया में महात्मा बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ, मूसा का कोह तूर पर जाना, हज़रत ईसा का जार्डन दरया पर जा कर यूहन्ना से बपतस्मा लेना और रूहुलकुद्दस का उतरना और हज़रत मुहम्मद का मेराज, यह सब मिलती जुलती बातें हैं।

कहने को तो गुरू जी ने 'वीन' नदी में डुबकी लगाई थी परन्तु वास्तव में वह अन्तरात्मा में लीन हो कर सचखंड में पहुंच गए थे आप की आत्मा रब (परमात्मा)की हजूरी में जा कर खड़ी हुई थी। सचखंड में गुरू जी ने दो चीजें प्राप्त कीं। नाम और ग़रीबी यह हजूर के जीवन का तत्व हैं।

प्रिन्सीपल जोध सिंह जी एम० ए० ने भी उपरोक्त घटना का समर्थन किया है और गुरू मत निर्णय के सफा १०७ पर लिखा, कि परमात्मा ने गुरू नानक देव जी को भेजा, जिन्हों ने आ कर धर्म को फिर प्रकट किया। गुरू नानक देव जी का कोई मनुष्य गुरू न था। 'वीन' नदी वाली साखी में साफ लिखा है कि नाम का प्याला गुरू नानक देव जी को सच्ची दर्गाह (दरबार) में मिला था। तात्पर्य यह कि सब सिख विद्वानों ने दूसरे ग्रन्थों की पैरवी में गुरू नानक जी का मेराज माना है जो ग्रन्थ साहिब के इलहामी (ईश्वरी ज्ञान) होने की बुन्याद (नींव) है।

इस पर विचार यह पैदा होता है कि जब गुरू नानक देव जी स्वयं परमात्मा को निराकार और सर्वव्यापक मानते हैं और अपनी बाणी में स्थान स्थान पर यह मानते हैं कि परमात्मा के रहने का कोई विशेष स्थान नहीं, तो सचखण्ड जहां गुरू जी वाहिगुरू को मिले वह कौनसी जगह है और उस का चित्र क्या

है जिस के द्वार पर बेअन्त देवता, अवतार और पीर पैगम्बर खड़े थे परन्तु उन को अन्दर जाने की आज्ञा न थी। दूसरा गुरू नानक देव जी ने अपनीं बाणी में कहीं भी इस घटना का वर्णन नहीं किया। केवल सिख इतिहासकारों ने ही इस कहानी को लिखा है। तो प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस घटना का दृष्टि साक्षी और बतलाने वाला कौन है जबकि सिवाए वाहिगुरु के वहां किसी को जाने और खड़ा होने की आज्ञा ही न थी।

तीसरा जब वाहिगुरू ने स्पष्ट कहा था कि जिन्हों ने संसार में अपना नाम जपवाया था उन सब को दण्ड दिया गया है, तो आज गुरु नानक देव जी केसाथ नौ गुरूओं और दसवें गुरु ग्रन्थ साहिब का हर रोज अरदास में क्यों जाप किया जाता है? जबकि परमात्मा ने यह भी कह दिया था कि अगर तू भी ऐसा करेगा तो तुम को भी यही दण्ड भुक्तना पड़ेगा।

इस से तो सिद्ध होता है कि गुरु सिख गुरुओं के नाम का जाप करके गुरूओं को ही कष्ट में डालने का कारण बन रहे हैं। यह तो सिखों की अपने गुरूओं और वाहिगुरू दोनों की हुकम अदूली (आज्ञा भंग) और आज्ञा उलंघन के बराबर है।

गुरबाणी का जन्म और अधिकार

सिख विद्वानों के निश्चयानुसार गुरू नानक देव जी से ले कर गुरू गोविन्द सिंह जी तक दसों गुरू और ग्यारहवां गुरू ग्रन्थ साहिब ही गुरू पदवी के अधिकारी हैं और उन्हीं का उच्चारण किया हुआ या ग्रन्थ साहिब में लिखा ज्ञान ही गुरू ज्ञान है और इसी को गुरबाणी का दर्जा प्राप्त है किसी दूसरी बाणी को नहीं।

प्रिन्सीपल जोध सिंह जी एम० ए० लिखते हैं कि सिख अपने गुरूओं को नरंकार का रूप जानें, गुरु बाणी ही रब्बी कलाम (ईश्वरी वाणी) है। गुरु अन्तरात्मे नरंकार के साथ अभेद है इस लिये जो गुरू का उपदेश है वह नरंकारी ज्ञान है

इस से आगे चल कर वह शंका उठाते हैं कि दसम गुरू का आदेश है कि :-

"जो हम को परमेश्वर उचरें-सो सब नरक कुण्ड में पड़ें।"

जब वह ईश्वर होने से इन्कार करते हैं तो फिर सत्गुरु और पारब्रह्म एक कैसे हुए? तो इस का स्वयं ही उत्तर दिया। परन्तु उन्हीं की यह आज्ञा है कि :-

हरि हरि जन दोउ एक है-बिन विचार कछु नाहीं।
जल ते उपजे तरंग ज्यूं-जल ही विखे समाहीं॥

साथ ही वह (दसम गुरु) अपने पहले जन्म का कथन करते हुए कहते हैं कि हम ने नरंकार की ऐसी भक्ति की कि 'दो ते एक रूप हो गए" इन वाक्यों को इकट्ठा विचारने पर भाव निकलता है कि जिस प्रकार लोग कई महापुरुषों को परमात्मा का अवतार मानते थे और उन के शरीर को साक्षात नरंकार का रूप समझ कर उन की मूर्तियां पूजते थे यह बात सत्गुरु ने मना की या रोकी है। नरंकार की कोई देह या शरीर नहीं, न ही उस की मूर्ति है। परन्तु यह सिखी का नियम है कि सत्गुरु अन्तरात्मे नरंकार से अभेद है, और सत्गुरु का उपदेश नरंकारी उपदेश है, सत्गुरु की देह या शरीर नरंकार की मूर्ति नहीं, उन का आत्मा नरंकार का रूप है।

प्यारे पाठक ! प्रिन्सीपल जोध सिंह जी का उपरोक्त विचार बिलकुल भ्रम मूलक और भूलों (गलतियों) से भरपूर है। हां ! सिखों के इसी विचार ने ही गुरु वाणी को गुरु और ग्रन्थ साहिब को इलहामी और ईश्वरी ज्ञान होने का अधिकारी बनाया है। नहीं तो दसम गुरु ने तो वास्तव रूप में अपने आप को जीव आत्मा मान कर परमेश्वर होने से इन्कार किया था, और अपने आप को परमेश्वर का दास माना था। परन्तु उन के नाम लेवा सिख खामखाह उन को परमात्मा का रूप सिद्ध करने का व्यर्थ यत्न करने लग गए। और उन में एक असत्य सिद्धान्त फैल गया। देखिये :-

(१) जल एक देशी और सीमित वस्तु है इस लिये इस में से तरंग उठ सकते हैं और फिर इस में समा भी जाते हैं। परन्तु परमात्मा अखण्ड और परिपूर्ण है, कोई ऐसी जगह नहीं जहां वह पूर्ण न हो वह सर्वव्यापक और एक रस है, ऐसी कोइ जगह नहीं जहां से तरंग रूप उस का टुकड़ा उठे और फिर उस में समा जाए।

हरि हरि जन दोऊ एक हैं।

इस शब्द का अर्थ भी यह लोग असत्य समझते और करते हैं, इस का सत्य अर्थ तो यह है कि परमात्मा का वेद ज्ञान और हरि जन का वेदानुकूल ज्ञान दोनों एक ही होते हैं, उन में कोई भेद नहीं होता, क्योंकि उन का सत्य ज्ञान वेद रूपी सागर से पैदा होता और उसीमें लीन होता या समाया रहता है। परमात्मा का वेद ज्ञान और हरिजनों या महापुरुषों के विचार भिन्न भिन्न नहीं होते। इसी प्रकार पहले जन्म की कथा में दो

से एक रूप का भाव भी दसम गुरु जी का पद है कि जिस प्रकार लोहा अग्नि में तप कर अग्नि रूप हो जाता है, इसी प्रकार मैं तप करते हुए परमात्मा में आनन्दित हो गया। क्योंकि जिस प्रकार लोहा अलग और अग्नि अलग पदार्थ हैं। इसी प्रकार जीवात्मा और परमात्मा अलग अलग पदार्थ हैं।

(२) सिख लोग भी दसों गुरुओं को परमात्मा और परमात्मा का अवतार मानते हैं। जब वह दसम गुरु को कलगीधर, बाजां वाला नीले घोड़े का स्वार कहते हैं तो यह उन की मूर्ति का ही वर्णन करते हैं, आत्मा का नहीं। यह भी दसों गुरुओं के रूप को परमात्मा का रूप कहते हैं। फिर ग्रन्थ साहिब को प्रकट गुरुओं का शरीर और ईश्वरीय ज्ञान की मूर्ति मान कर उस के आगे सिर झुकाते हैं। क्योंकि ग्रन्थ साहिब में चेतन आत्मा तो है ही नहीं, जैसा कि नीचे लिखे परमाण, हमारा समर्थन और उन लोगों का खण्डन करते हैं :-

सिखों का गुरूओं और ग्रन्थ साहिब के सम्बन्ध में (अकीदा) विश्वास

(१) ज्ञानी बिशन सिंह जी खालसा कालेज अमृतसर जो गुरु ग्रन्थ साहिब के प्रसिद्ध टीकाकार हैं, अपनी एक कविता में लिखते हैं :-

दस गुरु की आत्मा सिरी गुरु ग्रन्थ स्वरूप।
पहले इस को बन्दना, मेरी परम अनूप।

परमेश्वर का रूप है सिरी गुरु नानक देव ।
एह रचना सत्गुरु रची श्री गुरु शब्द अभेव ।
श्री गुरु अर्जुन देव जी, बीड़ इकत्तर कीन ।
श्री गुरु गोविन्द सिंह जी गुर्याई इसको दीन ।
इस लिये इस नूं बन्दना, मेरी बारम्बार ।
भवसागर का बो हथा(जहाज़)कलयुग का अवतार ।

(२) गुरु मत दर्शन नामी पुस्तक में लिखा है कि :-

(क) गुरु ग्रन्थ साहिब किसी व्यक्ति की बनावट नहीं, बल्कि उन का स्वयं निज (गुरुओं या वाहिगुरु का) अर्थात अपना स्वरूप ही गुरु ग्रन्थ है ।

(ख) दसों पादशाहियों (जो एक नरंकारी जोत हैं) का आत्मक ज्ञान, परम पिता अकाल पुरुख का फरमान,(आदेश), भाव वाणी रूप गुरु मान कर अत्यन्त श्रद्धा से श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी को माथा टेकना यह सत्कार किया जाता है ।

(३) गुरु मत प्रकाश संस्कार विभाग (चीफ खालसा दीवान) की पुस्तक में लिखा है कि धर्म के सब संस्कारों में सत्गुरु को साक्षी करें, सच्चे सत्गुरु को जो अमुल पद में हैं, सच्चा सत्गुरु अपने अरूप रूप में खेलता है लेकिन प्रत्यक्ष दर्शनों के लिये श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में व्यापक है, इस लिये गुरु साहिब जी के प्रगट स्वरूप श्री गुरु ग्रन्थ साहिब को साक्षी बनाओ ।

(४) खालसा ट्रैक्ट सोसाईटी के ट्रैक्ट ११३ में दर्ज है कि:-

कलयुग तारनहारा बाबा— बाणी द्वारा मिले शताबा ॥
बाणी बाबा बाणी बाबा—विच बाणी दे अभ्यो[1] अजाबा ॥

1 - अमृत

जो सिख गुरबाणी नूं मन्ने—रता ना ओहला लग जाऊ बन्ने ॥
जिन बाणी नूं गुरु कर जाता—बाणी विचों गुरु सञ्जाता ॥
गुर बाणी गुरु रूप पछाता—गुरु परमेश्वर उसने जाता ॥

(५) अखबार शेर पंजाब के शहीद अडीशन १९५३ में सरदार अमर सिंह जी की एक नज़्म(कविता) छपी थी :-

मीठी अमृत से भी बाणी गुरु अर्जुन की।
हक का पैग़ाम जबानी है गुरु अर्जुन की।
बाणी वेदों से पुरानी है गुरु अर्जुन की।
जिन्दगी बख्श कहानी है गुरु अर्जुन की ॥

हे निराकार नरंकार तू साकार गुरु,
प्रेम भक्ति का संसार में अवतार गुरु।

प्यारे पाठक ! जड़ और चेतन के लक्षण अलग अलग हैं। मूर्ति, मन्दिर, पुस्तक, नदियां और तालाब जड़ पदार्थ हैं, यह कभी चेतन नहीं हो सकते। जितने भी जड़ पदार्थ हैं यह सब पाप पुण्य से रहित हैं यह न किसी को फल दे सकते और न किसी का भला बुरा ही कर सकते हैं।

जीव अल्प और अल्पज्ञ हैं इन को सर्वज्ञ मानना भूल है। जो अल्पज्ञ है उस की सामर्थ या शक्ति अल्पज्ञ है, चाहे कितना ही कोई सिद्ध हो तो भी वह शरीर आदि की रचना को पूर्ण रूप से नहीं जान सकता; इस लिये ऐसे सीमित शक्ति वाले जीवात्मा को वह चाहे कितना ही महापुरुष क्यों न हो, ईश्वर या ईश्वर का स्वरूप मानना भूल है।

परमात्मा सर्वज्ञ है और वह एक है, जिस के सम्बन्ध में

गुरु अर्जुन देव जी ने मान लिया कि :-

जम्मे न मरे आवे न जाये ॥
नानक का प्रभु रहिया समाये ॥

फिर कहा :-

करन कारण प्रभु एक है, दूसर नाहीं कोये ।
नानक तिस बलिहारने जल थलमहयल सोये ॥ (सुखमनी)

इस कारण नवीन सिखों का गुरुओं और गुरु ग्रन्थ साहिब के सम्बन्ध में ऊपर लिखित विश्वास गुरु अर्जुन देव जी की बाणी के अनुकूल नहीं ।

गुरू बाणी क्यों लिखी गई ?

कहते हैं कि गुरु नानक जी के नाम पर साधू और फकीरों ने नकली बाणी का प्रचार आरम्भ कर दिया था और वह इतनी बढ़ गई थी कि वर्तमान ग्रन्थ साहिब से कई गुणा ज्यादा हो गई थी । मैकालिफ साहिब के सिख इतिहास में लिखा है कि गुरु अर्जुन देव जी ने जब सुना उन का बड़ा भाई पृथ्वी अपनी बाणी रच कर गुरु नानक देव जी और दूसरे गुरुओं के नाम से मशहूर कर रहा है। अन्जान और श्रद्धालू लोग असली और नकली में पहिचान नहीं कर सकते, इस लिये उन्हों ने मुनासिब (उचित) समझा, कि असली बाणी इकत्र करके ग्रन्थ साहिब के रूप में प्रगट की जाये ।

पहले गुरु नानक देव जी की वाणी भाई मन सुख जी ने लिखी थी, कुछ बाणी गुरु अङ्गद देव जी ने पेड़े मोरवे से लिख-

वाई थी। गुरु अमरदास जी के समय कुछ वाणी बाबा मोहन जी के पुत्र सहंस राम जी ने लिखी थी। यह सारी वाणी हिन्दी भाषा या देव नागरी अक्षरों में लिखी गई थी; कुछ वाणी सैंचियों के रूप में तीसरे गुरु के पुत्र बाबा मोहनजी के पास गोएंदवाल थी। उन के पास पहले भाई गुरदास जी को और फिर भाई बुढा जी को भेजा गया, परन्तु बाबा जी ने वाणी देने से इन्कार कर दिया। तब गुरु अर्जुन देव जी स्वयं कुछ संगत को साथ लेकर नंगे पाओं चल कर बाबा जी के चौबारे के नीचे गए और उनकी प्रशंसा में कविता गान करने लगे गुरु अर्जुन देव जी की नम्रता और अपनी बड़ाई सुनकर बाबा जी का मन नरम हो गया, फिर कहने लगे कि पहले तो गुर्याई का हमारा अधिकार था जो आप के पिता गुरु राम दास जी ने ले लिया, यदि गुर्याई हमें मिलती तो भल्ले साहिबजादों की मान प्रतिष्ठा होती, जो अब सोढ़ियों की हो रही है आज फिर तुम्हें लाज न आई कि गुरु वाणी भी हत्याने के लिये आ गए हो।

इस प्रकार जब बाबा मोहन जी ने बहुत सख्त सुस्त कहा तो गुरु अर्जुन देव जी ने कहा "ऐ मामू जी आप ! मेरे बुजुर्ग (पूर्वज) हैं इस लिये आप ने जो कुछ कहा वह सब मेरे लिये अमृत है; आप के वचन तो अनमोल हैं मेरे लिये तो मेरे पिता गुरु राम दास जी और आप बराबर हैं" इस नम्रता पूर्वक वाणी ने बाबा मोहन जी का दिल और भी मोम कर दिया और आप ने सारा मसौदा (आलेख) अपने भानजे के अर्पण कर दिया जिस को बड़े सत्कार से वह अमृतसर ले गए।

कहते हैं यह मसौदा (आलेख) नकल कर लेने के बाद गोएंदवाल में बाबा मोहन जी के चौबारा में रखा गया था, परन्तु

वहां से भक्त सिंह नामी कोई सिख सरहद की ओर ले गया जिस से अब वह नायाब है अथवा मिलता नहीं।

गुरु अर्जुन देव जी ने इस मसौदे के आधार पर और जो वाणी सिखों को याद थी उस को नोट करके और कुछ भाई पेडे मोखे के द्वारा इकत्र करके एक जगह बैठ कर लिखवाने का निश्चय किया। अतः रामसर के सुहावने स्थान पर तम्बू और छोलदारियां लगा दी गई। भाई गुरुदास जी को लिखारी नियत किया गया। सारी वाणी को इकतीस (३१) रागों में बांटा गया। सरदार जी० बी० सिंह "प्राचीन बीड़ां" नामी पुस्तक में लिखते हैं कि ग्रन्थ साहिब की तैय्यारी में गुरु अर्जुन देव जी ने केवल अडीटर या सम्पादक का काम किया है।

ज्ञानी प्रताप सिंह जी लिखते है कि मज़ाहब (पन्थों) की दुनिया में इक पुराना ख्याल यह था, कि ईश्वर का ज्ञान आकाश वाणी के रूप में प्रकट होता है या इलहाम फरिश्तों द्वारा वही' की शकल में पगम्बरों पर नाज़िल होता है (आता है)। परन्तु श्री गुरु ग्रन्थ साहिब आकाश से आई आवाज या फ़रिश्तों द्वारा नाजल हुई कलाम (वाणी) नहीं बलकि यह सतगुरुओं और भक्तों की पवित्रात्मा का वाहिगुरु में लीन हो कर प्राप्त किया हुआ ज्ञान और अनुभव है। गुरुवाणी, वेद और सब इलहामी किताबों के बाद लिखी गई परन्तु यह सबसे बढ़ कर साईंटीफिक है।

ज्ञानी प्रताप सिंह जी और उनके हमख्याल (विचारों) के अनुकूल) और समय समय पर इल्हाम के नाज़िल होने या ईश्वरी ज्ञान के प्रगट होने को मानने वाले भाईयों को पता होना चाहिये कि जपजी साहिब में गुरु नानक जी ने लिखा है:-

जो कुछ पाया सो एका बार

अर्थात -परमात्मा ने सृष्टि बनाकर जीवों की जरुरत के लिये हर पदार्थ को एक बार दे कर ही पूर्ण कर दिया है। इस के भण्डार में कभी कमी नहीं आती, पूर्ण के काम भी पूर्ण होते है सूर्ज , चन्द हवा पृथिवी अग्नि आदि पदार्थ उस को नये सूरज नहीं बनाने पड़ते। इस प्रकार इसका ज्ञानरूपी सूरज भी बदलने वाला नहीं है। परमात्मा सत्नाम है इस लिए उस का वेद, ज्ञान भी अनादि पूर्ण तथा परिवर्तन से रहित है।

(१) यदि आपके कथन अनुसार गुरुओं को और भक्तों को ऐसा मुकम्मल और साई टीफिक (Scientific) ज्ञान मिला, तो परमात्मा में पक्षपात और निर्बलता आ जाएगी कि इससे पहले की दुनिया को इस ज्ञान से क्यों वञ्चित रखा। अपनी निर्बलता के कारण अथवा पक्षपात के कारण और फिर ग्रन्थ साहिब के मुकम्मल होने के बाद अब उसने अच्छे ज्ञान को क्यों सदा के लिए बन्द कर दिया कि इसके बाद न कोई गुरु आएगा और न ही किसी को ज्ञान ही मिलेगा।

(२) मुसाई ईसाइ और मुसलमान भी तो यही दावा करते हैं अथवा विश्वास पूर्वक कहते हैं कि उनकी इलहामी किताब मुकम्मल है। इसके बाद न कोई पैगम्बर होगा और न किसी को ज्ञान मिलेगा। फिर ज्ञानी जी के दावे को कैसे मान लिया जावे जबकि दावा ही बेदलील है।

(३) इससे आगे ज्ञानी जी ने यह मान लिया है कि ग्रन्थ साहिब में गुरु अर्जुन देव जी ने बाणी को दर्ज (अंकित) करते हुए यह ख्याल नहीं किया कि किसी भक्त का क्या मत है।

मूर्ति पूजा, अवतारवाद आवागमन; क्यामत (परलै), पुलसरात और पांच समाज इन सब विपरीत सिद्धान्तों के मानने वाले भक्तों की बाणी को दर्ज कर लिया है, और देखने में भी यही कुछ आता है कि इसमें विपरीत विचार धाराएं दर्ज हैं । तो फिर यह सबसे बढ़ कर साईंटिफिक कैसे ?

(४) गुरु ग्रन्थ साहिब सब विद्याओं की पुस्तक नहीं क्योंकि इस में पदार्थ विद्या (साएंस) आयुर्वेद, ज्योतिष, गणित आदि विद्याओं के सम्बंध में एक शब्द भी नही अथवा शिक्षा दीक्षा और गृहस्थ धर्म पर कोई प्रकाश नहीं डाला गया कि विद्या कैसे और किस आयु तक हो, विवाह किस आयु में कहां और कैसे हो तो यह फिर मनुष्य जीवन की आवश्कताओं को पूरा करने वाला और साइंटिफिक ज्ञान कैसे ?

(५) गुरु अमर दास जी का आदेश है कि-

तन करते इक चलत उपाया ।
अनहद बाणी शब्द सुनाया ।

अर्थात जगत करता परमात्मा ने सृष्टि को पैदा करके नाश रहित बाणी या ज्ञान को प्रगट किया ।

चार वेद होये सचियार ।
पढ़े गने तिन चार विचार (आसा दी वार)

अर्थात चारों वेद सत्य ज्ञान का भण्डार हैं, ऐ मनुष्य ! तू इन को विचार पूर्वक पढ़ मनन कर और आचरण कर ।

गुरु अर्जन देव जी का आदेश है--

वेद वख्यान करत साधू जन।
भागहीन समझत नहीं खल। (राग गौड़ी)

अर्थात महांपुरुष साधु या ऋषि मुनि वेदों का व्याखयान करते हैं परन्तु अभागे मूर्ख लोग समझते ही नहीं।

शब्द सूर जग चारे ऊधो, वाणी ब्रह्म विचार।

अर्थात–इश्वरी ज्ञान चारों युगों के लिए सूर्य है वेद वाणी परमात्मा का पूर्ण ज्ञान है।

जब गुरु साहिबान स्वयं ईश्वरी ज्ञान वेद को अनादि और पूर्ण मानते हैं तो इसके बाद की किसी बाणी को ईश्वरी ज्ञान मानना ठीक नहीं रहता। इस से सिद्ध है कि गुरबाणी केवल इस लिये लिखी गई थी कि गुरु नानक देव जी के नाम पर फ़रज़ी और बाद में रची जाने वाली वाणी को रोका जाये न कि उस की पूजा करने कराने के लिये।

ग्रन्थ साहिब का निर्माण

सिख विद्वानों और इतिहासकारों का यह कथन है कि गुरु अर्जुन देव जी ने बड़ी खोज पड़ताल और छान बीन से गुरुओं और भक्तों की बाणी को दर्ज किया। जिन की बाणी दर्ज होने योग्य नहीं समझी, वह नहीं की। अतः छज्जू; पीलू काहना और शाह हुसैन की बाणी दर्ज करने से इन्कार कर दिया। भाई गुरदास जी की बाणी ग्रन्थ साहिब में दर्ज नहीं हुई, इस को अलग (पृथक) ग्रन्थ साहिब की कुंजी का दर्जा दिया गया। भक्तों के अतिरिक्त सोलह, सत्रह भाटों की बाणी को भी दर्ज किया गया।

इस समय के ग्रन्थ साहिब में ५८६४ शब्द हैं, जिन में से ६३७ शब्द भक्तों के और २३०० के लग भग स्वयं गुरु अर्जुन देव जी के हैं। गुरु तेग बहादुर जी की बाणी बाद में दर्ज की गई है। ढाडियों की कुछ वारें गुरु हर गोविन्द जी ने चढ़ाई हैं। कहा जाता है कि गुरु अर्जुन देव जी ने (गुरु) हर गोविन्द जी को आज्ञा दी थी कि ढाडी आप को वारें सुनावेंगे, उन में से जो पसन्द आए ग्रन्थ साहिब में दर्ज कर देना। इस प्रकार पहला ग्रन्थ साहिब भादों सुदि एकम सं० १६६१ विक्रमी को पूर्ण होकर हर मन्दिर साहिब में रखा गया।

कहते हैं इसमें कुछ वर्क (पन्ने) खाली रख दिए गए थे, जिन पर ढाडियों की वारें और गुरू तेग बहादुरजी की बाणी बाद में दर्ज की गई। अतः जो बाणी पांचवें गुरु के समय दर्ज हुई उसके जिम्मेवार (उत्तराधिकारी) गुरू अर्जुन देव जी और बाद की बाणी के जिम्मेवार गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज हैं।

गुरु ग्रन्थ साहिब की तय्यारी के सम्बन्ध में इतिहासकारों के निम्न विचार हैं :—

जिन भगतों की बाणी गुरू ग्रन्थ साहिब में दर्ज है उनमें से कई एक का जन्म गुरू नानक देव जी से दो तीन सौ साल पहले हुआ था और कई इनके समकालीन थे। उनकी बाणी गुरू अर्जुन देव जी के समय कैसे दर्ज हुई। इसके सम्बन्ध में सिक्ख इतिहासकारों के भिन्न भिन्न विचार हैं।

१ भगत स्वयं शरीर धारण करके आए और अपनी अपनी बाणी गुरु अर्जुन देव जी को पेश की, उनमें से जो उनको

पसन्द आई उसको दर्ज कर लिया गया।

२--भक्तों के चेलों ने उपस्थित हो कर अपने अपने गुरूओं की बाणी चढ़वाई।

३--गुरू अर्जुन देव जी की आज्ञा से उनके सिक्ख बाणी इकत्र करके ले आए, उनमें से छांट कर ग्रन्थ साहिब में दर्ज हुई।

४--भगत और राग रागनियां शरीर धारी हो कर आए, जिन के निर्णय पर रागवार बाणी दर्ज हुई।

५-भाईयों और रागियों के लिये रामसर पर तम्बू लगवाए गए, उन की सम्मति ले कर बाणी दर्ज हुई।

गुरू बलास पातशाही ६ में दर्ज है कि :-

तब भाई चिंता करे,मन में ऐस बिचार।
चतुर गुरू बाणी रची, पंचम आप विचार
बोहड़ शब्द सिरी मुख कहें, भगत नाम धर देह।
आप रवें हम हो लिखें, भगत न कोई द्रष्टे।

अर्थात-पहले चार गुरुओं की बाणी पांचवें गुरु अर्जुन देव जी ने स्वयं ही विचार कर लिखवाई थी, फिर भगतों की बाणी गुरु जी अपने मुंह से उच्चारण करते जाते थे और हम लिखते जाते थे। भगत कोई नज़र न आता था।

यहां ही यह कहानी घड़ी गई कि राग रागनियां और भगत इच्छाधारी शरीरों में गुरु जी के पास आए थे।

७ ।वरजानन्द ८५३।
सन्दर्भ पुस्त
ग्रहण क्रमांक ...
5110
द महिला महावि

प्यारे पाठक ! भक्तों की बाणी ग्रन्थ साहिब में देखने से पता चलता है, कि भगत कबीर और बाबा फरीद आदि भगतों की बाणी में, काशी के पण्डितों और समन मोसन आदि की बाणी में पहले, तीसरे और पांचवें महले का नाम दर्ज है, इस लिए वास्तवकता यही है कि गुरु अर्जुन देव जी ने ग्रन्थ साहिब का सारा मसौदा (प्रतिलिपि) इकठा करके भाई गुरु दास जी से लिखवाया और कहीं कहीं "सुद्ध कीजिए" का आदेश भी देते रहे।

जब ग्रन्थ साहिब लिखा जा चुका तो जिल्द बन्धवाने के लिए लाहौर भेज दिया गया, और असूज के अन्त में जिल्द बन्ध कर आ गई तो इसको मंजी साहिब की जगह रखा गया। भाई बुढा जी ग्रन्थी नियत हुए। अमृतसर के बाद गुरु जी कर्तारपुर चले गए तो ग्रन्थ साहिब भी वहीं लाया गया। इससे पहले जहां सिक्खों में यह दस्तूर (परमपरा) था कि वह गुरु जी को मंजी साहिब के आगे मत्था टेका करते थे और उनके पाओं की मुठी चापी करते थे अब वहां मंजी साहिब पर विराजमान ग्रन्थ साहिब के आगे मत्था टेकने लगे और मंजी साहिब की मुठी चापी करने लगे।

इसी समय में भाई बन्नूं जी कुछ संगत सहित गुरु दर्शनों के लिए खारे मांगट जिला गुजरात से उपस्थित हुए। उन्होंने जब ग्रन्थ साहिब की बीड़ के दर्शन किए तो गुरु जी के सम्मुख इसे अपने ग्राम ले जाने की इच्छा प्रकट की और आज्ञा मांगी। गुरु जी ने पहले तो अस्वीकार किया परन्तु सिक्ख की मिन्नत समाजित और इच्छा को टाल न सके और इस शर्त (प्रतिबन्ध) पर देना स्वीकार किया कि ग्रन्थ साहिब को केवल एक रात मांगट में रखा जावे। भाई बन्नूं ने इस बात को मान लिया।

अब भाई जी ने रास्ते में थोड़ी थोड़ी दूर पर पड़ाव शुरु कर दिए और ग्रन्थ साहिब का उतारा करवाने लगे। प्रतिज्ञा अनुसार मांगट में एक रात ही ग्रन्थ साहिब को रखा गया। वापसी पर इसी प्रकार पड़ाव पड़ाव पर उतारा होता रहा और अब दूसरी बीड़ तैयार हो गई, परन्तु इस में पहले की उपेक्षा कुछ शब्द अधिक थे, जो भाई बन्नू जी ने सिक्खों से प्राप्त होने पर अपनी जिमेवारी (उत्तरदायित्व) पर दर्ज कर लिये थे। जब लाहौर आए तो इसकी भी जिल्द बन्धवा ली गई।

इस प्रकार भाई बन्नू जी ने जहां ग्रन्थ साहिब का उतारा क के एक दूसरा ग्रन्थ साहिब तय्यार कर लिया वहां रास्ते में आने जाने से इसका प्रदर्शन और प्रचार भी बहुत हुआ। जब बीड़ गुरु जी के पास वापस पहुंची और उनको इसके उतारे या नकल का पता लगा और उसमें कुछ शब्द भी अधिक पाए तो भाई बन्नू ने प्रार्थना की कि, सच्चे पातशाह :—

बन्नू कहिया प्रभु तुम जानो — संगत हेत मैं उद्यम ठानो।
यह उपकार गुरु तेह दिखराये — दरखत करे प्रभु सुखदाए।
सिरी मुख कहिया बीड़ दो भई, एक गुरदास इक बन्नू की।
दोहा-जोऊ ग्रन्थ इस थों लिखे, सोध्यो इसे बनाए।
गुरदास बीड़ ते जो लिखे, तांते सोओ सुधाए (गुरुबलास)

अर्थात—भाई बन्नू ने कहा कि गुरुवर। आप जानते हैं कि मैंने सिक्ख संगत के लिए ही यह पुरुषार्थ किया है। तब गुरु जी ने उपकारार्थ खुशी से भाई बन्नू की बीड़ पर भी स्वीकृति के हस्ताक्षर कर दिये और उन्होंने आदेश दिया कि अब ग्रन्थ साहिब की दो बीड़ें हो गईं। एक भाई गुरदास की बीड़ और एक

भाई बन्नूं की बीड़ । अब जो कोई भी भाई बन्नूं की बीड से नकल करके और दूसरा ग्रन्थ साहिब लिखे तो उसको चाहिए कि वह इसी भाई बन्नू की बीड़ से मिला कर सोधे या ठीक करे और जो कोई भाई गुरदास की बीड़ से उतारा करे तो वह इसी बीड़से अर्थात भाई गुरदास की बीड़ से ही मिला कर ठीक करे ।

अतः भाई बन्नूं वाली बीड़ पर गुरु हर गोविन्द जी की स्वीकृति की मोहर लगी हुई है और निशान उनके हाथ का है । कई लोगों का यह ख्याल है कि:- चूंकि भाई बन्नूं की बीड़ में कुछ शब्द अधिक दर्ज हुए थे इसलिए गुरु जी ने गुरदास की बीड़ का नाम मीठी बीड़ और भाई बन्नूं की बीड़ का नाम खारी बीड़ रखा । यह ठीक नहीं है बल्कि भाई बन्नूं की बीड का नाम खारा बीड़ है क्योंकि मांगट का पहले खारा नाम था अर्थात खारे दी बीड। अब इस बीड़ में गुरु तेग बहादुर की बाणी अलग कलम से पीछे दर्ज हुई है जो साफ नजर आ रही है :-

सरदार जी० बी० सिंह ने प्राचीन बीड़ा नामी पुस्तक में इस हस्त लिखित बीड़ों के सम्बन्ध में निम्न विचार प्रकट किए हैं ।

१—ग्रन्थ साहिब की लिखाई में हिज्जे (वाक) करने में बहुत बेतरतीबी पाई जाती है । एक ही अक्षर को अलग अलग प्रकार लिखा गया है जैसा कि "स्वय्ये" शब्द को पांच प्रकार के हिज्जों (वाकों) में लिखा गया है इसी प्रकार उन्होंने बहुत से शब्दों के उदाहरण दिये हैं, जिनको छापे के ग्रन्थ में भी हमने देखा है और उनके कथन को ठीक पाया है ।

२—"सो दर तेरा कहया जित बह सरब समाले" यह बाणी जपजी साहिब और सोदर वाणी में आसा महला पहला के नाम से हर दो जगह लिखी हुई है परन्तु दोनों में परस्पर पाठ भेद है और लिखाई [हस्तक्षरों] में भी [भिन्नता] है।

३—राग गौड़ी में वार चौथो की बाहरवीं पौड़ी [सन्त वचन आनन्द धा] गुरु राम दास जी ने लिखी है परन्तु यही शब्द उन्नीसवीं पौड़ी में दोबारा दर्ज है। और वहां पांचवें गुरू अर्जन देव जी के नाम से दर्ज है कारण ना मालूम कि इस को क्यों दोहराया गया है और क्यों पहले चौथे और पांचवें में फर्क डाला गया।

४—"मन्दावनी" यह शब्द गुरु अर्जन देव जी ने अपने विवाह पर अपनी बरात की बन्धी थाली खोलने के लिए उच्चारण किया था (यह एक विवाह की पौराणिक रीति है) "थाल विच तिन वस्तु पइयो" इसमें वस्तु साधारण पंजाबी बाक (मुहावरे) में मिठाइयों को कहते हैं, यह मन्दावनी भी ग्रन्थ साहिब की बीड़ लिखी जाने या खास तौर पर इस पर मुहर लगाने के लिए नहीं रची गई थी, बल्कि पहले उच्चारण की हुई मौजूद थी जो अपने ठीक टिकाने पर भोग की वाणी में दर्ज कर दी गई थी।

५—सम्मत १७५८ की पुरानी बीड़ में राग राम कली महला ५ में पूरी २४ तुकें (पद) लिखी हुई दर्ज हैं जो वर्तमान ग्रन्थसाहिब में कम कर दी गई हैं। इस के सम्बन्ध में सरदार जी० बी० सिंह लिखते हैं कि यह स्पष्ट नज़र आ रहा है कि गुरु हरगोबिन्द साहिब के जन्म की गुरु अर्जुन देव जी को बड़ी खुशी हुई जिस प्रकार के कितने ही शब्दों से नजर आ रहा है- जन्म,

वधाई, सहभोज, मुण्डन, जनेऊ, पांदे बिठाने, मंगनी, लगन बरात और विवाह सगली रीति कराई।

इसी प्रकार गुरू ग्रन्थ साहिब में भाटों के स्वय्ये दर्ज हैं. जो गुरूओं की सीमा से बढ़ कर की हुई प्रशंसा हैं, जिन में उन को परमात्मा का रूप बालक इस से भी बढ़ कर वर्णन किया गया है। भाट लोग विवाह आदि पर ऐसी खुशामदाना (चाटुकारी) प्रशंसा यजमानों की किया करते है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह चाटुकारिता भरी वाणी भाटों की सन्तान ने ही ला कर दी होगी। यही कारण इस की बीड़ के जर्मीमे (परिशिष्ट) के रूप में बाद में दाखिल करने की हुई हैं, अतः और कोई कारण नहीं कि गुरु अर्जुन देव जी ने ऐसी सिद्धान्त विरुद्ध और अनुचित खुशामद (चाटुकारिता) भरी वाणी क्यों ग्रन्थ साहिब में दर्ज होने की आज्ञा दी

राग माला ग्रन्थ साहिब में बिलकुल अन्त में मन्दावनी के बाद दर्ज है। मैकालिफ साहिब और कई दूसरे सिख इतिहासकारो का कथन है कि यह एक मुसलमान "आलम" नामी का लिखा हुआ है। जिसने माधवानल सांगीत नामी पुस्तक लिखी थी। यह रागमाला इस पुस्तक का एक भाग है जिस को बाद में किसी ने ग्रन्थ साहिब में दर्ज कर दिया है. वरना इस का ग्रन्थ साहिब के रागों से कोई सम्बंध नहीं। पंडित दरखा जी का कथन है कि राम माला दसम गुरु गोबिन्दसिंह जी के पचास वर्ष बाद ग्रन्थ साहिब में चढ़ाई गई थी।

कई साल गुजरे, सिख जगत में बड़ा वाद विवाद हुआ था। कईयो का मत था कि इस को निकाल दिया जाये या अखंड पाठों में और दूसरे पाठों में इस को न पढ़ा जाए, परन्तु

सम्परदाई ज्ञानी इसके खिलाफ (विपरीत) थे। एक बार खालसा समाचार अखबार ने लिखा था कि कोठाला रियासत मालीर कोटला की कापी पर जो राग माला थी उसको मसूर मंडली का एक आदमी बीड़ में से फाड़ कर ले गया था।

धीर मल के कबजा में आने से पहले भाई गुरदास वाली बीड़ केवल तीस वर्ष तक बाबा बुडढा और भाई गुरदास के पास रही। कई इतिहासकार यह भी कहते हैं कि उस को पृथ्वी चन्द ने कबजे में कर लिया था।

पाठक गण! इन सब घटनाओं से यह सिद्ध है कि वर्तमान प्रथा की भांति न तो ग्रन्थ साहिब का कहीं नियम पूर्वक प्रकाश ही होता रहा, न इसके पाठ होते थे और न इसके सम्मुख अरदासे ही किये जाते थे। उस समय पंजाब में बड़ी अशान्ति थी। मुसलमान आक्रमणकारियों के अत्याचारों के कारण किसी को शान्ति न थी। इसके अतिरिक्त गुरु पुत्रों में भारी फूट थी. एक दूसरे के जानी दुश्मन थे, इस कारण ग्रन्थ साहिब को भी शान्ति पूर्वक ठिकाना न मिलता था।

दमदमा साहिब वाला नया ग्रन्थ साहिब

भाई जोध सिंह जी ज्ञानी, साखी प्रमाण पुस्तक के पन्ना ५५ पर लिखते हैं कि गुरु अर्जन देव जी का ख्याल था कि कलयुग के लोग बड़े चतुर होंगे वह गुरबानी के साथ अपनी बाणी मिला कर उस को भी गुरबाणी प्रकट करेंगे। इस लिये उन्हों ने पहले चार गुरुओं की, अपनी और भगतों की बाणी इकत्र करने के बाद उस के अन्त में अपने हस्ताक्षर कर दिये और आदेश दिया कि :-

आप ते घाट न बाध करे।
जे करे होए मूर्ख सो पछताई।
और बनाए लवे न लखे विच
काव्य रचे सो रंचो पर थकाई।

अर्थात-मेरे लिखवाए ग्रन्थ साहिब में कोई घटा बढ़ी अथवा तबदीली (परिवर्तन) न की जाए जो करेगा वह मूर्ख होगा और पछताएगा, इस में कोई कविता भी न मिलाई जावे यदि कोई अलग कविता करे तो उस को अलग ही रखे। यह ग्रन्थ साहिब बाबा धीर मल के कब्जा (अधिपत्य) में था सारा सिख जगत इस को मानता था, परन्तु—

गुरू गोबिन्द सिंह जी इस ग्रन्थ को अपने कब्जा (आधपत्य) में लेना चाहते थे, उन्हों ने करतारपुर में बाबा धीर मल के पास अपने आदमी ग्रन्थ साहिब लाने को भेजे। मगर बाबा जी ने देने से साफ इन्कार कर दिया और कहा कि अगर वह बड़ा गुरू है तो स्वयं ही ग्रन्थ साहिब बना ले। उन आदमियों ने जूं का तूं उत्तर दसम गुरू जी को कह सुनाया।

तब गुरू गोबिन्द सिंह जी ने भाई मनी सिंह जी को लिखारी बनाया, और नया ग्रन्थ साहिब लिखवाना आरम्भ किया, इस ग्रन्थ साहिब में गुरू अर्जुन देव जी की इच्छा के प्रतिकूल गुरू तेग बहादुर जी की बाणी भी चढ़ा दी गई।

इस से सिद्ध है कि आदि ग्रन्थ साहिब बाबा धीर मल जी के पास तो सुरक्षित था; परन्तु दसम गुरू इस में रद्दो बदल (कांट छांट) करना चाहते थे, इस लिये बाबा धीर मल जी ने देने से इन्कार किया होगा। क्योंकि कुछ इतिहासकार यह भी कहते

हैं कि बाबा धीर मल जी ने उस के उतार (नकल) कर लेने से इन्कार न किया था, बल्कि कहा था कि मेरे पास रह कर यदि इस का कोई ठीक उतारा करना चाहता है तो बेशक करके ले जाए मैं इस में कोई मिलावट नहीं होनी देना चाहता।

हम देखते भी हैं कि दमदमा साहिब वाली बीड़ या प्रचलित गुरू ग्रन्थ साहिब में कबीर का एक शब्द भी बदला गया है और गुरू तेग बहादुर जी की बाणी अधिक मिला दी गई है। इस पर उलटा गुरू गोबिद सिंह जी के सिक्खों ने धीरमल्लियों का बाईकाट (बहिष्कार) कर दिया, जो अब तक जारी है. साथ ही यह भी कहा गया कि सिक्खों का ग्यारहवां गुरू कहलाने का अधिकारी भाई मनी सिंह जी का लिखा हुआ ग्रन्थ साहिब ही है दूसरा कोई भी ग्रन्थ साहिब इस पदवी का अधिकारी नहीं, चुनांचि साखी प्रमाण पुस्तक के पन्ना ५२ पर लिखा है कि—

शब्द कढ कबीर को सालो वाला,
हुकम नामा निरंजन मिटाया ई।
किते कढया ते किते पा दिता,
इच्छा अपनी कर्म कमाया ई।

अर्थात—ऐ सचे पातशाह दसम गुरू! तू ने भगत कबीर का शब्द बदल कर निरंजनी हुकम नामे को मिटा दिया। किसी जगह नये ग्रन्थ साहिब में कमी कर दी और कहीं ज्यादती, अपनी मर्जी से ही तू ने ऐसा कर दिया और हुकम दिया कि—

गुरू ग्रन्थ साहिब नाम इसी दा है।
गुरू सिक्खां दा एह ही कहावदा है॥

इस प्रकार ग्रन्थ साहिब की तीन बीड़ें हो गईं। एक भाई गुरदास वाली बीड़, दूसरी भाई बन्नू वाली और तीसरी भाई मनी सिंह वाली।

कहते हैं कि भाई गुरदास वाली बीड़ गुरू तेग बहादुर जी ने सतलुज दरिया में अपने हाथ से फैंक दी थी। दमदमा साहिब वाली बीड़ गुरू गोबिन्द साहिब जी के आनन्दपुर के किले से निकलते समय ब्यासा नदी की नज़र हो गई थी। भाई बन्नू वाली बीड़ मौजूद है परन्तु इस में बाद में मिलावट कर दी गई है, जो साफ नज़र आ रही है क्योंकि इस में स्याही भी दूसरी है और लिखित या हस्ताक्षर भी नहीं मिलते।

सरदार जी० बी० सिंह जी की लिखित अनुसार दस्ती (हाथ के) लिखे हुए ग्रन्थ साहिब अठत्तीस (३८) प्रकार के पाए जाते हैं। छापे के वर्तमान ग्रन्थ साहिब किस बीड़ का उतारा या नकल है यह बात खोज करने की है। इस सम्बन्ध में १९४६ में अखबार खालसा समाचार में लेख निकले थे जिन में से कुछ नीचे दिये जाते हैं :-

(१) ज्ञानी ज्ञान सिंह जी पन्थ प्रकाश की दूसरी अडीशन में लिखते हैं कि :-

आनन्द पुर में एक वेर गुरु करियो था ख्याल।
पंचम गुरु के हाथ का ग्रन्थ जो आहे विसाल॥
दर्शन करिये ताहे का आनन्द पुर मंगवाए।
पुन तिस पर ते ग्रन्थ एक राखे और लिखवाए।

अर्थात–एक बार आनन्दपुर में गुरू गोबिन्द सिंह जीने विचार किया कि पांचवें गुरू अर्जुन देव जी के हाथ का जो बड़ा विशाल ग्रन्थ है. उस के दर्शन किये जावें और उस से नकल कर के एक और ग्रन्थ लिखवाया जाए।

इस से सिद्ध है कि इस से पहले गुरू गोबिन्द सिंह जी ग्रन्थ साहिब के दर्शन भी न किये थे, परन्तु :–

ग्रन्थ न दिया सिख हट आए।
गुरु ढिग सब वृतान्त सुनाए॥
[बाईसवां विसराम]

बाबा धीर मल जी ने ग्रन्थ न दिया इस लिये सिक्ख वापिस आ गए और गुरू जी को सारा वृतान्त कह सुनाया।

(२) उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि करतारपुर वाली बीड़ श्री आनन्दपुर नहीं आई। दसम गुरू जी ने जितने उतारे करवाए वह खारे मांगट (भाई बन्नू) वाली बीड़ से करवाए। क्योंकि धीर मल से पहले तीस वर्ष तक करतारपुर वाली बीड़ बाबा बुड्ढा और गुरदास के पास रही। कईयों का मत है कि पृथ्वी चन्द (गुरू अर्जुन देव जी के बड़े लड़के) के पास रही।

(३) ६ पोष सं० १७६१ बिक्रमी तदानुसार १०. दिसम्बर १७०६ को आनन्दपुर छोड़ते समय बहुत सारे ग्रन्थ और ग्रन्थ साहिब की बीड़ें लूट खसूट में आग की नजर हो गईं, और कुछ जल में डुबो दी गई। चार मास बाद २१ वसाख १७६२ को मुक्तसर की लड़ाई से मुक्त हो कर आखीर हाड़ को गुरू जी ने साबो की तलवंडी (दमदमा साहिब) में डेरा लगाया। केवल

पांच मास वहां ठहरे, तब कोई ना मालूम (अज्ञात) बीड़ मंगवा कर उस की नकल करवाई गई। यह बात अभी खोज करने योग्य है कि वह कौन सी बीड़ थी जिस पर से 'दमदमा साहिब वाली बीड़ उतारी (नकल की) गई।

(४) माता साहिब कौर और मुक्तसर वाली माई भागो को गुरू गोबिन्द सिंह जी ने पांच शस्त्र अर्थात- मिरी साहिब, सिरोही, पेश कब्ज, कटार बड़ी और कटार छोटी और दमदमा साहिब वाली बीड़ दे कर बहन सुन्दर कौर के पास रहने के लिये भेज दिया था। इस के बाद इस बीड़ का भी कुछ पता नहीं चलता।

(५) गुरू गोबिन्द सिंह जी के ज्योति जोत समा जाने के बहुत काल पीछे भाई मती (सिंह जी) के पास एक बीड़ थी जिस पर से बाबा दीप सिंह जी ने चार उतारे किये, जो चार तख्त साहिबों पर मौजूद (विद्यमान) हैं। बाबा नत्था सिंह शहीद ने एक उतारा किया जो गुरद्वारा बाबा की बेर जिला स्यालकोट में मौजूद (विद्यमान) है। जो बड़ा बाबा के नाम से मशहूर (प्रसिद्ध) है।

(६) दमदमा साहिब वाली बीड़ कहां है यह भी अभी खोज करने योग्य है किन्तु कोठाला, रयासत मालेर कोठला वाली के सम्बन्ध में अनुमान किया जाता है कि यह ही होगी इस की

समाप्ति राग माला पर थी किन्तु भसूड़ मण्डली (तेजा सिंह भसूड़ वाले) का एक आदमी राग माला का वर्क (पन्ना) बीड़ में से फाड़ कर ले गया है जिस का वर्णन खालसा समाचार में हो चुका है। (अडीटर)

इन उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि गुरू ग्रन्थ साहिब की तीनों बीड़ें दस्तबुर्द (हस्तक्षेप) से नहीं बचीं। कुछ लूट खसूट में, कुछ आग की नज़र, और कुछ जल प्रवाह हो गईं। जो बचीं उन पर भी पीछे से कमी बेशी की गई। इस के बाद कौन सी बीड़ से वर्तमान गुरू ग्रन्थ साहिब छापा खाना में छापे गए इस को विश्वास पूर्वक कोई भी सिक्ख विद्वान कह नहीं सकता, हां! एक बीड़ डेरादून में है इस के सम्बन्ध में कहा जाता है कि यह गुरू हर राए जी ने करतारपुर वाली बीड़ से उतरवा कर अपने पुत्र राम राए को दी थी, जिस को ले कर वह देहली में औरङ्ग-ज़ेब को दिखाने ले गए थे वह अब बाबा राम राये के गुरदवारा में मौजूद (पड़ी) हैं।

यह है ग्रन्थ साहिब की आत्म कथा, जिस को नवीन सिक्ख आकाश वाणी, अकाल पुरुख का आदेश और ईश्वरी ज्ञान मानते हैं। परन्तु यह भी अब सारे का सारा ईश्वरी ज्ञान कहलाने के योग्य नहीं रहा, क्योंकि ज्ञानी प्रताप सिंह जी गुरुमत लैक्चर नामी पुस्तक में और मुहिन्द्र सिंह जी "सिक्ख हिन्दू

नहीं" नामी पुस्तक में लिखते हैं। भक्तों की बाणी अथवा भगत नामदेव, कबीर, और बाबा फरीद आदि की बाणी सिक्ख सिद्धान्तों के अनुकूल नहीं। इस लिये केवल छः गुरुओं की बाणी ही प्रमाणिक है। समय आएगा, जब आने वाली नसल (सन्तान) गुरुओं की बाणी से भी बहुत सी बाणी को प्रमाणिक नहीं मानेगी, क्योंकि गुरबाणी में भी मूर्ति पूजा, अवतार वाद, बचीन वेदांत आदि अवैदिक सिद्धान्तों का मण्डन मौजूद है।

हमारा विश्वास है, कि सच्चाई की जीत होगी और अन्त गुरबाणी के वही प्रमाण ठीक माने जाएंगे, जो वेदोक्त सिद्धांतों के अनुकूल होंगे। परमात्मा करे ग्रन्थ साहिब की इस आत्म कथा से वास्तविकता चाहने वालों को कुछ सत्य का प्रकाश हो और लाभ पहुंचे ॥

ओ३म् शम्

ॐ

प्राचीन सोलह संस्कार

अर्थात वेद मर्यादा और गुरु मर्यादा पर तुलनात्मिक विचार

भूमिका

संस्कार का अर्थ है किसी पदार्थ को शुद्ध और पवित्र करना, स में से आई हुई या आने वाली खराबी को दूर करके शुद्ध और पवित्र करना। इसी प्रकार मनुष्य आदि प्राणियों को अच्छा और नेक बनाने के लिये जो ढङ्ग प्रयोग में लाए जाते हैं उन को भी "संस्कार करना' कहते हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये वेद आदि सत्यशास्त्रों और प्राचीन बुजुर्गों ने जो योजना बनाई है उस को वैदिक संस्कार या वेद मर्यादा कहते हैं यह गिनती में सोलह हैं। इन संस्कारों का कदाचित यह आशय न था कि स्वार्थी पण्डे, ग्रन्थी और पुजारियों की पेट पूजा की जावे। वह लोग कुछ अण्ड बण्ड श्लोक पढ़ कर साधारण जनता से दक्षिणा ले लें और इस धन से आशिक़ा बन या भांग आदि नशे पी निकम्मे रह कर मौज उड़ाते फिरें। वेद मर्यादा का अर्थ तो वेद आज्ञा अनुसार आचरण करके जीवन को प्रबल और निष्पाप बनाना है। परन्तु इन पेट पुजारियों ने तो साठ साला बूढ़े के साथ सात साल की कन्या और बीस साला कन्या के साथ नौ साला लड़के का या और कई प्रकार के बेजोड़ विवाह करा कर कुछ संस्कृत के श्लोकों को पढ़ और दान दक्षिणा ले रफूचक्कर होने का नाम ही शास्त्र रीति मान रखा था। ऐसी बेढङ्गी रीति

का नाम वेद मर्यादा नहीं हो सकता, यह तो वेद विरुद्ध पाप कर्म या राक्षसी मर्यादा कहलाएगी।

१९१४ ई० में अपनी अढाई ईंट की अलग मस्जिद बनाने और सिक्खों को आर्य (हिन्दुओं) से अलग करने के लिये चीफ खालसा दीवान वालों ने अपनी एक अलग मर्यादा बना ली, जिस का नाम गुरु मर्यादा रखा। उन्हों ने सोलह की जगह चार संस्कार ही रखे हालांकि दसों गुरू साहिबान ने न तो इस का कहीं वर्णन ही किया है और न आज्ञा ही दी है और वह स्वयं अपने और अपनी सन्तान के संस्कार प्रचलित पौराणिक (हिन्दू) रीति से ही करते रहे।

इस नवीन गुरु मर्यादा का भाव भी अधिकतर गुरु वाणी के कुछ शब्द पढ़ कर और गुरु ग्रन्थ साहिब की उपस्थिति में रीति पूर्ण करके ग्रन्थियों, ज्ञानियों और रागियोंको धन की अरदास करा देना ही है। ऐसे ही दूसरे मतों वालों ने केवल मात्र रीति पूर्ण कर देने को ही अपने मत की मर्यादा मान लिया है। देश और जाति में इस झूठी प्रथा को दूर करने और संस्कारों का वास्तविक आशय दर्शाने के लिये इस ट्रैक्ट को लिखा गया है। आशा है कि सत्य के अभिलाषी इस से लाभ उठावेंगे।

अमृतानन्द सरस्वती

सोलह संस्कार

१-गर्भाधान संस्कार

प्राचीन काल में आर्य लोग अमोघ वीर्य थे और स्त्रीयां भी सदाचार और संजम की मूर्तियां थीं। पुत्रेष्ठी यज्ञ गृहस्थ आश्रम का पहला धर्म है। इस को गर्भाधान संस्कार कहा गया है। उत्तम सन्तान पैदा करने के लिये गृहस्थ आश्रम में प्रवेश कर जिस मर्यादा या नियम को अपनाया जाता था उस को ही पुत्रेष्ठी यज्ञ कहते थे।

२-पुन्सवन संस्कार

स्त्री पुरुष के रज, वीर्य की स्वस्थता, दृढ़ता और शुद्धता होनी चाहिये। बिगड़े हुए रज वीर्य से सन्तान भी बिगड़ी हुई पैदा होती है। इस लिये सूत्रकारों ने औषधियां बताई हैं, इन को प्रयोग करना और वर्ष भर तक ब्रह्मचर्य का पालन करना इस संस्कार का आशय है।

३-सीमन्नतोनयन संस्कार

गर्भ वती स्त्रीयों को गर्भपात होने या इसी प्रकार के कोई और रोग होने का डर रहता है। स्वास्थ-प्रद और बलिष्ट पदार्थों का सेवन करना और मन में उत्साह पैदा करना और गर्भ की दशा को स्वस्थ रखना इस संस्कार का आशय है।

४-जातकर्म संस्कार

बच्चा पैदा होने पर स्त्री के स्वस्थ्य को ठीक स्थिर रखना और प्रसूत घर में हवन करके शुद्ध और पवित्र रखना, बच्चे की नाभि काटने पर दुख न हो और स्त्री और बच्चा सुखी और नीरोग रहें ऐसे ढङ्गों का अपनाना जात कर्म संस्कार है।

५-नामकरण संस्कार

अपने आप नाम रखने में भी कोई भूल न हो, सुन्दर और पवित्र नाम रखा जाए। इस हेतु बुद्धिमान आर्य पूर्वजों ने इस संस्कार को प्रचलित किया था।

६-निष्क्रमण संस्कार

कोमल शरीर बच्चे को वायु सेवन के लिये ऐसे स्थान पर ले जाया जावे, जहां की जल वायु स्वास्थ्यप्रद, शुद्ध और पवित्र हो।

७-अन्न प्राशन संस्कार

बच्चे के जब दांत निकल आवें। उचित समय पर यदि अन्न का सेवन न कराया जावे तो बच्चे के बढ़ने और स्वस्थ रहने में बाधा पड़ती है। शीघ्र पाचक तथा शक्ति दायक अन्न का प्रयोग आरम्भ कराना इस संस्कार का उद्देश्य है।

८-चूड़ा कर्म संस्कार

गर्भ के बालों को मुण्डन करा कर उतरवा दिया जाये और देश काल के अनुसार बाल रखे जावें। जिस से बच्चे का मस्तिष्क फले फूले। इस को मुण्डन संस्कार भी कहते हैं।

९-यज्ञोपवीत संस्कार या व्रत बन्ध

बच्चों को विद्या आरम्भ करते समय उत्साह हो, इस लिये लड़के और लड़की दोनोंको जनऊ धारण कराया जाता था। विद्वान ब्राह्मण लोग शिक्षा आरम्भ करने वाले बालक को सूत का यज्ञोपवीत पहनाते थे। इस के धारण करने पर बड़ी जिम्मेवारी रहती थी यदि कोई पूर्ण रूप से शिक्षा प्राप्त न करता था तो उस का यज्ञोपवीत छीन लिया जाता था जिस से उस का अपमान होता था। बुद्धिमान शूद्र पुत्र को भी यज्ञोपवीत धारण कर ब्राह्मण तक बनने का अधिकार था। इस लिये बच्चे शौक से दिल लगा कर पढ़ा करते थे और विद्या के निशान यज्ञोपवीत को बड़े उत्साह से धारण करते थे।

१०-वेदारम्भ संस्कार

के समय बालक को वेदादि विद्या पढाने के लिये गरु के पास भेजने पर किया जाता है।

११-समावर्तन संस्कारु

वैदिक शिक्षा की समाप्ति पर यह संस्कार किया जाता ह।

१२-विवाह संस्कार

इस का वर्णन विस्तार से आगे लिखा जाएगा।

१३-गृहस्थ आश्रम

गृहस्थ आश्रम में प्रवेश, पांच महायज्ञों का नित प्रति करना, शेष तीन आश्रमों का बोझ उठाना इस कारण इसे ज्येष्ठ आश्रम भी कहते थे।

१४-वानप्रस्थ आश्रम संस्कार

पुत्र के पुत्र होते ही गृहस्थ आश्रम छोड़ कर वानप्रस्थ में प्रवेश करना जिस में धर्म अधर्म या सच और झूठ के विषय पर विचार होता रहता था। और गुरुकुल बना इस में, जाति के बच्चों को निशुल्क शिक्षा दी जाती थी, पढ़ने पढ़ाने में पूरा समय लग सके इस कारण गृहस्थ के भार को पुत्र के सपुर्द करके आप लोक सेवा में लग जाने का नाम वानप्रस्थ संस्कार है।

१५-सन्यास आश्रम

धर्म से विशेष रुचि हो, संसार की भलाई में समय लगे, वेद धर्म का प्रचार हो इस भारी जिम्मेवारी को ले कर संसार में भ्रमण करना, सन्यासी का कर्त्तव्य है।

१६-अन्त्येष्टि सन्स्कार या दाहकर्म सन्स्कार

मृत्यु होने पर शरीर का वैदिक रीति से दाहकर्म करना।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने पूना के एक व्याख्यान में कहा था कि आजकल हमारे देश में दाह कर्म संस्कार तीन प्रकार के होते हैं पहला मृतक प्राणी को जलाना दूसरा जंगल में फैंक देना और तीसरा जल में समाधि देना। प्राचीन आर्य लोग इस को अन्त्येष्टि यज्ञ मानते थे इस में मुर्दे को जलाना सब से उत्तम है। अब मुर्दा गाड़ने (दबाने) वालों को सोचना चाहिये कि ऐसा करने से रोगों के फैलने का डर रहता है और भूमि के रुक जाने से आर्थिक हानि। दूसरे जो लोग यह समझते हैं कि

जल में डालने से और मछलियों का भोजन बनने से परोपकार होता है, उन को विचारना चाहिये कि इस से पीने का पानी बिगड़ जाता है गङ्गा जैसी बड़ी नदियों में मुर्दे डालने से खराबी पैदा होती है तो बाकी छोटी मोटी नदियों की तो कथा ही क्या है। अब गङ्गा जी में हड्डियों को ले जा कर डाला जाता है, सोचो तो यह कितना मोलापन है, मरे हुए प्राणि का शरीर तो मिट्टी है इस को गङ्गा में डालने से क्या लाभ होगा। अब जो जंगल में डाल देते हैं इस प्रकार भी दुर्गन्ध पैदा हो कर रोग बढ़ते हैं। इसी कारण हमारे पूर्वजों ने मुर्दा जलाने की प्रथा को सब से उत्तम माना था। उन्हों ने शमशान भूमि में एक वेदि बनाने का विधान किया था जो पक्की ईंटों से बनाई जाती थी इस में मुर्दा शरीर को रख कर जलाते समय बीस सेर घी और एक मन चंदन आदि सुगन्धित और रोग नाशक औषधियों को डालने का विधान है। आज कल अन्त्येष्टि संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से नहीं होता, पौराणिक भाई तो नाम मात्र करते हैं। आर्य लोग भी समय अनुकूल न होने के कारण घी सामग्री कम मिकदार (मात्रा) में डालते हैं। हां, इस में पण्डे और अचारज लोग मौज उड़ाते हैं जो अज्ञान का कारण है। सब मनुष्यों को उचित है कि संस्कारों के विषय में पूरा पूरा सुधार करें जिस से देश और जाति का कल्याण हो।

प्यारे पाठक! सोलह संस्कारों के संक्षिप्त विवरण को पढ़ कर आप अनुभव करेंगे कि यह सब के सब गृहस्थ धर्म के आश्रत हैं इसी लिये तो इस आश्रम को सबसे बड़ा माना गया है।

—★—

बच्चों का पढ़ना पढ़ाना

प्रश्न यह है कि मनुष्यों में धर्म किस प्रकार फैले, किस प्रकार वह भले पुरुष बन कर स्वयं आनन्द भोगें तथा देश और जाति को सुखी बनाएं ? इस के उत्तर में ऋषियों ने बतलाया कि 'यदि संसार में धर्म फैलाना चाहते हो तो स्त्री पुरुष मिलकर सन्तानकी उत्पत्ति,शिक्षा पढ़ने पढ़ाने पर विचार करो" गर्भाधान से ही ऐसी युक्तियां प्रयोग की जाएं कि बच्चे पर शिशु काल में ही धर्म का बीज बोया जाये। महर्षि दयानन्द जी शत पथ ब्राह्मण का प्रमाण दे कर लिखते हैं कि जब तीन विद्वान शिक्षक, एक माता, दूसरा पिता और तीसरा गुरु नेक उपलब्ध हों तो मनुष्य पूर्ण विद्वान हो सकता है। इस लिये कहा कि मुबारिक है वह परिवार और भाग्यशाली है वह सन्तान जिस के सर पर धर्म पर चलने वाले और विद्वान माता पिता और गुरु हों।

अब जिस समाज में स्त्री को पावों की जूती और तुच्छ खेती समझा जावे, विद्या से अनभिज्ञ रखा जाए, या गृहस्थ धर्म की उत्तम शिक्षा न दी जावे, वहां धार्मिक सन्तान पैदा होने का क्या काम है ? हमारे सुधारक लीडर स्कूलों में बच्चों का सुधार करना चाहते हैं और कोरे लैक्चरों से उन को धर्म पर चलाना चाहते हैं, उन को क्या पता कि नेक बच्चा तो वह ही बन सकता है जिस को उस की माता बनाती है। ऋषि ने कितना सुन्दर कहा कि माता से जितनी शिक्षा और लाभ बच्चे को पहुंचते हैं इतने किसी दूसरे से नहीं पहुंचते। क्योंकि माता सन्तान से जितना प्यार करती है और उस की भलाई चाहती है

इतना और कोई नहीं करता। सच पूछो तो क्यों न प्रभाव पड़े उस आत्मा का, जिस ने नौ मास तक बच्चे को पेट में रखा है, जिस के प्यार, प्रेम, मैत्री और दया का हजारवां भाग भी हम सारे संसार में नहीं देख पाते। इसी लिये तो ऋषि ने कहा था कि धन्य है वह माता; जो गर्भाधान से ले कर जब तक पूरी शिक्षा नहीं हो जाती, सन्तान को सदाचार की शिक्षा देती रहती है। अब जो लोग गुरुबाणी में से शब्द पढ़ कर यह उपदेश देते हैं कि :—

गुरु बिन ज्ञान न होई

उन को यह भी विचारना चाहिये कि मनुष्य का सब से पहला गुरु कौन है? नहीं तो केवल गुरुडम की शिक्षा से संसार का भला न होगा। माता पिता का प्रभाव सन्तान पर भारी होता है और यह उसी समय से आरम्भ हो जाता है जबकि बच्चा गर्भ में आता है। इसी लिये हमारे पूर्वजों ने कहा था कि अन्न से प्राण और प्राण से मन बनता है; अर्थ यह कि जैसी बुराक माता खाती है वैसा ही प्रभाव उस के मन पर पड़ता है और जैसा उस का मन होता है उस के संस्कार गर्भ में बच्चे पर पड़ते हैं इसी लिये तो विद्या प्राप्ति या यज्ञोपवीत संस्कार से पहले आठ संस्कारों का विधान किया गया है जो सन्तान को उत्तम सदाचारी बनाने का उपाय है।

जिन लोगों ने सौंफिया आम खाया है उन को पता होना चाहिये कि उस में सौंफ का सुगन्धित स्वाद डालने का उस समय यत्न किया जाता है जिस समय कि उस को गुठली के रूप में

खेत के अन्दर बोया जाता है, बड़ा पेड़ होने पर तो पचासों मन सौंफ की पुठ देने से उस के आम सौंफिया नहीं बन सकते। इस लिये विवाह संस्कार के समय ही इन सारी बातों को समझ कर स्त्री पुरुषों को गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करना उचित है। अब जिन हमारे सिक्ख सज्जनों ने पहले आवश्यक संस्कारों को छोड़ कर केवल चार संस्कार ही रहने दिये हैं उन को विचारना चाहिये कि यह गुरु मर्यादा नहीं बल्कि अज्ञान मर्यादा है, गुरु मर्यादा तो वही है जो गुरुओं के गुरु आदि गुरु परमात्मा ने वेद ज्ञान द्वारा हम को दी है, इसी लिये तो गुरु नानक देव जी ने कहा था कि :—

माई रे गुरु बिन ज्ञान न होई।
पुछो ब्रह्मे नारदे वेद व्यासे कोई

अर्थात-सब ज्ञान तो चारों वेदों के जानने वाले ब्रह्मा और वेदोक्त शिक्षा को धारण करने वाले नारद और वेदों की व्याख्या करने वाले व्यास ऋषि से ही प्राप्त होगा। और गुरु अर्जुन देव जी ने आदेश दिया था कि :—

वेद व्याख्यान करत साधुजन।
भाग हीन समझत नहीं खल॥

अर्थात-मनुष्यों को धर्म की शिक्षा देने के लिये साधुजन और महात्मा पुरुष वेदों का व्याख्यान करते हैं, परन्तु भाग्यहीन और मूर्ख लोग उन की शिक्षा को समझते ही नहीं।

वेदोक्त विवाह संस्कार और नवीन गुरु मर्यादा पर

तुलनात्मिक विचार

मनुष्य जीवन का पहला विभाग ब्रह्मचर्याश्रम है। गर्भाधान से ले कर जन्म तक और बचपन से ले कर युवा अवस्था तक मनुष्य अपनी शारीरिक मानसिक तथा आत्मिक शक्तियों को बढ़ा सकता है। यदि इस समय इन तीनों की उन्नति के लिये विद्या प्राप्ति का यत्न न किया जावे तो फिर सारी आयु अज्ञान अन्धकार और मूर्खता में व्यतीत होगी। प्राचीन महर्षि लोग मनुष्य स्वभाव को भली प्रकार जानते थे इस लिये उन्हों ने ब्रह्मचर्य को सब सुधारों की जड़ बतला कर इस पर इतना जोर दिया है कि यदि इस को विद्या का आदि नियम कहा जाए तो ठीक ही होगा। यह आश्रम जीवन के बाकी विभागों या तीन आश्रमों की तय्यारी का मुख्य कारण है जिस का तात्पर्य इस लोक में धर्म पूर्वक निर्वाह करना और परलोक में सद्गति और मोक्ष प्राप्त करना है इस के बाद सांसारिक कारोबार तब आरम्भ होता है जब मनुष्य गृहस्थाश्रम में पांव रखता है। जीवन के इस विभाग या गृहस्थाश्रम में ही सारी सांसारिक उलझनों, कष्टों का सामना करना पड़ता है क्योंकि नित्य नये धन का कमाना और जीविका का पैदा करना पुरुष का कर्त्तव्य है। निश्चिन्तता जो विद्यार्थी जीवन में उस को प्राप्त थी वह लोप हो जाती है। मनुष्य पर कई प्रकार की जिम्मेवारियां आ पड़ती हैं और वह कई बार इन के बोझ से दब जाता है। इस लिये पहला

प्रश्न जो दिल में पैदा होता है वह यह कि विवाह क्यों किया जाए? इस लिये तो स्त्री पुरुष दोनों एक बन्धन में जकड़े जाते हैं और पारिवारिक झमेले में कई बार बड़े दुःखों का सामना करना पड़ता है। इस लिये अपने आप को स्वतन्त्र विचारों का मानने वाले कई स्त्री पुरुष कह दिया करते हैं कि जिस के साथ प्यार हो जाए उस के साथ तब तक रहे जब तक सुख आनन्द और मौज बहार रहे जब भी मन उकता जाए या बन्धन और दुःख प्रतीत हो या प्यार छूट जाए तो एक दूसरे को छोड़ दिया जाए, इस के उत्तर में इस युग के सुधारक महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने कहा है कि ऐसे अनुचित प्रेम सम्बन्ध से जो दोष पैदा होते हैं उन को दूर करने के लिये विवाह करना ही सिद्ध होता है वह लिखते हैं कि :—

"यह पशुओं और पक्षियों का ढङ्ग है मनुष्यों का नहीं यदि (१) मनुष्यों में विवाह संस्कार न रहे तो गृहस्थ के सब अच्छे अच्छे कार्य अस्त व्यस्त हो जाएं (२) कोई किसी की सेवा भी न करे (३) भारी व्यभिचार बढ़ कर लोग रोगी, निर्बल और अल्पायु हो कर शीघ्र ही मृत्यु के मुंह में चले जाएं (४) कोई किसी की सम्पत्ति का उचित अधिकारी (वारिस) ही न रहे और न किसी को किसी वस्तु पर देर तक अधिकार ही रहे।"

महर्षि दयानन्द जी ने संस्कार विधि में मनुस्मृति का प्रमाण दे कर आठ प्रकार के विवाह लिखे हैं :—

(१) कन्या के योग्य किसी सुशील और विद्वान पुरुष को चुन कर जिस को कन्या ने पसन्द किया हो, सत्कार पूर्वक बुला कर

वस्त्र और भूषण आदि पहना कर कन्या को दे देना ब्रह्म विवाह कहलाता है।

(२ विस्तृत यज्ञ में बड़े बड़े विद्वानों को बुला कर उन में से किसी शुभ कर्म करने वाले विद्वान को पसन्द कर के कन्या को वस्त्र भूषण आदि दे कर समर्पण करना दैव विवाह कहलाता है।

(३) एक गाय बैल का जोड़ा या दो जोड़े वस्त्र गृहस्थ के निर्वाहार्थ वर कन्या दोनों के लिये ले धर्म पूर्वक कन्या दान करना आर्ष विवाह कहलाता है।

(४) कन्या और वर को यज्ञशाला में बुला विधि पूर्वक सब के सामने यह उपदेश दे कर कि तुम दोनों प्रसन्नता पूर्वक मिल कर गृहस्थाश्रम के कर्त्तव्य को पूरा करो, विवाह कर देना प्रजापत्य विवाह कहलाता है।

(५) वर की जाति वालों से सौदा बाजी करना और कन्या को यथा शक्ति धन दे कर हवन आदि की विधि करके कन्या देना असुर विवाह कहलाता है।

(६) वर कन्या का अपनी इच्छा से एक दूसरे के साथ प्रेम कर संयोग पैदा कर लेना और अपने मन में मान लेना कि हम दोनों स्त्री पुरुष हैं यह काम के वश में हुआ गान्धर्व विवाह कहलाता है।

(७) मार पीट कर, घायल करके और कन्या के वारसों को मार कर और छीन कर रोती चिल्लाती कांपती और डरी हुई कन्या को बलात्कार उठा या भगा ले जाना राक्षस अति नीच विवाह कहलाता है।

(८) सोई हुई को, पागल को, मद्यादि पी हुई बेसुध हुई अकेली पा कर व्यभिचार कर लेना यह सब विवाहों से नीच बड़ा ही दुष्ट पैशाच विवाह कहलाता है।

इन में से ब्रह्म, दैव, आर्ष, और प्रजापति इन चारों विवाहों से जो सन्तान पैदा होती है वह वेदादि विद्या से तेजस्वी, आप्त पुरुषों की प्यारी और अति उत्तम होती है वह सन्तान सुन्दर रूप बल पराक्रम वाली, बुद्धिमान, धनवान, धर्मात्मा, कीर्तिवान, उत्तम गुणों वाली और सौ वर्ष तक जीने वाली होती है।

और आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच इन चार दुष्ट विवाहों से पैदा हुई सन्तान दुराचारी झूट बोलने वाली, वेद विरुद्ध, निर्बल और नीच स्वभाव वाली होती है। इस लिये मनुष्यों को उचित है कि इन नीच विवाहों का त्याग कर उत्तम विवाहों को क्या करें।

दसों गुरु साहिबान का यह विषय ही न था, वह तो ईश्वर भक्ति और धर्म के साधारण नियमों के प्रचारक थे। गृहस्थ धर्म के विषय में वह हिन्दू रीति रिवाज उस समय जो चल रहे थे उसी के पाबन्द (बाध्य) थे, इस लिये उन्हों ने अपनी वाणि में इस पर कोई प्रकाश नहीं डाला। उन्हों ने अपने और अपना सन्तान के विवाह पहले उत्तम चार प्रकार के विवाहों में से किसी एक के अनुसार किये थे। हां! धर्म उपदेश करते हुए जहां उन को आवश्यकता पड़ी, उदाहरण के रूप में पतिव्रत और पत्नीव्रत धर्म का उपदेश किया, वास्तव में वह परमात्मा को जगत का पति और प्राणियों को स्त्री मानते थे इस प्रकार अलंकार

के रूप में भी ईश्वर प्रेम के लिये उन्हों ने कुछ शब्द उच्चारण किये, उदाहरण के लिये पहली लावां जो आजकल के सिक्ख भाई आनन्द कारज करते हुए मंगल फेरों में पढ़ते हैं का सत्यार्थ लिखा जाता है।

हर पहलड़ी लावां प्रवृति धर्म दृढ़ाया बलराम जिओ।
बाणी ब्रह्मा वेद धर्म दृढ़ो, पाप तजाया बलराम जिओ॥
धर्म दृढ़ो हरी नाम ध्याओ स्मृति नाम दृढ़ाया।
सत्गुरु पूरा अराधो सब किल विख पाप गंवाया॥
सहज आनन्द होया वड भागी, मनहर हर मीठा लाया।
जन कहे नानक लावां पहली आरम्भ काज रचाया॥

(राग सही महला ४)

अर्थात-पहली लावां क्या है धर्म में प्रवृत्ति करनी, धर्म पर दृढ़ता से स्थिर रहना, ऐ मनुष्यो! बाणी जो ब्रह्मा के द्वारा वेदों की परमात्मा ने प्रगट की है उस पर दृढ़ता, विश्वास रखो, हरि जो परमात्मा है उस का जाप करो. स्मृति में जो नाम की महिमा है उस पर दृढ़ता और विश्वास रखो, सत्गुरु पूरा गुरु जो परमात्मा है उस का स्मरण करो, जिस से सब पाप दूर हो जाएं। ऐसा करने से ही सहज आनन्द हुआ और बड़े भाग्य थे कि परमेश्वर का मीठा नाम मन में स्मरण किया। गुरु रामदास जी कहते हैं कि यह ब्रह्म की प्राप्ति का आरम्भ है, ऐसा करने से मनुष्य परमात्मा के भक्ति मार्ग में पहला पग रखता है।

सज्जनों! जरा विचारिये तो सही, क्या यह लावां वर कन्या के फेरे देने के लिये लिखी गई थी या ईश्वर की प्राप्ति का पहला

साधन बतलाया गया था इसी प्रकार चार लावां का नाम रख कर गुरु रामदास जी ने ईश्वर प्राप्ति के चार साधन बतलाए हैं। इस पहले साधन में ईश्वरी ज्ञान या वेद वाणी पर दृढ़ विश्वास का उपदेश दिया गया है जिस को आज उन के नवीन सिक्ख भुला चुके हैं।

आनन्द विवाह करते समय, "बांह पकड़ ठाकुर हो गिही, गुण अवगुण न पछाने" का शब्द उच्चारण करके ग्रन्थी भाई लड़की का हाथ वर को पकड़ा देते हैं। अब सोचना चाहिये कि गुण अवगुण की पहचान किये बिना ही लड़की को वर को पकड़ा देना कौन सी बुद्धिमत्ता है, जरा इस बाणी को ग्रन्थ साहिब में से सारी पढ़िये तो पता लगेगा कि इस शब्द का स्त्री पुरुष के सम्बन्ध से दूर का भी सम्बन्ध नहीं. इस का सच्चा अर्थ यह है कि परमात्मा ने अपनी दया से मेरी बांह पकड़ी मुझे अपना सहारा दिया और मुझे संसार सागर से बचा लिया, मेरे गुण अवगुण या निर्बलताओं और त्रुटियों पर विचार न किया, मेरे मन के प्रेम का आदर करते हुए अपने पवित्र चरणों में अपना लिया है।

गुरुओं ने ग्रन्थ साहिब में ईश्वर भक्ति में लीन हो कर इस ढङ्ग से अपने हृदय के पवित्र भावों को प्रभु चरणों में रखा है और अपनी पवित्र बाणि में लिखा है, कि :—

जे लोड़ें वर बालड़ये तां गुरु चरणीं चित लाइये।
सदा होवें सुहागनी हर जो मरे न जाए ॥
(सूही महला ३)

गुरु अमर दास जी कह रहे हैं कि ए जीव ! यदि तू परमात्मा का प्रेम चाहता है तो सच्चे गुरु के चरणों में या परम पिता की शरण में जो गुरुओं का भी गुरु है, चित लगा, इस से तू सदा सहागन होगा, अर्थात जन्म मरन के दुखों से छूट कर मुक्ति पद को प्राप्त करेगा, क्योंकि परमात्मा जो सच्चा पति है वह न कभी मरता है और न कहीं जाता है।

चीफ खालसा दीवान वालों ने अपनी संस्कार भाग पुस्तक में विवाह समय पर लिखा है, कि :—

अकाल मूरत वर पाया।
अबिनाशी न कदे मरे न जाया ॥

फिर लिखा कि :-

विवाह होया मेरे बाबला गुरुमुखे हरि पाया।
(सिरी राग महला ४)

अर्थात-परमात्मा को, जो अकाल मूरत या जन्म मरण से रहित है मैं ने वर लिया है वह अबिनाशी है जो न कभी मरता है और न कहीं आता जाता है। ऐ सन्तो ! मेरा अब प्रभु से विवाह या मिलाप हो गया, गुरुमुख हो कर या परमात्मा का आज्ञाकारी बन कर मैं ने ईश्वर को पा लिया है।

अब यह कितना अनर्थ है कि भक्ति रस में भरे हुए इन शब्दों को सांसारिक स्त्री पुरुषों पर घटा लिया जाए, क्योंकि प्राणि तो जन्म लेते और आते जाते रहते हैं इस लिये उपरोक्त शब्द यदि देहधारी स्त्री पुरुषों के लिये प्रयोग किया जाए तो अर्थ

का अनर्थ हो जाता है, जो भारी पाप कर्म है। सचमुच वह सच्चे गुरु सिक्ख हैं जो ऐसी मन मर्यादा को गुरु मर्यादा का नाम न दे कर बाणि के असली भाव को समझते हैं और इस भूल से बचे रहते हैं जहां तक हम ने खोज की है नवीन सिक्खों का भी इन नेक प्रकार के विवाहों पर कोई आपत्ति नहीं और नाच प्रकार के विवाहों से पूरी घृणा है।

विवाह का पहला नियम

वर्ण की समानता

वर्ण शब्द का अर्थ है रूप, भेद, प्रकार, रङ्ग आदि। किन्तु इस का वैदिक अर्थ है, श्रम विभाजन या कार्यों का बटवारा, यजुर्वेद में लिखा है कि पूर्ण व्यापक परमात्मा की सृष्टि में जो मुख के समान सब से उत्तम और ज्ञान इन्द्रियों का केन्द्र है वह ब्राह्मण, जो बाहु के समान बलवान वीर्यवान और रक्षक है वह क्षत्री, जो उरु (धड़) के समान समाज के सारे भागों का पालन पोषण करता है वह वैश्य। और जो पावों के समान सेवा करे या जाति रूपी शरीर का बोझ उठाए और सहारा दे वह शूद्र। इस वेद मन्त्र में सारे समाज को गुण कर्म स्वभाव या योग्यता के आधार पर बांटा गया है।

ब्राह्मण को सर या मतिष्क कहा गया, जिस प्रकार मस्तिष्क का दर्जा शरीर में सब से ऊंचा है इसी प्रकार ब्राह्मण का दर्जा मनुष्य समाज में सब से उत्तम (अफजल) है। मस्तिष्क जैसे शरीर के कामों को ठीक ढङ्ग से निभाता और चलाता है इसी प्रकार ब्राह्मण भी समाज को नियम में रखने और चलाने वाला है।

क्षत्री का उदाहरण बाहों से दिया गया है जिस प्रकार बाहें शरीर में बल के प्रतिनिधि और रक्षक हैं इसी प्रकार क्षत्री शस्त्रों और सेना से समाज की रक्षा करता है।

उरु या धड़ का काम है भोजन को पचा कर उस को सारे शरीर में बांट कर उस का पालन पोषण करना, इसी प्रकार वैश्य का काम भी जाति या समाज धन और अन्न से पालन पोषण करना है।

पाओं जिस प्रकार शरीर के बोझ को उठा कर इधर उधर ले जाते हैं इसी प्रकार शूद्र भी अपनी सेवा और पुरुषार्थ से समाज को सहारा देता है।

वैदिक वर्ण व्यवस्था के सिद्धान्त में कामों का बटवारा बड़ी सूझ और खुश असलूबी से किया गया है। समाज को बुद्धि, बल, पालन पोषण, और श्रम या सेवा इन चारों की आवश्यकता है जब तक इन चारों में से एक में भी कर्तव्य पालन की कमी रहेगी तब तक जाति और समाज का नियन्त्रण (निज़ाम) ठीक न रह सकेगा।

ब्राह्मण बुद्धि का क्षत्री बाहू बल का, वैश्य पालन पोषण का और धन का, और शूद्र सेवा का प्रतिनिधि है। इन में कोई भी घृणा या तिरस्कार के योग्य नहीं। समाज रूपी शरीर की स्थापना में सब का भाग बराबर है। यह वर्ण व्यवस्था जाती गुण कर्म स्वभाव पर निर्भर है जन्म के कारण न तो कोई ब्राह्मण हो सकता है और न शूद्र ही, कारण यह है कि सामाजिक जीवन में संस्कारों का विशेष स्थान है। संस्कारों से ही एक शूद्र ब्राह्मण बन जाता है, और एक वैश्य क्षत्री। यदि ब्राह्मण में

अपने वर्ण के अनुसार गुण नहीं तो वह जिस वर्ण के योग्य है उस में गिणा जावेगा, इसी प्रकार क्षत्री, वैश्य और शूद्र भी ऊंचे वर्ण का अधिकारी हो सकता है या नीचे गिर सकता है।

विवाह संस्कार के सम्बन्ध में महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज लिखते हैं कि क्षत्री का क्षत्राणि से, वैश्य का वैश्य स्त्री से और शूद्र का शूद्राणि के साथ विवाह होना उचित है, इस प्रकार ही अपने अपने वर्णों के काम और आपस का प्रेम प्यार ठीक ठीक रहेगा।

चारों वर्णों के कर्त्तव्य और गुणों का वर्णन करते हुए लिखा कि विद्या और धर्म की प्रसारन का काम ब्राह्मणों को देना चाहिये क्योंकि वह पूर्ण विद्वान, योग्य और धार्मिक होते हैं और इसी काम को ठीक ठीक ढङ्ग से चला सकते हैं। क्षत्रियों को राज्य और शासन के प्रबन्ध में लगाने से राज्य में गिरावट नहीं आती। पशु पालन, खेती बाड़ी और व्योपार आदि के काम वैश्य को ही मिलना उचित है क्योंकि वह इस को भली प्रकार कर सकता है। शूद्रों को सेवा और श्रम आदि का काम इस लिये दिया जाता है कि वह विद्या से हीन और अल्प बुद्धि होते हैं इस लिये वह सोच विचार का काम कर ही नहीं सकते।

इस लिये पहला नियम जो विवाह के सम्बन्ध में वेदादि सत्शास्त्र बतलाते हैं वह यह है कि पुरुष अपने वर्ण के अनुसार अच्छे गुणों वाली स्त्री से विवाह करें, जैसे यदि पुरुष में विद्या की रुचि है तो वह ऐसी ही स्त्री की भाल करे। यदि उस का स्वभाव राज्याधिकार के गुणों का सा है तो वह स्त्री भी वैसी ही ढूंडे जो उस को राज कारियों में और युद्धादि में उत्साहित करे। चाहे वह खेती बाड़ी, व्यापार, पशु पालन या उद्योगादि में

रुचि रखता है तो अपना जीवन साथी भी ऐसी स्त्री को बनाए। तात्पर्य यह कि स्त्री पुरुष दोनों एक से गुण रखते हुए एक दूसरे के बराबर के सहायक सिद्ध हो सकते हैं, यदि आपस में स्वभाव न मिलेगा तो वह एक दूसरे के मार्ग का रोड़ा बन जाएंगे। इस समय जितना दुख इस नियम का उलंघन करने और लापरवाही बर्तने से हो रहा है इस को सारे समझदार लोग जानते हैं, आज तो गृहस्थ नर्क धाम बन रहा है।

इस नियम के सम्बन्ध में सिक्ख साहित्य या गुरु बाणी में कोई प्रकाश नहीं डाला गया. क्योंकि दसों गुरू साहिबान के प्रचार का यह विषय ही न था। हां! उन के अपने और उन की सन्तान के विवाह प्रचलित जन्म की जात पात के अनुसार क्षत्री परिवारों में ही हुए। उन के सिक्खों में चाहे सब वर्णों और जातियों के लोग थे। परन्तु लड़कियां तो केवल क्षत्री परिवारों से ही उन को मिलती रहीं और यह अपनी लड़कियों के सम्बन्ध भी क्षत्री वरों के साथ करते रहे, दूसरी जाति वालों के साथ उन का गुरू सिक्खी का सम्बन्ध ही रहा।

इस समय नवीन सिक्खों ने जो रहित नामे और संस्कार विधियां बनाई हैं, उन में यह सिद्धान्त रखा है कि सिक्ख सिक्खों के साथ ही सम्बन्ध आदि करें, इस का फल यह हुआ है कि ब्राह्मण सिक्ख, ब्राह्मण सिक्ख के साथ, क्षत्री, क्षत्रीयों में, अरोड़े; अरोड़ों में अतः अपनी अपनी जाति के सिक्खों में सिक्ख सम्बन्ध करने लगे हैं। पहली जातियां भी बराबर कायम हैं और एक सिक्ख रूपी जाति की सीमा नई स्थापित हो गई है। दूसरे सम्परदाओं या मतों से जो अपने आप को आर्य (हिन्दू) मानते हैं इन का सम्बन्ध टूटता जा रहा है।

इन हालात में इस नियम को गुरू मर्यादा का नाम देना ठीक नहीं क्योंकि इस से देश और जाति में घृणा और फूट फैल गई है जैसा कि रहित नामा भाई दया सिंह में लिखा है कि :-

सिक्ख को सिक्ख पुत्री देई, सुधा सुधा मिल जाए।
छुई भावनी को सुता, अही मुख अमी चुआए॥

अर्थात-सिक्ख वर को सिक्ख लड़की देना ऐसा है जैसे अमृत में अमृत मिल जाना, परन्तु भावनी(हजामत कराने वाले) वर को कन्या देना ऐसा है जैसे सांप के मुंह में अमृत डालना। फिर लिखा कि :—

'केसों की बेअदबी (अपमान) करने वाले महा पातक (हजामत कराने वाले) के साथ पंगत में खान पान, एक आसन पर बैठना, बात चीत, कमी बेशी, लेन देन आदि का सम्बन्ध न रखे, ऐसे पातक का मुंह देखना पापों का फल समझे।

(सार अमर कुण्ड)

विवाह का दूसरा नियम

समीप के सम्बन्धियों में विवाह की मनाही

विवाह की समानता का यह अर्थ न समझ लिया जाए कि विवाह की समीप के सम्बन्धियों में भी आज्ञा है, जैसा कि कुछ मतों और सम्प्रदाओं में चचे, मामे, मासी फुफी की लड़की से विवाह करना उचित माना गया है। मनु जी महाराज ने वेद के आधार पर लिखा है कि जो लड़की माता के परिवार की छः पीढ़ियों से दूर की हो और पिता के गोत्र से न हो उस से विवाह करना उचित है।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज लिखते हैं कि समीप की रिश्तेदारी (सम्बन्ध) में बहुत बुरे परिणाम निकलते हैं इस शास्त्रोक्त आज्ञा के अनुसार दसों गुरु साहिबान ने भी अपने और अपनी सन्तानों के विवाह समीप के सम्बन्धियों में नहीं किये थे। परन्तु नवीन सिक्खों में यह समीप का सम्बन्ध बढ़ रहा है जैसा कि सरगोधा के एक सिक्ख ने अपनी लड़की अपने भतीजे को ब्याह दी थी और एक सिक्ख ने अपनी पहली स्त्री से पैदा लड़की का विवाह जिस वर के साथ किया था, उस की सगी बहन से अपना विवाह कराया था, अथवा उस की लड़की का पति उस का साला भी था और दामाद भी। इस प्रकार फूफी और मामूं की लड़की या लड़के का आपस में विवाह करने की प्रथा आम होती जा रही है, और यह सब कुछ गुरू ग्रन्थ साहिब की हजूरी में अथवा सामने गुरु मर्यादा के नाम पर आनन्द कारज के रूप में किया जाता है. चूंकि इस सम्बन्ध में गुरु बाणी में सिद्धान्त रूप में कोई वर्णन नहीं और गुरुओं ने स्वयं भी समीप के सम्बन्धियों में विवाह नहीं किये, इस लिये समीप के सम्बन्धियों में विवाह करना मन मर्यादा है गुरु मर्यादा नहीं।

विवाह का तीसरा नियम

अच्छे परिवारों में विवाह की आज्ञा

विवाह करने में लड़की और लड़के के परिवार का ध्यान रखना भी आवश्यक है क्योंकि कुछ ऐसी बुराईयां और रोग हैं जो छूट अथवा संगदोष से पैदा होती हैं जिन के कारण सन्तान का रोगी और दुराचारी हो जाने का बड़ा भय रहता है। मनु

जो महाराज के वचननुसार, कोई परिवार चाहे कितना ही धनवान, सम्पत्ति शाली अधिकारी क्यों न हो तो भी नीचे लिखे परिवारों को विवाह के लिये छोड़ देना चाहिये।

एक वह जिन में आत्मिक बुराईयां हों अर्थात पहला वह परिवार जो ईश्वर भक्ति और शुभ कर्म न करते हों, दूसरा जिन में शारीरिक बीमारियां, जैसा कि जिन के शरीर पर रीछों के प्रकार बड़े बड़े बाल, जिन में बवासीर तपदिक; दमा, मिर्गी, कोढ़ और आत्मिक आदि छूत की बीमारियां हों। क्योंकि ऐसे रोग नसल दर नसल चलते हैं ऐसे परिवारों में विवाह करने की मनाही है अर्थात वर्जित है।

लिखे पढ़े समझदार सिक्ख इस सिद्धान्त को मानते हैं परन्तु मैकालिफ साहिब के सिक्ख इतिहास में लिखा है कि प्रेमा नामी एक सिक्ख लड़का था जो अनाथ हो गया, सम्बन्धियों ने सम्पत्ति हड़प कर ली, उस को कोढ़ का भयंकर रोग हो गया हाथ पांव गल गए, लहू और पीप बहने लगी, मक्खियां डङ्क मार मार कर तंग करने लगी। गुरु अमर दास जी ने उस का विवाह अपने एक सिक्ख की लड़की से करा दिया, लड़की की माता ने बहुत एतराज़ किया। कहते हैं गुरु कृपा से उस का कोढ़ अच्छा हो गया। कुछ भी हो ऐसे बेजोड़ विवाह गुरु मर्यादा कहलाने के अधिकारी नहीं।

विवाह का चौथा नियम

विवाह के योग्य आयु

इस प्रश्न के उत्तर में कि विवाह कितनी आयु में होना उचित है महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज वेदादि सत्शास्त्रों के आधार पर लिखते हैं कि सोहलवें वर्ष से चौबीसवें वर्ष की

आयु तक लड़की का और पचीसवें वर्ष से लेकर अड़तालीसवें वर्ष की आयु तक लड़के का विवाह होना चाहिये। इस की व्याख्या इस प्रकार की है कि सोलह वर्ष की कन्या और पच्चीस वर्ष के लड़के का विवाह घटिया, अठारह वर्ष की लड़की और छत्तीस वर्ष के लड़के का विवाह मध्यम, चौबीस वर्ष की लड़की और अड़तालीस वर्ष के लड़के का विवाप उत्तम है। और यह दाअवा किया जाता है कि वेदोक्त ऋषियों ने जो विवाह का समय बतलाया है ऐसा उत्तम और लाभदायक सिद्धान्त किसी भी पन्थ के बानी ने वर्णन नहीं किया। अमेरिका और योरुप के सभ्य परिवारों में इस आयु में विवाह होने लगे हैं परन्तु वह किसी पन्थक या धार्मिक आदेश का परिणाम नहीं, बल्कि विद्या और तर्जुबा के आधार पर वह ऐसा करने लगे हैं। महर्षि दयानन्द जी से पहले भारत में बाल विवाह की प्रथा आम थी, ऋषि दयानन्द जी ही एक ऐसे वीर नेता और सच्चे सुधारक निकले, जिन्हों ने ऐसी सब खराबियों की जड़ काटने का यत्न किया। महर्षि लिखते हैं कि जिस देश में इस प्रकार के शास्त्रोक्त विवाह की पवित्र प्रथा है और जो लोग ब्रह्मचर्य की महिमा को जानते हैं वह देश सदा खुशहाल रहता है परन्तु जो लोग ब्रह्मचर्य के पालन और विद्या की प्राप्ति से शून्य हैं और जिन में बाल विवाह होता है वह देश दुखों में डूब जाता है, क्योंकि ब्रह्मचर्य पालन और विद्या की प्राप्ति के बाद विवाह का करना सुधार है, ऐसा करने से सब बातों का सुधार और इस के बिगड़ने से बिगाड़ हो जाता है। ऋषि की कृपा से आज देश के नेता और जिखे पढ़े लोग बाल विवाह को बुरा मानने लग गए हैं। श्री हरबिलास जी शारदा ने प्रयत्न करके शारदा ऐक्ट नामी

विधान बनवाया, जिस का तात्पर्य बाल विवाह को रोकना था परन्तु बड़ा बल देने पर भी वह १४ वर्ष की लड़की और १८ वर्ष के लड़के के विवाह का कानून पास करवा सके।

गुरू ग्रन्थ साहिब में इस के सम्बन्ध में कोई शब्द मौजूद नहीं जिस से यह सिद्ध हो सके कि विवाह कौन सी आयु में होना उचित है। गुरुओं के अपने और उन की सन्तानों के विवाहों से पता चलता है कि उन दिनों बाल विवाह का बड़ा ज़ोर था जिस के अन्तर्गत उन के विवाह भी बहुत छोटी आयु में हुए और उन्हों ने स्वयं अपनी सन्तानों के बाल विवाह किये :-

चुनांचि-गुरू नानक देव जी का विवाह १६ वर्ष की आयु में, गुरू अङ्गद देव जी का विवाह १५ वर्ष की आयु में, गुरू राम दास जी का १६ वर्ष की आयु में, गुरू अर्जुन देव जी का पहला विवाह १० वर्ष की आयु में, दूसरा १६ वर्ष की आयु में हुआ। गुरू हर गोविन्द जी का पहला सम्बन्ध ८ वर्ष की आयु में हुआ। जो टूट गया फिर पहला विवाह ६ वर्ष की आयु में हुआ इस के पश्चात दो और विवाह हुए। गुरू हर राये जी के सात विवाह इकट्ठे १० वर्ष की आयु में हुए, गुरू तेग बहादुर जी का विवाह सात वर्ष की आयु में और गुरू गोविन्द सिंह जी का पहला विवाह छः वर्ष की आयु में हुआ इस के पश्चात उन के दो विवाह और हुए।

इस से स्पष्ट सिद्ध है कि ज्यूं ज्यूं गुरुओं का प्रभाव और ऐश्वर्य बढ़ता गया त्यूं त्यूं लोगों ने छोटी आयु में ही गुरू पुत्रों को अपनी लड़कियां अर्पण करनी आरम्भ कर दीं। सिक्खों की नवीन संस्कार विधियों में कहीं कहीं यह लिखा मिलता है गुरू मत में बाल विवाह निषेध है। इस लिये गुरू मर्यादा क्या है इस का निर्णय करना कठिन है।

विवाह का पांचवां नियम

(बाहमी रजामन्दी)

इस प्रश्न के उत्तर में कि क्या विवाह लड़की और लड़के की इच्छानुसार होना चाहिये या माता पिता की इच्छा के आधीन। क्या लड़की लड़का जहां चाहें स्वतन्त्र रूप से विवाह कर लें? महर्षि स्वामी दयानन्द जी लिखते हैं कि विवाह लड़की लड़के की इच्छानुसार होना चाहिये, किन्तु यदि माता पिता विवाह करना चाहें तो भी लड़की लड़के की इच्छा का जान लेना और उन का परामर्श ले लेना अति आवश्यक है क्योंकि एक दूसरे की इच्छा (रजामंदी) से विवाह हो तो आपस में नाराजगी तथा फूट (नाचाकी) कम होती है, और सन्तान नेक पैदा होती है। बिना इच्छा के विवाह में सदा कष्ट ही रहता है।

नौजवान आयु में विवाह होने पर साधारणतया लड़की लड़के की इच्छा जानी ही जाती है परन्तु जब छोटे छोटे बच्चों का विवाह कर दिया जाये तो माता पिता के अधिकार अधिक हो जाते हैं वह अपनी मनमानी करके जहां चाहें और जिस के साथ चाहें सन्तान का विवाह कर देते हैं जब लड़की लड़का युवावस्था में हो तो माता पिता पर यह आवश्यक हो जाता है कि बिना उन की रजामंदी के उन का विवाह न करें। यद्यपि विवाह के सम्बन्ध में महर्षि ने लड़की लड़के को स्वतन्त्र कर दिया है और अधिकार उन के हाथ में दे दिया है कि दोनों की आपसी इच्छा न हो तो विवाह कदापि न करें। किन्तु उन की राये कीखूबी यह है कि उस में समता को सामने रखा गया है

विवाह का पूरा अधिकार होने पर भी कुछ बन्दशें लगा दी हैं। उन का कहना है कि नव युवक लडकी लड़का एकान्त में एक दूसरे के साथ कदापि न मिलने पावें ताकि उन को दोष पैदा न हो। इन बन्दशों का अर्थ यह है कि व्यभिचार और अनुचित सन्तान का डर न रहे। ऋषियों ने लड़के लडकी को स्वतन्त्रता दे कर प्राचीन प्रथा अनुसार स्वयंवर विवाह की आज्ञा दी है, जिस का एक विशेष ढङ्ग था कि लड़की वालों की ओर से जो साधारणत्या धनवान सरदार या राज्याधिकारी घरों के होते थे, घोषणा की जाती थी कि अमुक तिथि को उन की लड़की अपने लिये वर चुनेगी, जो युवक अपने आप को योग्य समझे, वह स्वयंबर के उत्सव में पधारे (शामिल हों)। ऐसे स्वयंवरों में कई कई बार कुछ शर्तें भी रखी जाती थीं। जो नव युवक इन को पूरा करता था और जिस को लड़की योग्य समझती थी उस को वर कर उस के गले में जै माला डाला करती थी।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज लिखते हैं कि जब तक इस प्रकार सब ऋषि मुनि, राजा महाराजा, आर्य लोग ब्रह्मचर्य से विद्या पढ़ कर ही स्वयंवर विवाह करते थे तब तक इस देश की सदा उन्नती होती थी, जब से ब्रह्मचर्य व्रत पूरा न होने दिया (२) विद्या न पढ़ने (३) बाल अवस्था में ही माता पिता की इच्छा से विवाह होने लगे। तब से दिन प्रति दिन आर्य वर्त देश नीचे ही गिरता गया। इस लिये इस बुराई को छोड़ कर भले सभ्य और खानदानी लोग उपरोक्त ढंग से स्वयंबर विवाह किया करें

जैसा कि पहले लिखा गया है कि दसों गुरू साहिबान और उन के सन्तान के विवाह छोटी आयु में हुए थे, इस लिये उन लड़की लड़के की आपसी इच्छा का विचार न किया गया था

कई बार तो ऐसा भी हुआ कि लड़की के पैदा होने के पश्चात ही उस के माता पिता ने लड़की को किसी गुरू पुत्र के अर्पण करने का प्रण कर लिया। और गुरू दरबार में पहुंच कर गुरू चरणों में भेंट कर दिया गया या अरदासा सुधा दिया गया, जैसाकि

(१) गुरू अमर दास जी बैठे थे कि उन की धर्म पत्नी ने गुरू जी से अपनी लड़की 'मानी' के लिये वर ढूंडने के लिये कहा। गुरू जी ने पूछा कि वर कैसा हो ? जैठा जी (रामदास) अनाथ थे और गलियों में फिर कर चने बेचा करते थे वह जब सामने से गुजरे तो गुरू पत्नी ने उस की ओर संकेत कर के कहा कि बस कोई ऐसा लड़का होना चाहिये"॥ यह सुन कर गुरू जी बोले कि "जब तुम ने ऐसा ही लड़का कह दिया तो लड़की का सम्बन्ध इस के साथ हो गया" पूछा गया तो लड़का खत्री (सोढी) जाति का था। अतः सम्बन्ध जेठा जी के साथ कर दिया गया जो बाद में गुरु रामदास जी चौथे गुरु कहलाए।

(२) अनूप शहर के दया राम खत्री ने अपनी सातों लड़कियों को गुरु हर राये जी के साथ विवाह दिया था। ज्ञानी प्रताप सिंह जी और दूसरे कई सिक्ख इतिहासकारों के लिखे अनुसार उस समय गुरु जी की आयु केवल दस (१०) वर्ष की थी। इस के साथ ही कोट कल्याणी नाम की दासी भी साथ आई थी जिस में से बाबा राम राये का जन्म हुआ था।

(३) दसम गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज के साथ माता साहिबकौर जी का सम्बन्ध भी ऐसे ही हुआ था कि उस के पिता ने अपनी लड़की को गुरु अर्पण करने का संकल्प कर लिया था।

गुरु बाणी में और सिक्ख संस्कार बिधियों में इस नियम पर

कोई प्रकाश नहीं डाला गया, जैसा भी माता पिता निर्णय कर दें या लड़की लड़के के विवाह का जैसे भी निश्चय हो जाए। गुरु ग्रन्थ के सन्मुख सूही महला ४ की लावां द्वारा विवाह पढ़े जाने का नाम ही गुरु मर्यादा है।

विवाह का छटा नियम

प्रेम सम्बन्ध या कोर्ट फीस वर्जित।

मनु स्मृति में इस प्रकार के विवाह को गन्धर्व विवाह का नाम दिया गया है और इस को नीच विवाहों में गिना गया है। प्रश्न यह उठाया गया है कि जब विवाह में लड़की और लड़के की आपसी इच्छा का होना आवश्यक है तो वह किस प्रकार एक दूसरे को पसन्द करें ? इस के सम्बन्ध में शास्त्रोक्त विधि तो यह है कि लड़की लड़के का विवाह से पहले एकान्त में किसी प्रकार से भी आपस में मेल मिलाप न हो क्योंकि जवानी में स्त्री पुरुष का स्वतन्त्रता से आपस में मिलना खराबी का कारण बन जाता है। और हम देखते हैं कि जिन पश्चिमी देशों में लड़की लड़के एक दूसरे को स्वतन्त्र रूप से पसन्द करते हैं, साधारणत्या विवाह से पहले ही उन का मेल मिलाप और अनुचित प्यार हो जाता है जिस को अनुचित सम्बन्ध या प्रेम भी कहते हैं।

हमारे प्राचीन ऋषियों की अनुमितयां में यह गुण है कि वह किसी भी बात में समता को दृष्टि से परे नहीं करते। ऋषि लोग जानते थे कि वर कन्या की आपसी इच्छा आवश्यक है परन्तु वह इस दूष को भी अनुभव करते थे जिस से नवयुवक का सदाचार बिगड़ जाता है और समाज सदा चरण के वआदर्श से

गिर जाता है। इसी लिये तो महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने लिखा कि जब लड़की वा लड़के के विवाह का समय आए अथवा एक वर्ष वा छः मास ब्रह्मचर्य व्रत पालन और विद्या प्राप्ति में बाकी रहते हों तब उन लड़की और लड़कों के प्रतिबिम्ब जिस को फोटो भी कहते हैं, लड़कियों अध्यापिकाओं के पास भेज दिया जाए। जिन के गुण कर्म स्वभाव आपस में मिल जाएं उन के इतिहास अर्थात जन्म से ले कर उस दिन तक जीवन चरित्र रजिस्टर से गुरु लोग देखें और जिन का आपस में विवाह होना ठीक हो। उन्हें वर कन्या का इतिहास और फोटो एक दूसरे को दिखला दिया जाए और कहा जाए कि यदि तुम्हारी इच्छा हो तो आपस में विवाह कर सकते हो। जब उन का विचार पक्का हो जाए तब उन दोनों का समावर्तन संस्कार एक ही दिन में होना चाहिये। यदि वह दोनों पढ़ाने वाले गुरुओं के सामने उन के आश्रम में विवाह करना चाहें तो वहां ही नहीं तो लड़की के माता पिता के घर में विवाह संस्कार होना सराहणीय है। जब वह उपस्थित हों तो गुरु या लड़की के माता पिता आदि आपस में दोनों का शास्त्रार्थ या बातचीत करा दें। जब दोनों की पूरी रजामंदी हो तब उन के खान पान का पूरा प्रबन्ध कर देना चाहिये आदि आदि।

ऊपर लिखे नियम में दो बातों का पता चलता है वह यह कि वर की खोज और चुनाव को तो गुरु माता, पिता या संरक्षक सपुर्द किया गया है यह अवश्यक कार्य अनुभव शून्य नवयुवकों के हाथ में नहीं दिया गया, जो पाश्विक उत्तेजना या कामासक्ति के आधीन दूरदर्शता को एक ओर रख कर भूल कर बैठते हैं, बल्कि काम वासना के जोश में उन से ऐसा अनुचित व्यवहार हो जाता है कि जिन के लिये आयु भर पछताना पड़ता है। किन्तु कई

माता भी अज्ञानी और स्वार्थी होते हैं। देखा जाता है कि बहुत से माता पिता लोभवश अपनी सन्तान का सम्बन्ध बेजोड़ कर देते हैं कई बार दूध पीती लड़की को बूढ़ा वर दे दिया जाता है और कई बार युवा कन्या को अन्जान बालक के साथ विवाह कर दिया जाता है। साधारणत्या अज्ञान वश ही बाल विवाह कर दिये जाते हैं इस लिये ही वर की खोज तो माता पिता गुरु या संरक्षक के आधीन है परन्तु इस की स्वीकृति वर कन्या के आधीन, कि यदि वह इस सम्बन्ध से प्रसन्न न हों तो उसे अस्वीकार कर सकते हैं परन्तु फिर भी खोज का अधिकार उन का न हो जायेगा, संरक्षक ही फिर दोबारा वर की खोज करेंगे, और वर कन्या की इच्छानुसार से ही विवाह करायेंगे। ऐसा करने से समाज में पश्चमी देशों जैसा दोष पैदा होने का डर नहीं रहता और न ही बेजोड़ विवाह हो कर गृहस्थाश्रम के नर्क धाम बनाने का डर रहता है। शोक है कि आजकल के लिखे पढ़े, पश्चमी देशों का अनुकरण में अनुचित प्रेम विवाह करने लग गए हैं।

जैसा कि हम पहले वर्णन कर चुके हैं कि गुरु ग्रन्थ साहिब का तो यह विषय ही नहीं और स्वयं गुरु साहिबान पौराणिक हिन्दू विचारों के थे। इस कारण उन्हों ने आदेश के रूप में इस नियम पर कोई प्रकाश नहीं डाला। हां! सिक्ख इतिहास से यह पता चलता है कि अन्ध विश्वास और अज्ञानता के कारण श्रद्धालू लोग अपनी लड़कियां गुरु अर्पण कर देते थे या गुरुओं की इच्छा से जहां वह कहते थे सम्बन्ध कर दिया करते थे। इस में लड़की लड़के से कोई परामर्श आदि न लिया जाता था। कई बार नाईयों और ब्राह्मणों के सपुर्द द्वारा ही यह काम कर दिया जाता था जैसा कि दीवान चन्द्र लाल ने अपनी लड़की के सम्बन्ध में किया था, परन्तु अन्त में उस का परिणाम बहुत

खराब निकला था, क्यों कि सिक्खों के कहने पर गुरु अर्जुन देव जी ने यह रिश्ता लेने से इन्कार कर दिया था।

विवाह का सातवां नियम

बहु विवाह वर्जित कसरत अज़ दवाज कौ मनाही

वेदादि सत् शास्त्रों और स्मृति ग्रन्थों में एक पुरुष के लिये एक ही स्त्री की आज्ञा है। इन में स्पष्ट लिखा है कि स्त्री पुरुष एक दूसरे के जीवन (जिन्दगी) में दूसरा विवाह न करें। जहां भी इस नियम का उल्लंघन हुआ वहीं दुख और कलेश पैदा हुआ जैसा कि महाराज दशरथ को।

महर्षि स्वामी दयानन्दजी से जब प्रश्न किया गया तो आपने उत्तर दिया कि एक समय में स्त्री पुरुष का दूसरा विवाह अनुचित है अर्थात द्विजों में पुरुष के जीते जी स्त्री का और स्त्री के जीते पुरुष का दूसरा विवाह न होना चाहिये और न ही उन का पुनर्विवाह या वियोग (तलाक) ही उचित है। हां यदि किसी स्त्री या पुरुष की केवल मंगनी (वागदान) ही हुई हो या विवाह के बाद ही जबकि आपस में मेल न हुआ हो और उन में से एक मर जाए तो अक्षतयोनि होने के कारण पुनर्विवाह हो सकता है

सिख गुरूओं में पहले चार गुरूओं का तो एक ही विवाह हुआ था पांचवें गुरू अर्जुन देव जी के दो विवाह हुए परन्तु पहली स्त्री माता राम देवी जी के मरने के बाद दूसरा विवाह गंगा जी से हुआ था। गुरू हर गोविंद जी के तीन विवाह हुए थे इस के अतिरिक्त दीवान चन्द लाल की लड़की का सम्बन्ध (रिश्ता) छोड़ दिया था। गुरू हर राये जी के सात विवाह हुए थे

और एक कोट कल्यापीर दासी भी साथ आई थी। गुरू हर किशन जी बाल्यावस्था (बचपन) में ही परलोक सिधार गये थे। गुरू तेग बहादुर जी का एक विवाह हुआ था और गुरू गोबिंद सिंह जी के तीन विवाह हुए थे। गुरू हर राये जी के बाबा राम राये के जो कोट कल्यापिर (दासी) के पुत्र थे, के तीन विवाह हुए थे। इस समय यद्यपि सभ्य और लिखे पढ़े सिख एक विवाह को ही अच्छा मानते हैं परन्तु गुरू ग्रन्थ साहिब के सन्मुख एक से अधिक विवाह भी होते देखे गए हैं जिन को गुरू मर्यादा का नाम दिया जाता है।

इस के विपरीत (वरअक्स) वेद मर्यादा इसी का नाम है जो ऊपर लिखे सात नियमों के अनुकूल हो। इस मर्यादा को तोड़ कर जो भी संस्कार होगा वह भले ही ब्राह्मणों द्वारा वेद मन्त्रों का उच्चारण करके कराया जाए, वैदिक संस्कार नहीं कहला सकता।

अब हम कुछ प्रमाण ऐसे उपस्थित करना चाहते हैं जिन से सिद्ध होगा कि दसों गुरू साहिबान के विवाह आदि संस्कार किस रीति से हुए थे और यह भी सिद्ध होगा कि वर्तमान गुरू मर्यादा या नवीन संस्कार सिखों में १९१० ई० के पश्चात ही आरम्भ हुए थे इस पहले सिखों के सब संस्कार प्रचलित पौराणिक हिन्दू रीति से ही हुआ करते थे।

यज्ञोपवीत और मुण्डन संस्कार

(१) गुरू नानक देव जी को जनेऊ पहनाया गया था, सारी बेदी बादरी को निमन्त्रण दिया गया पुरोहित हरदियाल ने संस्कार कराया था। (जन्म साखी)

(२) गुरू नानक देव जी ने विवाह के समय यज्ञोपीवत पहना हुआ था, महाछवी हो रही थी। (नानक प्रकाश अध्याय २२)

(३) जब गुरू जी लाला तरखान के घर गये तो जनेऊ धारण कर रखा था। (जन्म साखी)

(४) सादियां उपल खत्री के पुत्र का मुण्डन संस्कार श्री गुरू अंगद देव जी मे अपने मकान पर अपनी उपस्थित में कराया था। (सुरज प्रकाश उन्सू १८)

(५) गुरु हर गोबिन्द जी ने अपने विवाह पर यज्ञोपवीत धारण किया था। (गुरु बलास पातशाही ६ अध्याय ५)

(६) दशम गुरु गोबिन्द सिंह जी ने अपने सुसराल में यज्ञोपवीत धारण किया था। (यन्त्र प्रकाश पूर्बाध सफा ५२)

(७) सिखों ने प्रार्थना की, सच्चे पातशाह। (गुरु गोबिन्द सिंह जी) हम जनेऊ पहनने के समय पुत्र का मदन (मण्डन) कराया करते थे, अब जैसे आज्ञा हो करें। आज्ञा और हस्ताक्षर हुए कि सहज धारी के पुत्र की कैन्ची से रीति करो। केश धारी को केशी स्नान कराओ जनेऊ पहनने के समय।

इस से सिद्ध है कि जनेऊ तो सब सिखों और सेवकों के लिये और मुण्डन की केवल सहज धारियों के लिये आज्ञा दी गई है। यह प्रमाण "भगत रत्नावलि" भाई मनी सिंह; "वाजबुलअर्ज" और पं० तारा सिंह की पुस्तक "गुरु मत निर्णय सागर" में विद्यमान है।

(८) गुरु गोबिन्द सिंह जी की सेवा में सिखों का प्रश्न—— आगे राज दरबार में जाने वाले कैंची से कटवा कर दाढ़ी के बाल

बराबर रखते थे अब जो आज्ञा होवे सो करें। आज्ञा हुई कि सहजधारी बाल बराबर कर लिया करे।

(६) भाई राम कौर को दसम गुरु गोबिन्द सिंह जी ने प्रसन्न हो कर हाथी पर बिठा लिया तो एक सिख ने कहा सच्चे पादशाह! बावे बुढे के तो आप के सच्चे सिख थे उन को (भाई राम कौर को) पांच ककका का उपदेश क्यों नहीं करते? तो आप ने आदेश दिया कि "भाई ओंहां दे अन्दर केस है तुम्हारे बाहर को बढ़े हैं।

नोट—उस संस्कार के सम्बन्ध में और देखना हो तो सिख गुरु और यज्ञोपवीत प्रसंग इसी पुस्तक में पढ़िये।

विवाह संस्कार

(१) गुरु नानक देव जी का विवाह माता सुलखनी जी के साथ प्रचलित शास्त्रोक्त रीति से हुआ जिसमें हवन और लावां और गणेश पूजा की रीति हुई थी। (जन्म साखी)

(२) नानक प्रकाश अध्याय २२ में लिखा है कि बहुत से ब्राह्मणों ने मिलकर बेदी राज गुरुनानक देव जी का विवाह शास्त्र रीति से कराया था

(३) गुरु हरगोबिंद जी के विवाह पर:- (सूरज प्रकाश राज चार अन्सू १२)

सरदार सगरे करे बिठावन, जहूँ दिस वेद के थल पावन।
बिप्त उचार करन सब लागे, पूजत नव ग्रह गणपति आगे।

अर्थात:- ब्राह्मणों ने सब सरदारों के सामने शास्त्र विधि से नव ग्रह और गणेश का पूजन का विवाह संस्कार करवाया था।

(४) गुरु हर गोबिन्द जी की सपुत्री का विवाह।
(सूरज प्रकाश रास ६)

गणपति नवग्रह को उपजाए, अग्नि कर अभी सेच मिली आए।
इम कर लगे करन सू काजा, फेरे फेरन कीर समाजा।
द्विज आज्ञा ते कन्या आनी, वेदी विखे बिठावन ठानी।
वैदिक लौकिक केनस रीत, लावां दई मुदत सब चीत।

अर्थात—नवग्रह और गणेश की पूजा की गई। कन्या को वेदी पर बिठाया गया, ब्राह्मणों ने वेद और लौकिक रीति से प्रसन्न हो कर लावां दी।

(५) गुरु तेग बहादुर जी के विवाह पर:—
(गुरु बलास अध्याय २०)

दोहरा—लिये मुखी तब श्री गुरु, तेह छिन केनन बयान।
सुन्दर वेदी जेह रची, तेह बैठे भगवान॥

चौपाई-खारे पर दोलहो छवी छावे, विप्र सिल सुर पूज करावे।
कन्या आई बैठी जो खारे, दास कवि जाए बलहारे॥

अर्थात—बरादरी के मुख्या आदमियों को ले कर वहां गए जहां सुन्दर वेदी बनाई गई थी। गुरु तेग बहादुर को खारों पर बिठाया गया, खूब छवी हो रही थी ब्राह्मण लोग देव पूजन करवाने लगे कन्या को खारों पर बिठला कर विवाह हुआ।

(६) विवाह दसम गुरु गोबिन्द सिंह जी।
(पंथ प्रकाश पूर्वार्ध विश्राम ४२)

लावां लगन विलोक विप्र वर, हर जस प्रति बतलायो।
फेरे देन हेत कर तय्यारी, गुरु दोलहो को बुलाईयों।
वेदी बेद विधि पुत वर दूलो विश्करमां सठ ठाठ भये।
नव ग्रह सफल होन हेत, द्विज बन हरजस के ग्रह आये गये

अर्थात-लावां का लग्न देख कर पुरोहित ने हरजस को बतलाया फेरों की तय्यारी कर के गुरू गोबिन्द सिंह जी दूलहा को बुलवाया गया। वेद विधि अनुसार वेदी विश्वकर्मा ने तय्यार की, नवग्रह और शास्त्र रीति को सफल करने के लिये आप भगवान ब्राह्मण बन कर हरजस के घर आ गए।

इन प्रमाणों से साफ सिद्ध है कि दसों गुरु अर्थात गुरु नानकदेव जी से लेकर गुरु गोबिन्द सिंह जी तक के विवाह आदि सब संस्कार प्रचलित शास्त्रों की रीति, जैसा कि उस समय हिन्दुओं में प्रचलित थी, के अनुसार ब्राह्मणों द्वारा कराये गए। इस के पश्चात भी सिखों में इसी रीति से संस्कार होते आए थे। परन्तु मैकालिफ साहिब की फूट की नीति के प्रचार के बाद १९१० से नवीन सिखों ने गुरू मर्यादा के नाम से संस्कार कराने आरम्भ किये। पहले पहल तो इन की प्रथा कम रही फिर १९१४ में चीफ खालसा दीवान ने एक प्रमाणिक संस्कार भाग पुस्तक छपवाई जो कम से कम सवा सौ सिख विद्वानों की कमेटी बना कर उन की सम्मति से लिखी गई थी। इसके छप जाने के बाद इस नये ढंग से संस्कारों की प्रथा चली और आनन्द कारज विवाह बिल पास करवाया गया। इस के पश्चात अकालियों ने भी एक संस्कार विधि प्रकाशत की।

आशा है कि सत्यवादी सज्जन वेदोक्त सोलह संस्कारों की खूबियों को देख कर इसी प्राचीन प्रणाली को अपनाएगे। इस में ही उनका और उनकी आने वाली सन्तान का भला है।

ओ३म्

स्त्री जाति

आर्य समाज के प्रचार से पहले स्त्रियों को शूद्र के समान अर्थात शूद्रा माना जाता था। इन को विद्या पढ़ने का अधिकार न था, ऋषिवर दयानन्द जी ने वेद के आधार पर इनको वेदों तक पढ़ने का अधिकार दिया जिसका फल यह है कि आज देश के सब मतों ने स्त्रियों को पढ़ाना आरम्भ कर दिया है।

इनको सिख पन्थ में पहले चरण धाल दी जाती थी, खन्डे की पाहुल का अधिकार न था, अब इनको भी खन्डे का अमृत छकाया जाने लगा है। सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है:—

प्रश्न—क्या स्त्री और शूद्र भी वेद पढ़े? जो यह पढ़ेंगी तो फिर हम क्या करेंगे? और इन के पढ़ने में प्रमाण भी नहीं है जैसाकि

स्त्री शूद्रो नाधीयतामिति श्रुतेः ॥

अर्थात—स्त्री और शूद्र न पढ़ें, यह श्रुति है।

उत्तर—सब स्त्री और पुरुष अर्थात मनुष्य मात्र को वेद पढ़ने का अधिकार है, तुम कुआ में पड़ो, और यह श्रुति तुम्हारी कपोल कल्पना से हुई है। किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं। और सब मनुष्यों के वेदादि शास्त्र पढ़ने सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के २६ अध्याय के दूसरे मन्त्र में है और मनु महाराज जी ने भी लिखा है कि:—

पिता, भाई, पति और देवर इन को सत्कार पूर्वक भूषणादि से प्रसन्न रखे, जिनको बहुत कल्याण की इच्छा हो, वे ऐसे करें जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है, उस में विद्या-युक्त पुरुष हो के देव संज्ञा धरा के आनन्द से क्रीड़ा करते है और जिस घर में स्त्रियों का सत्कार नहीं होता वहां सब क्रिया निष्फल हो जाती है। जिस घर वा कुल में स्त्री लोग शोकातुर होकर दुःख पातीं हैं वह कुल शीघ्र नष्ट भ्रष्ट हो जाता है और जिस घर व कुल में स्त्री लोग आनन्द से उत्साह और प्रसन्नता से भरी हुई रहती है वह कुल सर्वदा बढ़ती रहती है।

इसलिए ऐश्वर्य की कामना करने हारे मनुष्यों को योग्य है कि सत्कार और उत्सव के समयों में भूषण, वस्त्र भोजनादि से स्त्रियों का नित्य प्रति सत्कार करें। (सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ५८)

फिर मनु जी के प्रमाण से लिखा कि:—

जिस कुल में भार्या से भर्ता और पति से पत्नी अच्छे प्रकार प्रसन्न रहती है, उसी कुल में सब सौभाग्य और ऐश्वर्य निवास करते हैं। जहां कलह होता है वहां दौर्भाग्य और दारिद्र्यस्थिर होता है।

जो स्त्री पति से प्रीति और पति को प्रसन्न नहीं करती तो पति को अप्रसन्न होने से काम उत्पन्न नहीं होता। जिस स्त्री की प्रसन्नता में सब कुछ प्रसन्न होता उसकी अप्रसन्नता में अप्रसन्न अर्थात दुःखदायक हो जाता है!

स्त्री का कर्तव्य

स्त्री को योग्य है कि अति-प्रसन्नता से घर के कामों में चतुराई युक्त सब पदार्थों के उत्तम संस्कार तथा घर को शुद्ध रखे और व्यय में अत्यन्त उदार न रहे, अर्थात यथा योग्य खर्च करे

और सब चीजें पवित्र और पाक इस प्रकार बनावे, जो औषधि रूप होकर शरीर व आत्मा में रोग न आने देवे, जो जो व्यय हो उस का हिसाब यथावत रखे, पति आदि को सुना दिया करे। घर के नौकरों चाकरों से यथा योग्य काम लेवे, घर के किसी काम को बिगड़ने न देवे। (सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ५८)

गुरु ग्रन्थ साहिब में श्री गुरु नानक देव जी ने लिखा है, स्त्री की निन्दा नहीं करनी चाहिए। यथा—

भंडि जमीऐ, भंडि निमिऐ, भंडि मंगण वीआहु।
भंडहु होवै दोसती, भंडहु चलै राहु।
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवे बंधान।
सो क्यों मन्दा आखीऐ जितु जंमहि राजान।
भंडहु ही भन्ड ऊपजै भन्डै बाझु न कोई।
नानक भन्डै बाहरा एको सचा सोई।

(आसा दी वार महला १)

स० ब० मोहन सिंह रईस रावल पिंडी ने इस का अर्थ किया है कि:—

स्त्री से उत्पति होती है, स्त्री के गर्भ में बच्चे का आगमन होता है, स्त्रियों से ही मंगनी और विवाह होते हैं, स्त्रियों से ही प्रेम होता है, स्त्रियों से जगत का रिश्ता चलता है, स्त्री के मरने पर और की तलाश होती है, स्त्री से ही भाईचारे और सम्बन्ध होते हैं, उस को बुरा क्यों कहें जबकि राजे भी इसी से ही पैदा होते हैं। स्त्रियों को बुरा कहने वाले भी स्त्रियों से ही पैदा होते हैं, स्त्रियों के बिना कोई है ही नहीं। स्त्री रहित तो केवल एक परमात्मा ही है।

गुरु वाणी के पाठक जानते हैं कि गुरु नानकदेव जी महला १, गुरु अंगद देव जी महला २, गुरु अमर दास जी महला ३, गुरु राम दास जी महला ४, गुरु अर्जुन देव जी महला ५, गुरु तेग बहादुर जी महला ९, लिखे और बोले जाते हैं। यह इस लिये कि महला या महल का अर्थ है स्त्री; अर्थात सखी भाव की भावना से ही वाणी रचना करके गुरुओं ने अपने आप को परमात्मा का महल लिखा है, इस प्रकार जब गुरुओं ने अपने आप को स्त्री भाव में प्रगट किया। तब स्त्री को निन्दनीय कैसे कहा जा सकता है।

हां जिन चार गुरुओं ने एक से अधिक विवाह किये और पहली स्त्रियों के जीते जी किये उन्होंने स्त्री जाति का अपमान ही किया है। सातवें गुरु हर राय जी ने तो एक ही समय सात विवाह किये थे और कोट कल्याणी नाम की दासी से बाबा राम राय को जन्म दिया था।

दशम ग्रन्थ में दशम गुरू के नाम से स्त्रियों में ४०४ दोष या दुराचरण लिखे हैं। जो बहुत ही अशलील हैं। हमारा दावा है कि यह दशम गुरू जैसे महा पुरुष की लेखनी से नहीं लिखे गए, परन्तु हमारे सिख भाई इन सब को उन्हीं का लिखा मानते हैं जिस से उन के नाम पर दोष आता है। दशम गुरू तो इतने सदाचारी और परस्त्री का मान करने वाले थे कि जब रूपकौर नामी एक स्त्री ने उन के सामने अपना बुरा विचार रखा तो आपने साफ कहा कि मेरे पिता जी की यह शिक्षा है कि तुम परस्त्री को बुरी दृष्टि से कभी न देखना बल्कि आज्ञा दी है कि :-

निज नारी संग नेह पुत्र तुम सदा बढ़ीयों।
पर नारी की सेज कभी सुपनेहु न जइयों॥

इतिहास साक्षी है कि उन्हों ने मुसलमान शत्रुओं की बहु बेटियों को जो उन के हाथ युद्ध में आईं, बड़ी इज्ज़त के साथ वापिस किया और अपने सिक्खों को भी रोका कि हम ने पन्थ को ऊंचा ले जाना है, अतः हम मुसलमानों की बुरी बातों का अनुकरण नहीं कर सकते और न पाप के ढङ्ग से बदला ले सकते हैं।

पांच ककार या भेष

मनु जी महाराज ने लिखा है कि —

"नालिंगम धर्म कारणम्।"

अर्थात बाहर के चिह्न या मज़हबी निशान किसी को धर्मात्मा नहीं बनाते। धर्माधर्म का सम्बन्ध वेष या बाहर की बनावट से नहीं है। आत्मा से है। अतः वेष पर विशेष बल देने की ज़रूरत नहीं। सत्य, न्याय, क्षमादि गुणों पर बल देना चाहिए। अर्थात मनुष्य का जीवन सादा और विचार ऊंचे होने चाहिए।

ऋषि वर दयानन्द जी ने लिखा कि साधू सन्यासी सब प्राणियों में पक्षपात रहित हो कर स्वयं धर्मात्मा बनने और दूसरों को धर्मात्मा बनाने में प्रयत्न किया करें और यह अपने मन में निश्चित जानें कि दण्ड; कमण्डलु और काषाय (भगवे) वस्त्र आदि चिह्न धारण करना धर्म का कारण नहीं है, सब मनुष्य आदि प्राणियों को सत्योपदेश और विद्या दान से उन्नत करना सन्यासी का मुख्य कर्म है। (सत्यार्थ प्रकाश पृष्ट ८०)

ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी और सन्यासियों को योग्य है कि प्रयत्न से दस लक्षण युक्त धर्म का सेवन करें, अर्थात धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रय निग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध लक्षण युक्त पक्षपात रहित न्यायाचरण धर्म का सेवन चारों आश्रम (मनुष्य मात्र) करें। और इसी वेदोक्त धर्म ही में आप चलना और दूसरों को चलाना सन्यासियों का विशेष धर्म है। (सत्यार्थ प्रकाश पृष्ट ८१) इस पुस्तक (सत्यार्थ प्रकाश) में इसी प्रकार पाखंड का खन्डन और सत्य का प्रकाश किया है। सत्य के अभिलाषी को स्वयं पढ़ने का यत्न करना चाहिए।

इस विषय में गुरू ग्रन्थ जी के निम्न प्रमाण हैं :—

(१) भसम चढ़ाई करे पाखन्ड, माइया मोह सहे जम डंडु।
(राम कली म० १)

(२) भगवै वेसि भ्रमे मुक्ति न होई (बसन्त म० ३)

(३) अंतर मल निरमल नही कीना, बाहर भेख उदासी।
हृदय कमल घट ब्रह्म न चीना, काहे भइया सन्यासी
अर्थ स्पष्ट है (राग गुजरी त्रिलोचन)

(४) कबीर प्रीति इक सियों किये आन दुबिधा जाए,
भावें लांबें केस कर, भावें घररि मुंडाए (श्लोक कबीर)
अर्थात एक परमात्मा की उपासना करने से मन की दुविधा मिट जाती है, फिर चाहे कोई केश बढ़ा ले या मुन्डन करा ले।

दशम गुरू जी के कुछ शब्द इस प्रकार हैं

(१) भेख दिखाए जगत को लोगन को वस कीन।
अन्त काल काति कटियो वास नरक में लीन॥
[विचित्र नाटक]

(२) स्वांगन में परमेसर नाहीं। खोज फिरे सभ ही के काही
अपनो मन करमो जिहु आना, पार ब्रह्म को तिनी पछाना
[विचित्र नाटक]

अर्थात-जो ऊपर का भेष बना जगत को ठगते और साधारण लोगों को वश में कर मौज उड़ाते हैं अन्त में न्यायकारी परमात्मा के दण्ड से वह पाखण्डी नरक गामी होंगे।

बहुरुपिये की भांति स्वांग बनाने से ईश्वर प्राप्ति नहीं होती जिन भक्तों ने अपने मन को वश में कर लिया पारब्रह्म परमात्मा को उन्हों ने ही पहचान लिया।

(३) देस फिरओ कर वेश तपोधन;
केश धरे न मिले हरि प्यारे (अकाल उसतत)

इसका अर्थ करते हुए स० ब० भाई काहन सिंह जी नाभा वाले गुरुमत सुधाकर नामी पुस्तक में लिखते है कि यहां गुरु साहिब का भाव यह है कि केवल चिह्न परमात्मा की प्राप्ति का कारण नहीं अर्थात् केशों के धारण करने से हरि नहीं मिलता। चाहे कोई तपस्वी का भेष धार देश देशान्त्रों में फिरता रहे। भाई गुरुदास जी ने लिखा कि:—

वाल वधाइये पाइये बड़ जटां पलासी

अर्थात—यदि बाल या केश बढ़ाने मात्र से प्रभु मिले तो बड़ वृक्ष को जिसकी जटाऐं बहुत लम्बी हैं सब से पहले मिलना चाहिए।

इस सिद्धान्त पर सिख रहित नामों में निम्न प्रकार से लिखा है कि :-

(१) जो केश पाहुल (आचरण) बिना रखे सो वह भांड

भगितया (रासधारी या बहुरूपिया) जानना।

(रहतनामा चोपा सिंह)

(२) वेद रहित जिम द्विज न सुहावत,
शील रहित कुल नारि न भावत।
वेग रहित जिम वाजी हीन,
रहित बिना तिम केश मलीन।
ज्यों काहु ले गधा नवहायो,
फूल माल तुहे मुन्ड धरायओं।
तह कर ताकी शोभा नाहीं,
हांसी योग्य होए जग नाहीं।
तिम कुहितये केस रखियें,
कहो सो कैसे शोभा पाये।
रहित सु केशन को अति भूषण,
रहित बिना सिर केश भी दूषण॥

(रहत नामा देसा सिंह)

अर्थात--जैसे वेदों को पढ़े पढ़ाए बिना ब्राह्मण की शोभा नहीं, सदाचार के बिना जैसे कुलवन्ती नारी नहीं भाती, सुन्दर तेज चाल के बिना जैसे घोड़ा अच्छा नहीं लगता, ऐसे ही शुद्ध चलन के बिना केश मैले हैं।

जैसे किसी ने गधे को नहला कर, फूल माला गले में डाल कर सजाया हो तो भी उस को देखकर लोग हंसी उड़ायेंगे। ऐसे ही दुराचारी सिख सिर पर केश बढ़ा ले तो वह शोभा नहीं सकता, क्योंकि सदाचार ही भूषण और दुराचार ही दूषण है।

(३) कुठा हुक्का चरस तम्बाकू, गांजा टोपी ताड़ी खाकू ।
इन की ओर न कबहूँ देखे, रहत बन्त जो सिंह विशेषे ॥
(रहत नामा देसा सिंह)

अर्थात-मांस, शराब आदि सब नशे पाप कर्म हैं, सदाचारी सिख इन की ओर देखे भी नहीं ।

४) कबीर जी का गुरु ग्रन्थ में एक शब्द है । जिस में वह अपनी धर्मपत्नी को समझा रहे है कि :—

सुन अन्धली लोई बेपीर,
इन मुण्डिअन भज शरण कबीर ।

अर्थात-हे अज्ञानी लोई ! इन मोने सन्त की शरण कल्याण कारी है इन के सतसंग में जा इन का उपदेश सुन शिक्षा, मान और सेवा कर के लाभ उठा ।

भाई जोध सिंह जी एम०ए० गुरुमत निर्णय पुस्तक में लिखते है कि केवल सिर मुन्डाना छोड़ देने से कोई मनुष्य खालसा नहीं बनता, जब तक कि उसका आचरण शुद्ध न हो ।

इस से सिद्ध है कि पांच ककार मुक्ति के या धर्म के साधन नहीं यदि होते तो आज जेलों में केश धारियों की संख्या अधिक न होती । भगवान सब को सुबद्धि दें ।

(नानक पन्थ और सत्यार्थ प्र

सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में ऋषि दयानन्दजी ने नानक पन्थ पर जो कुछ लिखा है इसपर सिख सज्जनों की कुछ

शंकाएं हैं इन पर विचार करना है, आशा है कि पाठक ध्यानपूर्वक पढ़ेंगे-

शंका-स्वामी दयानन्द जी ने गुरु नानक देव जी पर मिथ्या दोष लगाया है कि वह विद्या कुछ न पढ़े थे।

समाधान-स्वामी जी ने लिखा है कि नानक जी का आशय अच्छा था परन्तु वह ग्रामों की भाषा जानते थे। वेदादि शास्त्र और संस्कृत नहीं पढ़े थे।

पाठक गण! इस बात को सारे लिखे पढ़े और विशेष सिख इतिहासकार जानते और मानते हैं कि उस समय देश की क्या अवस्था थी। चुनांचि ज्ञानी प्रतापसिंह जी गुरुमत लैकचर नामी पुस्तक में लिखते हैं कि "इस समय हिन्दु दिमाग में भिन्न भिन्न विचारों और मतों के मत भेद का संगम हो रहा था; साधारण जनता घोर अन्धकार में फंसी हुई थी। नामधारी सिद्ध पहाड़ों में छिपे थे। वाम मार्ग में भैरवी चक्कर चल रहा था। गुरुडम पीर प्रस्थी और पाखन्ड का जोर था। जब किसी जाति की मानसिक अवस्था इतनी बिखरी हुई हो तो वह उन्नति क्या कर सकती है? यह तो हिन्दुओं की धार्मिक अवस्था थी; जात पात के बन्धनों ने सामाजिक जीवन कमजोर कर दिया था, इस के साथ ही देश पर विदेशी जातियों के आक्रमण ने राजनैतिक जीवन को भी क्षीण कर दिया था। मुसलमान बादशाह लगातार हमले कर रहे थे। उन में जत्थे बन्दी थी। तलवार और मजहब जोशके साथ२ सूफी फकीर भी अपने मत का प्रचार कर रहे थे उस समय पन्जाब में एकता न थी। विद्या, साहित्य, हुनर और व्योपार जो किसी जीवत जाति की निशानी हो सकते हैं पन्जाब में नहीं थे, इसका कारण नित्य की मार धाड़ और हमले ही थे

उस समय हमले पश्चिम से हो रहे थे जिनका सारा जोर पन्जाब पर पड़ता था। यह भारत का द्वार पायदान की भांति था। जो भी आता इस पर पांव झाड़ कर गुजरता। जहां नित्य तूफान चलते हों वहां कोई पक्षी भी कैसे घौंसला बना सकता और आराम से रह सकता है। गुरु नानक काल में इस अभागे पंजाब के कानों में या तो शत्रु के आने पर उन के घोड़ों की टापों, तीरों तलवारों की झंकार सुनाई देती थी या वापस जाने पर अबलाओं और अबोध बच्चों के रोने धोने की पुकार। (गुरुमत लैकचर)

ऋषि दयानन्द जी ने भी लिखा कि जिस समय नानक जी पन्जाब में हुए थे, उस समय पन्जाब संस्कृत विद्या से सर्वथा रहित मुसलमानों से पीड़ित था। उस समय उन्हों (गुरु नानक देव जी) ने कुछ लोगों को बचाया।

यही कारण था कि गुरु नानक देव जी भी संस्कृत विद्या प्राप्त न कर सके।

पंजाब गजटियर (सरकारी) के पृष्ठ १३३-१३४ पर लिखा है कि सिख राज्य काल में पढ़ने पढ़ाने का काम पूरी तरह मुसलमानों के हाथ में था, वह मसजिदों में कुरान की शिक्षा के साथ फारसी भी पढ़ाते थे अंग्रेजी राज्य में इन ही स्कूलों पर वर्तमान शिक्षा का जोड़ लगाया गया।

जन्म साखी भाई बाला में लिखा है कि जिस समय नानक जी कोई काम काज करने को अपने बहनोई जयराम जी के हां गए तो उस ने पूछा, कि नानक जी! आप कुछ तुर्की फारसी भी पढ़े हो, तो नानक जी ने कहा कि मैं तो केवल हिन्दगी(महाजनी लन्डे) पढ़ा हूँ। इस पर जयराम जी ने नानक जी को दौलतखान लोधी के मोदी खाने में काम पर लगवा दिया।

जिस समय गुरु अंगद देव जी ने भाई बाला और लाला मन्नु को गुरु नानक देव जी की जन्मपत्री लाने के लिये उन के चाचा मैहता लालू के पास भेजा। जन्म पत्री आ गई तो सारे इलाके में उस के पढ़ने वाला कोई न मिला, बड़ी खोज के बाद मुलतान पुर से पैड़ा मोखा खत्री को बुलाया गया, तब जन्मपत्री पढ़ी गई। (जन्म साखी

गुरु अंगद देव जी ने पंजाब में शास्त्री विद्या न होने और लोगों की मोटी बुद्धि होने के कारण गुरुमुखी अक्षर चलाए थे।

(जन्म साखी)

अतः ऋषि दयानन्द जी ने गुरु नानक देव जी के संस्कृत विद्या न जानने के बारे में लिखा है वह सत्य है। कोई दोष नहीं लगाया।

शंका स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि (१) वेद पढ़त ब्रह्मा मरे (२) चारों वेद कहानी। यह दोनों शब्द गुरु ग्रन्थ में सत्यार्थ नहीं हैं। स्वामी जी ने मन घड़न्त लिख दिये हैं।

समाधान-यह ठीक है कि यह दोनों शब्द गुरु ग्रन्थ में नहीं, परन्तु इस से भी कठोर शब्द हैं। अर्थात पाठ भेद है भाव भेद नहीं। जैसा कि :-

(१) सनक सनन्दन अंत न पाया,
वेद पढे पढ़ ब्रहमे जन्म गवाया राग आसा कबीर)

अर्थात-स्वामी जी के लिखे "मरे" शब्द से गुरु ग्रन्थ में लिखा, "जन्म गवाया' शब्द "अति कठोर है।

(२) चारों वेद कहानी के स्थान पर गुरु ग्रन्थ में

"वेद कितेब इफतरा भाई दिल का फिकर न जाई"

(तिलंग कबीर) शब्द है।

अर्थात्-कहानी से इफतरा शब्द अधिक कठोर है

भाई काहन सिंह जी नाभा वाले ने इफतरा का अर्थ कपोल कल्पना किया है। (गुरुमत प्रभाकर पृष्ठ ६४८)

पं० तारा सिंह जी ने लिखा कि अफतरा = बहुतान; बहुकावा अर्थात मामादि चारों वेद और अंजील आदि किताबा परस्पर विरुद्ध वचनों से संदेह उत्पन्न करने वाली हैं, जाते पूरे गुरु के उपदेश बिना इन से चित का संदेह जाना कठिन है।

(गुरु गिरार्थ कोष पृष्ठ ११६)

लुगात सईदी में इफतरा = बहुतान अर्थ दिया है।

इन प्रमाणों से सिद्ध है कि स्वामी दयानन्द जी ने जो कुछ लिखा उस में भाव भेद भी बड़े नरम शब्दों में लिखा है। बाकी रहा पाठ भेद वह तो गुरु ग्रन्थ साहिब में भी अनेक जगह है। जैसा कि:-

(१) गैंडा मार होम जग किये देवतियां की बाण ए।

राग मलार वार म० १)

अर्थात-देवताओं का स्वभाव है कि वह गैंडा मार कर हवन करते हैं।

हमारा दावा है कि किसी भी हिन्दु ग्रन्थ में चाहे वह किसी मत के हों गैंडे का यज्ञ नहीं लिखा।

(२) प्रहलाद के पिता का नाम गुरुग्रन्थ में अनेकों बार हरनाखसु या हरनाखस आया है। जबकि प्रहलाद का पिता हिरण्यकश्यपु था। अब रही यह बात कि पाठों को दोनों ओर से ठीक कर दिया जावे। सो लेख बदलने का लेखक के सिवा किसी को अधिकार नहीं। हां आर्य समाज तो सत्यार्थ प्रकाश के नीचे टिप्पणी में इस को ठीक कर भी सकता है और स्वामी वेदानन्द जी ने कर भी दिया है परन्तु किसी सिख का यह साहस नहीं कि वह गुरु ग्रन्थ में ऐसा कर सके।

दोष सिखों का है

नानक पंथ पर लिखते हुए आगे चलकर स्वामी जी ने लिखा कि इन (सिख) लोगों ने नाना प्रकार के पुराणों की मिथ्या कथा के तुल्य (किस्से) बना दिये, उस पर कर्मोपासना छोड़ इन के शिष्य (सिख) झुकते आये, इस ने बहुत बिगाड़ कर दिया, नहीं तो जो नानक जी ने कुछ भक्ति विशेष ईश्वर की लिखी थी, उसे करते आते तो अच्छा था।

इन में गुरु गोबिंद सिंह जी शूरवीर हुए हैं, मुसलमानों ने उन के पुरुषाओं को बहुत दुःख दिया था, उन से वैर लेना चाहते थे। परन्तु इन के पास कुछ सामग्री न थी और उधर मुसलमानों की बादशाही प्रज्वलित थी। उन्होंने एक पुरश्चरण करवाया, प्रसिद्धि की कि मुझ को देवी ने वर और खड्ग दी है कि तुम मुसलमानों से लड़ो, तुम्हारी विजय होगी, बहुत से लोग इनके साथी हो गये।

(सत्यार्थ प्रकाश)

गुरु गोबिन्द सिंह जी ने वाममार्गियों और चक्रांकितों की तरह पंच ककार बनाये, यह रीति गोबिन्द सिंह जी ने अपनी बुद्धिमत्ता से उस समय के लिये की थी, अब इस समय उसका रखना कुछ उपयोगी नहीं है परन्तु अब जो युद्ध प्रयोजन के लिये बातें कर्त्तव्य थीं, उन को धर्म के साथ मान लिया है।

सिख मूर्ति पूजा तो नहीं करते किन्तु उससे विशेष ग्रन्थ की पूजा करते हैं, क्या यह मूर्ति पूजा नहीं है ? किसी जड़ पदार्थ के सामने सिर झुकाना व उसकी पूजा करना सब मूर्ति पूजा है। जैसे मूर्ति वालों ने अपनी दुकान जमा कर जीविका ठाड़ी है, वैसे इन लोगों ने भी कर ली है। जैसे पुजारी लोग मूर्ति का दर्शन कराते, भेंट चढ़वाते हैं वैसे नानक पन्थी लोग ग्रन्थ की पूजा करते कराते, भेंट भी चढ़वाते हैं।

(सत्यार्थ प्रकाश के आधार पर)

अर्थ का अनर्थ

सुखमनी अष्ट पदी ७ पाद ८ में लिखा है कि :-

साध की महिमा वेदन जाने।

परन्तु इस का पदछेद करने में गलती की गई। वेदन की जगह वेद-न पाठ होने लगा जिस से अर्थ का अनर्थ हो गया कि "साध की महिमा तो वेद भी नहीं जानते" हालांकि वेद ज्ञान को पाकर ही मनुष्य साधु बनता है। वेदन का अर्थ है= जिज्ञासा, आवश्यकता या किसी कमी के कारण दुःख। इसका प्रमाण गुरु ग्रन्थ से ही मिलता है:—

(१) माथे पीर शरीर जलन है, करक कलेजे माही।
ऐसी वेदन उपज खरी, वा का ओखध नाही ॥

(सोरठ भगत भीखन)

(२) हमरी वेदन हरि प्रभु जाने, मेरे मन अन्तर की पीर।

(गौड़ म० ४)

अर्थात

(१) ऐसी वेदन उपजी कि उस की दवाई ही नहीं।

(२) हमारी वेदन ईश्वर ही जानता है।

यहां वेदन या वेदना का अर्थ दुःख जिज्ञासा, जरूरत या कमी के कारण क्लेश ही हो सकता हैं दूसरा अर्थ हो ही नहीं सकता, इसी प्रकार साधु की महिमा वेदन ही जान सकता क्यों कि आगे लिखा कि "जेता सुनहि तेता विख्यानहि" अर्थात जैसा साधु के मुख से धर्म उपदेश सुनता है वैसा ही कहता या आचरण करता है क्योंकि उस जिज्ञासु की वेदना को साधु भली प्रकार से जानता है। गुरु वाणी के यथार्थ भाव को उलटा पाठ करके उलटा अर्थ कर डाला गया।

(३) ब्रह्म ज्ञानी आप परमेश्वर-ब्रह्म का अर्थ है परमात्मा, वेद, बड़ा अर्थात परमात्मा ही सब से बड़ा और वेद ज्ञान का प्रकाश करने वाला है। सिख विद्वानों का यह अर्थ कि ब्रह्म ज्ञानी मनुष्य ही परमेश्वर हो जाता है। ठीक नहीं।

केश विचार

प्रश्न-केश धारण मनुष्य के लिये आवश्यक है या न

उत्तर-केशों का मानव धर्म के साथ कोई सम्बन्ध नहीं, परन्तु अपनी रुचि और देश काल अनुसार कोई लम्बे रखे या छोटे या न रखे। इसमें कोई हानि नहीं। केश मानव शरीर का अंग भी नहीं, क्योंकि केश सिर पर बड़े हों या छोटे इन से शारीरिक बल न्यून अधिक होता ही रहेगा। शेष अंगों के काटने से जैसे कष्ट होता है वैसे केशों के काटने से नहीं होता बलकि कईयों को सुख अनुभव होता है। हाथ पांव के नख कटवाने से जैसे मानव शरीर की हानि नहीं उलटा लाभ है। इस प्रकार केश भी देश काल अनुसार घटाये बढ़ाये जा सकते है। हां! इन को साफ सुथरा रखना आवश्यक है।

प्रश्न-केश तो श्री राम चन्द्र जी और कृष्ण जी ने भी रखे थे?

उत्तर-हम पहले लिख चुके हैं कि केश रखना या न रखना मनुष्य की इच्छा और देश काल पर निर्भर है। महाराजा राम और कृष्ण जी ने इस को धर्म का अंग नहीं माना, रामायण में लिखा है कि गुरु विशिष्ट जी ने रामादि चारों भाईयों का मुन्डन संस्कार वेद विधि से करवाया था और ब्राह्मणों ने बहुत सी दक्षिणा पाई थी। जब राम बनवास से लौटे थे तो दोनों भाइयों ने बड़े निपुण नाई से जटा अलग करवा कर स्नान किया था। चित्र विचित्र माला और मूल्यवान वस्त्रों से सुशोभित हो चारों ओर प्रकाश करने लगे थे।

हम नित्य देखते हैं कि जब सिख बच्चों के केश उलझ जाते हैं तो माता पिता केशों को कन्घे से खींच २ कर छुड़ाते हैं तब बहुत सारे केश उखड़ कर अलग हो जाते हैं और बड़ी आयु के सिख सज्जन भी हर रोज कन्घा करते समय केशों को उखाड़ते देखे जाते है; क्या उस समय पाप नहीं लगता ? इस पर गुरु-वाणी के प्रमाण भी पीछे दे चुके है।

ओ३म्

दसों सिख गुरु आर्य थे

(सिख हिन्दु नहीं के उत्तर में)

लेखक-स्वामी अमृतानन्द सरस्वती, यमुनानगर

हमारा नम्र निवेदन

नवीन अकाली और तत् खालसा सिख अपने आप को हिन्दु (आर्य) नहीं मानते। उन का कहना है कि खालसा पन्थ हिन्दू, मुसलमान, यहूदी, ईसाई आदि से अलग बिलकुल एक नया और पृथक पन्थ है जिस के संस्थापक गुरुनानक देव जी थे और जिस को दसम गुरु गोबिन्द सिंह जी ने मुकम्मल (पूर्ण) किया था। इस पर सत्य की खोज करने वाले पूछते हैं कि क्या नवीन सिखों का दाअवा (विश्वास) ठीक है? तो इस का सरल और सीधा उत्तर यह है कि जब एक मनुष्य अथवा एक समुदाय यह दाअवा कर रहे हैं कि हम एक अलग मजहब (पन्थ) रखते हैं तो दूसरे किसी का इस पर एतराज (आक्षेप) करने का हक अधिकार नहीं रहता।

आज से तीन हजार वर्ष पहले दुनियां में कोई मजहब या पन्थ न था। आदि सृष्टि से लेकर उस समय तक एक वैदिक धर्म ही सारे संसार का धर्म था इस के बाद ही यह एक हजार के लग भग भिन्न २ मजाहब अथवा पन्थ पैदा हो गए, और अपनी २ डफली ले कर अपना २ अलग राग अलापने लग गए। इन सब पन्थों को ऋषि दयानन्द महाराज ने चार बड़े पन्थों के अन्तर्गत

माना है। पुराणी, जैनी, किरानी, कुरानी-नानक पन्थ (सिखपंथ) की गिनती को स्वामीजी महाराज ने पुराणियों के अन्तर्गत माना है परन्तु आज के नवीन सिख इस दायरे (सीमा) में रहना नहीं चाहते, उन्हों ने अपना अकीदा (विश्वास) बदल लिया है, इस लिये कोई किसी को जबरदस्ती (बलात्कार) किसी समाज, फिरका (जाति) या पन्थ में जकड़ कर नहीं रख सकता, और फिर "मान न मान मैं तेरा महिमान" एक ओर जब नवीन सिख भाई हिन्दुओं से मिल कर पड़ोसी के नाते भी रहने को तैय्यार नहीं तो हिन्दुओं का खाह मखाह उन की खुशामद करके उन को अपनी गोद में बिठलाने का यत्न करना व्यर्थ है या जब खालसा अपनी सभ्यता और संस्कृति को अलग मान कर खालिस्तान बना कर अलग रहना चाहता है तो हिन्दुओं का उन को यह कहना कि तुम तो हमारे अपने हो, उचित प्रतीत नहीं होता। इस लिये मान लेना चाहिये कि बिला शुबा (ठीक ही) नवीन सिख हिन्दू (आर्य) नहीं। हां! गुरु नानक आदि दसों गुरु साहिबान या उन के पद चिन्हों पर चलने वाले प्राचीन सिख वैदिक धर्मी थे। इस को सिद्ध करना (जबकि गुरुबाणी और सिख इतिहास से साफ सिद्ध है।) हमारा अधिकार है क्योंकि पुराने इतिहास की रक्षा करना और सच्चाई को प्रकट करना हर मनुष्य का कर्त्तव्य है। बिना कारण अपनी चीज (वस्तु) पर दूसरे का विपरीत अधिकार सहन नहीं किया जा सकता।

हम विश्वास से कहते है कि नवीन सिख वाणी द्वारा तो दसों गुरु साहिबान को अपना गुरु और ग्रन्थ साहिब को अपना धर्म पुस्तक अर्थात ग्यारहवां गुरु मानते हैं किन्तु क्रियात्मक रूप में वह उन की आज्ञाओं और सिद्धान्तों को नहीं मानते। उनका

विश्वास दसों गुरु साहिबान और गुरबाणी के उलट (प्रतिकूल) है। उनका विश्वास अब रहितनामों पर है जो दसम गुरु कलगीधर के बाद सिखों ने बनाए थे और केवल पृथी चन्द, धीर मल, राम राये आदि गुरु पुत्रों के सिखों से अलग रहने के लिये लिखे गए परन्तु अब इसका इत्लाक (सम्बन्ध) सारे हिन्दू आर्य जगत तक कर दिया गया है। रहित नामों का परस्पर एक दूसरे के साथ भी बहुत कुछ भेद है और यह भिन्न २ सिखों के नाम पर प्रसिद्ध है जैसा कि :-दया सिंह, प्रहलाद सिंह, भाई नन्द लाल, सार अमर कुण्ड आदि के रहित नामे और तन्खाह नामे इन रहित नामों के परस्पर भेद को सिख विद्वानों ने भी स्वीकार किया है।

अब यदि नवीन सिख अपने आप को इन रहित नामों का सिख मानते या गुरुबाणी और सिख इतिहासके भावको न बदलते तो कोई आपत्ति न थी परन्तु इसलिये कि अब वह गुरुबाणी के आधार पर अपना दाअवा पेश करते हैं इस कारण हमारा अधिकार और कर्त्तव्य हो जाता हैं कि उन लोगों के असत्य अकायद (विश्वास) और गलत फहमी(ना समझी) पर प्रकाश डाला जाये. और यह सिद्ध किया जाये कि दसों गुरु साहिबान वैदिक धर्मी थे और सिख सम्प्रदाये पुराणियों के अन्तर्गत था।

अब हम नवीन सिखों के दाअवा को प्रश्न रूपमें पेश करके इसका समाधान सुमालोचना रूपमें सत्य के जानने वाले सज्जनों की सेवा में रखेंगे, जिससे सत्य असत्य का निर्णय हो कर सत्यार्थ का प्रकाश होगा। आशा है कि पाठक इस को विचार पूर्वक पढ़ेंगे।

देश सेवक-अमृता नन्द सरस्वती

विचाराम्भ

नवीन सिखों की ओर से एक ट्रैक्ट प्रकाशित हुआ है जिस का शीर्षक है "सिख हिन्दू नहीं" इसके लेखक महिन्द्र सिंह जी और प्रकाशक 'जीत बुक एजेन्सी' अमृतसर हैं। इसकी भूमिका ज्ञानी शेर सिंह जी ने लिखी, जिस की सराहना गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, नवीन सिख अखबारों और अकाली लीडरों ने दिल खोल कर की। इस के टाईटल पेज पर एक ओंकार सत गुर प्रसाद के मंगलाचरण के बाद भगत बाणी का एक शब्द लिखा गया है कि:—

हमरा झगड़ा रहा न कोओ-ब्राह्मण,मुल्ला छाडे दोओ।

समालोचना—यह शब्द भैरों राग में भगत कबीर जी का उच्चारण किया हुआ है जिस का जन्म गुरु नानक जी से बहुत पहले हुआ था। कई इतिहास कारों का यह भी कहना है कि गुरु नानकदेव जी भगत कबीर के अनुयाई थे। जन्म साखी भाईबाला में गुरु नानक देव जी ने स्वयं भगत कबीर का मर्तबा (पद सब भगतों से बड़ा माना है, और अपने आपको इन भगतों की लिस्ट (सूची) में गिना है। भगत कबीर जन्म के मुसलमान और जाति के जुलाहे थे,उन्होंने स्वामी रामानन्द जी से वैष्णव मत की दीक्षा ली थी और हिन्दू धर्म स्वीकार किया था जन्म अभिमानी ब्राह्मण आपको शूद्र और नीच जाति का मानते थे; इस लिये वह संस्कृत भाषा या वेद पढ़ना पढ़ाना उनका अधिकार न मानते थे। पन्थ इस्लाम तो वह छोड़ ही चुके थे और पंडित लोग अपनाते न थे इस लिये ऊपर लिखे शब्द में कबीर जी ने लिखा कि:-

हमरा झगड़ा रहा न कोओ-ब्राह्मण मुल्ला छाडे दोओ।

अर्थात-हमारा इन मुल्लाओं और पंडितों से कोई झगड़ा नहीं; क्योंकि हम ने तो इन दोनों को छोड़ दिया है।

हमारी समझ में नहीं आया कि कबीर साहिब का यह शब्द नवीन सिक्खों को हिन्दू न होने में क्या सहारा दे सकता है। यह ठीक है कि यह शब्द गुरु ग्रन्थ साहिब में लिखा है और ग्रन्थ साहिब चूंकि नवीन सिक्खों का ग्यारहवां गुरु है इस लिये शब्द, गुर वचन का दरजा भी रख सकता है। परन्तु नवीन सिक्ख लोग तो भगत बाणी को प्रमाणिक ही नहीं मानते जैसा कि इसी ट्रैक्ट के लेखक ने इसी में आगे जा कर, लिखा है कि :—

"गुरु ग्रन्थ साहिब में हिन्दू भगतों और भाटों की बाणी में कुछ हिन्दुओं के से ख्याल (विचार) और मुसलमान फकीरों की बाणी में कुछ इस्लाम के विचार पाए जाते हैं इन में कुछ ऐसे (विचार) हैं जो सिक्खी (सिद्धान्तों) के अनुसार नहीं। कुछ लोग इन के प्रमाणों से सिक्खों को भूल में डालते हैं परन्तु बाणी दूसरे मजाहब (मतों, पन्थों) के भगतों की है न कि सत्गुरुओं की। बेशक इस की गुरु ग्रन्थ साहिब में मौजूदगी (उपस्थिति) जरूरी है किन्तु इस का दर्जा गुरबाणी का नहीं (बल्कि) भगत बाणी का है।"

अब विचारना यह है कि जब कबीर साहिब की बाणी इन नवीन सिखों को स्वीकार ही नहीं तो फिर महिन्द्र सिंह जी ने इसको टाईटल पेज पर सब से ऊंची जगह पर प्रमाण में क्यों लिखा! क्या इस को लिखकर वह अपने आप को धोका तो नहीं दे रहे? या क्या इससे वह अपने दावा की तरदीद तो नहीं कर रहे? यदि इसको लिखकर वह दूसरों को भूल में डालना चाहते हैं तो यह उनकी ईमानदारी नहीं।

दाअवा (वाद अभियोग)-खालसा पन्थ, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी आदि जातियों से स्वतन्त्र तथा पृथक पन्थ है।

समालोचना:- गुरु नानक देव जी एक नया पन्थ चला कर संसार में और फूट डालने को नहीं आए थे। यह आप ही की बरखुर्दारी है, जो उन पर देश और जाति में फूट डालने का इलजाम (आरोप) लगा रहे हैं। उन्हों ने तो लिखा था कि :-

"एक पिता एकस के हम बारक"

"सारे प्राणियों का एक ही पिता परमात्मा है और सारे ही उसकी सन्तान और आपस में भाई भाई हैं। फिर जपजी साहिब में आदेश दिया "सभना जीयां का इक्को दाता"

यदि वह नवीन सिखों की इच्छा पर चलते तो साफ लिखते -

"सभना सिक्खां का इक्को दाता" इनके लेख से तो साफ दिखाई देता है कि वह प्रचलित पन्थों की पृथकता के बिलकुल विरुद्ध थे वह सबको एक आदि वैदिक धर्म के झंडे तले इकट्ठा करना चाहते थे क्योंकि उनका आदेश है कि:—

"ओड़क ओड़क भाल थके वेद कहन इक बात"

अर्थात - लोग अन्त तक तलाश करके हार गए पर इन पन्थों का कुछ पता न लगा, हां! वेद एक ही बात कहते हैं।

हमें तो पूरा विश्वास है कि गुरु नानकदेव जी की कथनी और करनी एक थी। परन्तु नवीन सिख हैं जो गुरुओं की करनी को कथनी से अलग बता रहे हैं और ऐसा कह कर वह गुरु सिखों से बहुत दूर जा रहे हैं।

दाअवा (वाद अभियोग)-पन्थ रत्न ज्ञानी शेर सिंह जी ने इस ट्रेक्ट की भूमिका लिखते हुए लिखा है कि:-

"इस प्रश्न का समाधान गुरु नानक देव जी महाराज ने आरम्भ में ही कर दिया था अगर गर्दोपेश (इधर उधर) के हालात का कुछ असर रहा तो श्री गुरु कलगीधर जी महाराज ने पन्थ को ऐसी मुकम्मल सूरत दी कि खालसा की अलेहदगी (पृथकता) और आजाद हस्ती (स्वतन्त्र व्यक्तित्व) में किसी बैगाने और अजनबी(दूसरे) को भी शक न रहा"

समालोचना-प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या पहले नौं गुरुओंके सिख कुछ अधूरे और अपूर्ण थे? यदि थे तो उनका निस्तारा और मुक्ति कैसे हुई होगी? यदि नहीं हुई तो उनको गुरु सिख बनने का क्या लाभ हुआ? यदि पहले नौ गुरुओं के सिख भी पूर्ण सिख थे तो दशम गुरु कलगीधर जी ने सिखी की कौनसी कमी को पूरा या मुकम्मल किया, जिससे पन्थकी सूरत मुकम्मल होगई। यदि केवल पांच ककार अर्थात केस, कड़ा, कन्घा, कृपाण और कछैहरा पहना कर मुकम्मल किया तो ऐसे भेष तो सब सम्प्रदाओं ने बना रखे हैं और उन भेषों का खण्डन तो स्वयं गुरु कलगीधर जी ने अपनी बाणी में कई जगह किया है जैसा कि :—

देस फिरयो कर वेस तपो धन-
केस धरे न मिले हरी प्यारे (स्वैये)

अर्थात- ऐ भेषी मनुष्य! तू साधुओं का सा बाना पहन कर देश भर में फिरता रहा, याद रख, केवल सिर पर केस रख लेने से परमात्मा नहीं मिला करता।

इस प्रकार अलग और आजाद हस्ती (स्वतन्त्र व्यक्तित्व) तो गडरिये भी अपनी अपनी भेड़ों पर अपना अलग अलग निशान लगाकर बना दिया करते हैं। भला ऐसी बातों से भी कोई धर्मात्मा बन सकता है? या मुकम्मल सिख कहला सकता है।

गुरु कलगीधर जी विचित्र नाटक में एक आदेश देते हैं कि जिन लोगों ने नये पन्थ बनाकर अपने अनुयाईयों से अपना नाम जपवाना आरम्भ किया था, परमात्मा उन पर सख्त नाराज हुआ और कहा कि:—

जो जो होत भ्यो जग स्याना; तिन तिन अपना पंथ चलाना।

अर्थात— जो, कुछ चालाक हुआ तो उसने संसार में अपना एक अलग पन्थ बना लिया—और फिर कहा:—

परम पुरुख किन हूँ न पाइयो वैर बाद हन्कार बढ़ाइयो।
पीर पात आपन ते जलें-प्रभ के पन्थ न कोओं चले।
जिन जिन तनिक सिद्धि को पाइयो-तिन तिन अपना राह चलाइयो।

अर्थात— परम पिता परमात्मा की भक्ति को छोड़ कर लोगों ने व्यक्ति की पूजा करनी आरम्भ कर दी, तब आपस में लड़ाई झगड़ा और अहंकार बढ़ा लिया अथवा जाति का वृक्ष अपने ही पत्तों से जलने लगा। परमात्मा के पन्थ या वेद मार्ग पर कोई विरला ही चलने लगा, जिस जिस ने थोड़ी सी सिद्धि या सफलता पाई तो उस ने अपना एक अलग पन्थ या रास्ता चला दिया, तब परमात्मा ने गुरु कलगीधर जी को तप करते हुए बुलाया और यह आदेश दे कर संसार में भेजा कि तुम जा कर परमात्मा के पन्थ या वेद मार्ग को संसार में फैलाओ, गुरु कलगीधर इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये आए और संसार को ललकार कर कहा कि:—

कहयो प्रभु सो भाख हूँ - कसो न काम राख हूँ।

अर्थात-मैं तो परमात्मा की आज्ञानुसार ही भाषण करता हूँ और ऐसा करते हुए किसी की परवाह नहीं करता। फिर कहा :-

भजो सो एक नामयंग - जो सरब काम ठामयंग।
न जाप आन को जपो - न और थापना थपो।

अर्थात-ऐ मनुष्यो! उसी एक परमात्मा का नाम स्मरण करो जो तुम्हारी सारी कामनाओं को पूर्ण करने वाला है। परमात्मा के बिना किसी दूसरे के नाम का जाप न करो और न ही इसके स्थान पर किसी को पूज्य बनाओ।

कितने शोक की बात है कि गुरु कलगीधर के नाम लेवा इन नवीन सिखों ने सिख पन्थ को एक अलग सम्प्रदाय बना दिया। वाह रे पन्थ रत्न! कमाल है तेरी गुरु भक्ति! हम बड़े जोरदार शब्दों में घोषणा करते हैं कि कोई माई का लाल सिख मैदान में आए और यह सिद्ध करे कि दसों गुरु साहिबान में से किसी एक गुरु ने भी अपना अलग पन्थ चलाने का यत्न किया था? अथवा हम जबरदस्त (बलिष्ट) प्रमाण दे कर यह सिद्ध करने को तय्यार हैं कि परमात्मा की सृष्टि में फूट डलवाने के लिए एक अलग पन्थ चलाने वाला गुरबाणी के शब्दों में नास्तिक, पापी और गुरु घर का विद्रोही है और कि वह मनमुख है।

दाअवा - हिन्दुओं की अधिकता के कारण खालसा पर धीरे धीरे हिन्दुत्व का प्रभाव होता गया और अन्तमें इस हिन्दू रंगत के कारण ही खालसा राज्य नष्ट हुआ। पश्चात तहरीक सिंह सभा, खालसाको वास्तविक रूप में प्रकट करने के लिये बनी। सिंह सभा लहर और इस की बेटी अकाली तहरीक

ने दिन के प्रकाश की भान्ति सिखों की, हिन्दू मुसलमानों से स्वतन्त्र और पृथक हस्ती सब पर प्रकट कर दी।

समालोचना - भोले ज्ञानी जी ! जिस समय का आपने वर्णन किया है उस समय पंजाबमें मुसलमानों का राज्य था और अधिकता थी तो फिर खालसा पर मुसलमानों का प्रभाव क्यों अधिक न पड़ा। जबकि इसी ट्रेक्ट में आपने और कई बार दूसरे नवीन सिखों ने खालसा पन्थ को हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों के ज्यादा नजदीक (समीप) माना हुआ है। यदि ऐसा ही है तो अधिकतर सिख, मुसलमान विचार धारा के क्यों न बन गये। आपको पता होना चाहिये कि इस समय शत प्रति शत सिख, हिन्दू (आर्य) बुजुर्गों (पूर्वजों) की सन्तान है और यह पूर्वज अपनी सन्तान में से एक पुत्र को प्रसन्नता पूर्वक सिख बना दिया करते थे उनको क्या पता था कि हमारे ही अजीज़ (प्रिय) कल 'हमें अंगूठा दिखला देंगे। यह मानी हुई बात है कि सारे सिख, हिन्दू (आर्य) बाप दादों के बेटे पोते हैं दुनियां में पूत कपूत तो होते आए हैं बाप कुबाप नहीं होते। इस लिए यदि बाप दादों की विचार धारा का प्रभाव सन्तान पर पड़ा हो तो इस में हर्ज की बात ही क्या है।

सिख राज्य के नष्ट होने के वास्तविक कारण-

१-परन्तु नवीन खालसा तो आरम्भ से ही अपने पूर्वजों की सरकशी (घोर विरोध) और बग़ावत (विद्रोह) करते चले आ रहे हैं, स्वयं गुरु कलगीधर का खजाना (कोष) जब मस्ताना हो रहा था अर्थात समाप्त हो रहा था और जबकि कई मास से सिखों को तलब (वेतन) न मिली थी तो एक दिन सिखोंने गुरुजी का घोड़ा

पकड़ लिया और वेतन देने के लिये आग्रह किया तो गुरु जी ने तसल्ली (धीरज) दी कि माया (धन) आ जाने पर सब को वेतन मिल जायेगा। परन्तु सिखों ने एक न सुनी, तब गुरु जी ने तंग आ कर कहा कि एक रास्ता अपनाओ, या तो मेरे सिख बन कर रहो या वेतन लेकर घरों की राह लो। इस पर सिखों ने कहा, कि हम को वेतन मिल जाये हम आपके सिख रहने को तय्यार नहीं अतः समय आया जबकि सिखों ने गुरु जी को बे दावा लिख कर दे दिया कि न तू हमारा गुरु और न हम तुम्हारे सिख। इस लिये गुरु जी; इस अवस्था को देखकर, पंजाब को छोड़ कर दक्षिण की ओर चल दिये। यह है सिख राज्य के नष्ट होने का सच्चा और पहला कारण।

२-इसके पश्चात वीर वैरागी बन्दा बहादर ने अपनी तलवार की बहादरी दिखा कर देश की स्वतन्त्रता को स्थिर रखने का यत्न किया मुसलिम राज्यके पाओं उखड़ गए, कोई भी वीर वैरागी का सामना न कर सकता था, फर्रख सीर ने तत्त खालसा को लालच दे कर अपने वश में कर लिया। झबाल की जागीर मिलने पर तत्त खालसा ने बाबा बन्दा का साथ छोड़ दिया, कई सिख फर्रख सीर की सेना में जा कर भरती हो गए और शत्रु के साथी बन कर बाबा बन्दा बहादुर से लड़ने के लिए रण क्षेत्र में आ गये। जिस वीर ने गुरु पुत्रों के बलिदान का बदला लिया था और जिसने देश और जाति की शान और मान को स्थापित रखने तथा मुगलों की पराधीनता से छुड़ाने का निश्चय लिया हुआ था उस को अपने विद्रोह के कारण शत्रु का बन्दी बनना पड़ा और बड़ी निर्दयता से

अपना बन्द बन्द कटवाना पड़ा। यह है सिखों के राज्य के नष्ट होने का सच्चा और दूसरा कारण।

३-और फिर गुजरात के युद्ध में कुछ जाति के विद्रोही सिख अंग्रेजों के साथ मिल गए जिसके कारण सिखों की घोर पराजय हुई और पंजाब अंग्रेजोंके अधीन हो गया, यह है सिखोंके राज्य के विनाश का तीसरा और सच्चा कारण।

आज भी जो लोग देश की अखण्डता को मिटा कर अलग प्रान्त और खालिस्तान के स्वप्न देख रहे हैं वह कोई देश और जाति की भलाई नहीं सोच रहे इस पर भी हमारे खालसा भाईयों की दलेरी (साहस) देखिये कि 'उलटा चोर कोतवाल को डांटे" हिन्दू (आर्य) बुजुर्गों पर ही इसका दोष लगा रहे हैं कि इन्हीं के कारण सिख राज्य नष्ट हुआ। इन अपनों की करनी को देख कर क्यों न महाराजा रणजीत सिंह और सरदार हरी सिंह नलवा की आत्मायें स्वर्ग में आज भी सिंह सभा लहर और उस की बेटी अकाली तहरीक (अन्दोलन) की बुद्धि पर दुखी होती होंगी।

दाअवा- मेरी (ज्ञानी शेर सिंह जी की) राय (सम्मति) में इस ट्रेक्ट के लेखक ने हिन्दुओं को समझाने का वास्तविक यत्न किया है कि वह अपने मस्तिष्क से यह बात निकाल दें कि सिख पंथिक या सियासी (राजनैतिक) रूप में हिन्दु हैं या यह कभी किसी शकल में हिन्दुओं के आधीन हो सकते है।

समालोचना-ज्ञानी जी महाराज! यदि आप लोगों ने आर्य हिन्दुओं को स्पष्ट रूप से कह दिया है कि हम आपके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रख सकते तो यह भी अच्छा ही किया है, क्योंकि

वह (आर्य हिन्दू) दसों गुरुओं को देख कर इस भूल में थे कि सम्भवता उनके नामलेवा सिख भी, गुरुओंकी भान्ति वैदिक धर्मी ही होंगे परन्तु आपके इन शब्दोंसे सिद्ध हो गयाहै कि आप गुरु आशय के सर्वथा उलट चल रहे हैं। अब यदि आप की यह स्थिति है तो आर्य हिन्दुओंको क्या मुसीबत (विपत्ति) पड़ी है कि वह वृथा ही नवीन सिखों को अपना समझें। यदि आप किसी प्रकार भी हिन्दुओंके समीप आने को तय्यार नहीं तो उनको भी अपनी गोद आपके लिए खुली रखने की आवश्यकता न होनी चाहिये बल्कि ऐसी अवस्था में तो मानना पड़ेगा कि वह हिन्दु बड़ा ही निर्लज है जो आपकी स्पष्ट बात सुन कर कभी भी आप के गुरद्वारों में कदम रखने की भूल करेगा या किसी प्रकार का दान या सहायता आदि देगा, इसी प्रकार खालसा पन्थ के कार्य कर्त्ताओं की ईमानदारी में सन्देह समझा जायेगा। यदि वह किसी हिन्दू से धन ले कर अपने धार्मिक कामों में लगाएगा या यह अरदासा करेगा कि

सेवक सिख हमारे तारें – चुन चुन शत्रु हमारे मारें।

या उनके दिये अनाज से लंगर चलाएगा या उनका कड़ाह प्रशाद गुरु अर्पण करेगा। अच्छा तो यह होग कि जब उनकी जन्म भूमि ननकाना साहिब और पंजा साहिब पाकिस्तान में है तो खालसा भी वहीं का रुख करे अर्थात असली खालिस्तान को छोड़ कर एक फरजी (कालपनिक) नया खालिस्तान बनाने का यत्न न करें "न रहे बांस न बजे बांसुरी" आप भी स्वतन्त्र और हिन्दू भी प्रसन्न और फिर आप हिन्दूओं की अपेक्षा मसलमानों के भी ज्यादा समीप।

दाअवा– यह भी गलत (मिथया) है कि हम हिन्दूओं से मिलाप करें और मुसलमानोंको बेगाना समझें, मेरी राये में शुमाली (उत्तरी) हिन्दू की निजात (मोक्ष) का राज (रहस्य) सिख मुसलम इतफाक (मिलाप) में हैं।

समालोचना– आप का कथन बीस बिसवे सवा सोलह आने ठीक है हमने भी उपरोक्त समालोचना में ऐसा ही लिखा है कि खालसा पंथ के मोक्ष का रहस्य शत प्रतिशत सिख मुस्लिम मिलापमें हैं १९४७ के बटवारा में इस मिलापका निजारा (दृश्य) सब लोग अपनी आंखों से देख चुके हैं आप की इस समझ और विचार की मौजूदगी में आर्य हिन्दुओं को भ्रान्ति में न रहना चाहिये।

दाअवा–मुझे (ज्ञानी शेर सिंह जी को) यकीन (विश्वास) है कि खालसा, कलगीधर श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज के इस फरमान (आदेश) को नहीं भूलेगा कि–

जब तक रहे खालसा न्यारा–तब लग तेज दयों मैं सारा।
जब एह गयो बिपरन की रीत–मैं न करूं इनकी प्रतीत।

अर्थात– जब तक खालसा अलग रहेगा मैं अपना सारा तेज इनको दूंगा और जब यह ब्रह्मणों की रीति पर चलेगा तो मैं उनका एतबार न करूंगा।

समालोचना—ज्ञानी जी ने जो उपरोक्त शब्द लिखा है यह दसम गुरु गोबिन्द सिंह जी का मुखवाक (वचन) ही नहीं यह तो पीछे से लिखे गये रहित नामों का वचन है यदि आप इसको गुरु वाक्य मानते हैं तो दसम गुरु की प्रमणिक वाणी दसम ग्रन्थी से निकाल कर दिखाएं। जिन गुरुओं ने देश और जाति में

से फूट दूर करने के लिये यह शब्द कहे थे कि-

मेल किये होत सुख, फूटन ते महा दुख,
तां ते मेल करो, पाछे भई बीत गई है।

(गुरु बलास पातशाही ६ अध्याय २)

गुरु हरगोबिन्दजी ने कहा ऐ देश वासियो! मेलमें सुख और फूट में महा दुख है, इसलिए आपस में मिल कर रहो पीछे जो गलती (भूल) तुमने की, उसको छोड़ो और भविष्य के लिये इत्तफाक (मेल मिलाप) से रहो।

भला वह गुरु अपने सिखों को अलग रहने की कैसे शिक्षा दे सकते हैं जिन गुरुओं के पुरोहित हरदयाल, केशो राम दया राम आदि विद्वान ब्राह्मण थे, भला वह कैसे कह सकते थे कि जो मेरा सिख ब्राह्मणों की रीति से चलेगा मैं उसका विश्वास ही न करूंगा एक नाम धारी सिख ने बड़े शोक से लिखा है कि आज सिख "दुष्ट सभन को मूल उपारन" वाला गुरु वाक्य भूल गये, बल्कि स्वयं ही सन्तों को दुख देने का कारण बन गए। खालसई फौजों ने भाई वीर सिंह नोरंग आबादी को भजन करते तोपों से उड़ा कर बड़े घमण्ड से कहा था कि:—

वीर सिंह जैहे असां मार दिते-नहीं छडनां साध ते संत कोई

इन अवस्थाओं में हम कह सकते हैं कि ज्ञानी जी का दिया हुआ उपरोक्त प्रमाण नवीन सिखों का मन घड़ंत है ऐसे लोग जो गुरु आशय को कुछ नहीं समझते वह हिन्दुओं को कैसे लाभ पहुँचा सकते हैं।

दाअवा– गुरु नानक देव जी ने जहां खुदा से मुनहरिफ (ईश्वरसे विमुख) लोगोंको एक अकाल पुरखके साथ जोड़ने का अलम बलंद किया (उच्च कार्य किया) वहां कानूने कुदरत (ईश्वरी नियम) के खिलाफ (विरुद्ध) रसूमात (प्रथाओं) का दलील (युक्ति) इलाही (ईश्वरी) रबाबके सुरसे खण्डन करके हिन्दू मुसलमान से अलग आजाद(स्वतन्त्र) (खालसा) सिख मज़हब (पन्थ) की बुन्याद (नीव) रखी।

समालोचना— निस्संदेह गुरु नानक देव जी ने एकोंकार सत नाम का उपदेश देकर कि, ऐ मनुष्यो ! एक परमात्मा की जिसका पवित्र और निज नाम ओंकार है और जो सत्य ज्ञान वेद का प्रकाश करने वाला है, की भगती करो। एक सच्चे वैदिक धर्मी की भान्ति संसार की एकता का अलम बलंद किया परन्तु आप लोगों ने इसके उलट दसों गुरु साहिबान और ग्यारहवें गुरु ग्रन्थ साहिब का जाप और अरदासा शुरु करके उनके एक ईश्वर भक्ती के उपदेश को भुला दिया।

प्यारे भाई ! गुरु जी ने किसी अलग और स्वतन्त्र पन्थ की नीव नहीं डाली थी बल्कि जपजी साहिब में आदेश दिया था कि-

सभनां जीयां का इक्को दाता- सो मैं बिसर न जाई

अर्थात- प्राणीमात्र का दाता एक परमात्मा है उसको मत भूल। परन्तु आपने इसकी जगह-

सभनां सिखां का इक्को दाता

मान कर अपने आप को अलग मान लिया।

दाअवा– दूसरे गुरु अंगद देव जी ने पहली बसाख को एक कौमी (जातीय) मेला का एलान (घोषणा) करके पांच दिन बड़ी धूम धाम से जशन मनाया जिसमें सिख मजहब (पन्थ) को हिन्दू मुसलमान से अलेहदा (पृथक) साबत (सिद्ध) किया। तारीख (इतिहास) इस बात की शाहद (साक्षी) है कि मजकूरा (उपरोक्त) मुखालिफ (विरोधी) जमायत (पार्टी)ने गुरु अंगद को शहीद (बलिदान) कराने की गरज (प्रयोजन) से बादशाह हमायूं से तलवार उठवाई।

समालोचना– ज्ञानी प्रताप सिंह जी तो सिख मत लेक्चर नामी पुस्तक में लिखते हैं कि सबसे पहले १६२४ बिक्रमी में श्री गुरु अमर दास जी ने वसाखी का मेला शुरु किया था। जो बाद में सिखों का कौमी (जातीय) त्योहार बन गया। परन्तु आपने गुरु अंगद से होना लिखा है और फिर आपने अपने दाअवे में कोई प्रमाण पेश (उपस्थित) नहीं किया इस कारण दाअवा बे दलील (बिना युक्ति) मानने के योग्य नहीं। बल्कि यह लेखक की दिली कदूरत (हार्दिक शत्रुता) और पक्षपात को प्रगट करता है। सिख इतिहास में तो आता है कि गुरु नानक देव जी ने बाबर की सात पुश्तों (पीढ़ियों) तक राज्य करने का वरदान दिया था। फिर हमायूं जब शेर शाह के मुकाबला की ताब न ला सका अर्थात सामना न कर सका तो अपनी सफलता के लिये गुरु अंगद जी से आशीर्वाद लेने आया, परन्तु गुरु जी ने आशीर्वाद देना स्वीकार न किया जिस पर हिमायूं को क्रोध आ गया और उसने तलवार की मयान पर हाथ रखा। मैकालिफ साहिब अपने सिख इतिहास भाग २ में लिखता है कि इस पर गुरु जी ने कहा कि तुझे शेर शाह के

विरुद्ध तलवार उठानी उचित थी, तब तो कुछ कर न सका, अब जो तू निहत्थे फकीरों के पास आया तो सम्मान करने की बजाए (अपेक्षा) तलवार उठाता है, तू कायर (डरपोक) बनकर युद्ध से भाग आया, परन्तु अब ईश्वर भक्ति लीन पुरुषों की संगत (समाज) पर वार करना चाहता है यदि तू तलवार के कब्जा (हत्थी) पर हाथ न रखता तो तुझे तेरा राज्य वापस मिल जाता। अब तो अपने देश फारस से वापस लौटेगा, तब तुझे देश वापस मिलेग।

देखिये ! लड़ाई तो है शेरशाह और हिमायू के मध्य, परन्तु इस ट्रेक्ट के लेखक ने इसको अपने हिन्दू पूर्वजों के सिर थोप कर अपनी बरखुदारी का प्रमाण दिया है। धन हो! गुरु के लाल!

दाअवा– सारे क्षत्री ब्राह्मणों ने शहन्शाह अकबर के दरबार में फर्याद की कि इस नये मजहब (पन्थ) को बन्द किया जाए।

समालोचना- गुरु अमर दास जी ने आनन्द साहिब में आदेश दिया है कि :-

वेदां में नाम उत्तम सो सुने नाहीं-फिर ज्यूं बे तालिया।
कहो नानक जिन सच तजिया कूड़ लगे-तिन जन्म जूए हारिया

अर्थात-वेदों में नाम या सत ज्ञान की उत्तम शिक्षा है उसको तू सुनता नहीं, बे तालों और पागलों की भान्ति तू भटक रहा है गुरु अमर दास जी कहते हैं कि जिन लोगों ने वेदोक्त सच्चाई को त्याग कर झूठ को ग्रहण किया, उन्हों ने तो अपना मनुष्य जन्म जूए में ही हार दिया। अब जब गुरु अमरदास जी का वेद मत है तो वह नया मत (मजहब) कैसे। और इसके सम्बन्ध में क्षत्री और ब्राह्मणों की शिकायत के क्या अर्थ।

तवारीख गुरु खालसा भाग दूसरा सफा (पन्ना) ६११, और गुरु प्रताप सूर्य की रास दो, अन्सू सात में लिखा है कि राजा अकबर ने चितोड़गढ़ पर आक्रमण कर रखा था, उसके सामने बहादर जयमैल जैमल और फत्ता दो वीर राजपूत देश और धर्म की आज़ादी के लिये लड़ रहे थे, उनकी तलवार आबदार के सामने शाही फौज की एक न चलती थी चूंकि बाबर के समय से सिख गुरु मुगल शासकों के पक्षमें दुआएं आशीर्वाद देते चले आ रहे थे। इस पर राजा अकबर ने अपने प्रतिनिधि ताहर खान को चित्तोड़गढ़ की विजय के लिये गुरु अमर दास जी के पास भेजा गुरु जी उस समय गोयंदवाल में बावली तय्यार करवा रहे थे, आपने अकबर के पक्ष में दुआ (अशीर्वाद) देते हुए कहा कि जब: "कड़ टुटे तब गढ़ छुटे" अर्थात जब बावली साहिब का कड़ टूटेगा उस समय चित्तौड़गढ़ की विजय हो जायेगा। यह सुनकर नाजम (शासक) लाहौर ने अपनी ओर से बावली साहिब की त्यारी में और मज़दूर (श्रमिक) लगा दिये जिससे कड़ जल्दी टूट गया और चित्तौड़गढ़ भी विजय कर लिया गया।

इन घटनाओं से तो सिद्ध है कि गुरु साहिबान ही हिन्दू धर्म और हिन्दू राज्य को विनाश के लिये मुगल वंश के मुसलमान राजाओं को अशीर्वाद दिया करते थे परन्तु नवीन सिख उल्टा अपने हिन्दू पूर्वजों पर झूठे आरोप लगाकर कलंकित करना चाहते हैं। सिख इतिहास कार लिखते हैं कि बादशाह (राजा) गुरु जी पर बहुत प्रसन्न हुआ और :—

पटा परगने का लिखदीन – रहे ग्राम सब गुरु आधीन।
आदि झबांल बीड़ जह करयो-बहते ग्राम आप मुद भरयो।

(गुरु प्रताप सूर्य रास २-रुत १०)

अर्थात- एक परगने का पटा लिख कर उस के सारे ग्राम जो झबाल बीड़ में थे सब गुरु अमर दास जी के आधीन कर दिये, और वह गुरुओं की जागीर बन गए ।।

दाअवा—कलेजा मुंह को आता है कि शहीदों के सुलतान गुरु अर्जुन देव साहिब को इस मुखालिफ (विपक्षी) टोले (हिन्दुओं) ने बड़ी बेरहमी (निर्दयता) से लाहौर में शहीद (बलिदान) करवा कर अपने सीने को ठण्डा किया था।

समालोचना-आपके गलत (झूठे) इलजाम (आरोप) की तरदीद आपके सिख विद्वान ही कर रहे हैं, जैसा कि ज्ञानी प्रताप सिंह जी अपनी पुस्तक गुरु मत लैक्चर में लिखते हैं कि गुरु जी की शहादत (बलिदान) का कौन जिमेवार (उत्तरदायी) है। इतिहास इस का उत्तर देता है कि स्वयं जहांगीर क्योंकि चन्दू तो एक साधारण काम करने वाला था, जो कुछ हुआ बादशाह के हुकम (आदेश) से हुआ। बादशाह अकबर के सम्बन्ध गुरुओं से बहुत अच्छे थे, इसकी मृत्यू के बाद २४ अकतूबर १६०५ को उसका पुत्र जहांगीर गद्दी पर बैठा। अकबर उस पर अप्रसन्न था क्योंकि उसके जीवन काल में ही जहांगीर ने बग़ावत (विद्रोह) की थी और अबवलफजल जैसे दरबारी को मरवाया था। दरबारियों में एक खास धड़ा था जो जहांगीर के खिलाफ (विरुद्ध) था। अकबर अपने पोते (जहांगीर के बेटे) खुसरो पर प्रसन्न था। जब जहांगीर गद्दी पर बैठ गया तो खुसरो ने बग़ावत (विद्रोह) करदी। वह देहली से पंजाब की ओर बढ़ा और गोयंदवाल से होता हुआ तरन तारन में गुरु अर्जुन देव जी को मिला। महाराज ने उसको महिमान (अतिथ) और दीन दुखी देखकर उस की सेवा की। खुसरो के

अपने सम्बन्ध भी गुरु घर से बहुत अच्छे थे। महिमा प्रकाश में लिखा है कि:-

था बड़ा दुखी तां पर भई आफत
देख दयाल गुरु करी ज़यापत

खुसरो तरन तारन से होकर लाहौर पहूँचा जहांगीर उस के पीछे सैना लेकर आ रहा था खुसरो लाहौर में पकड़ा गया और कैद कर लिया गया, उसके दो साथी मरवा दिये गए। इस घटना के सम्बन्ध में स्वयं बादशाह तौजक जहांगीरी में लिखता है कि:-

'गोयंदवाल जो व्यास नदी के किनारे पर स्थित है उस में पीर और बजुर्ग भेस में अर्जुन नाम का एक हिन्दू रहता है उस ने बहुत सारे भोले भाले हिन्दू बल्कि बेसमझ मूर्ख मुसलमान भी अपने पैरो (शिष्य) बना लिये हैं। उस ने अपनी बुजुर्गी और ईश्वर का समीपता का ढोल पीट रखाहै लोग उसको गुरु कहते हैं तीन चार पुश्तों से उनकी यह दुकान गर्म है। बड़ी देर से मेरे मन में ख्याल था कि इस झूठ की दुकान को बन्द करना चाहिये कि उन दिनों ही खुसरो दरया पार करके आया। उस जाहल (मूर्ख) और हकीर (नीच) आदमी (खुसरो) ने उस (गुरु अर्जुन देव)के समीप रहने का इरादा किया,यह अर्जुन को मिला जिसने उस के माथे पर केसर का तिलक लगाया, जिस को यह (हिन्दू) नेक शगुन मानते हैं इसपर मैं ने मुर्तजा खान को हुकम (आदेश) दिया कि इस को गिरिफ्तार कर लिया जावे और इस को यासा के कानून की सजा दी जावे"

नोट — उपर लिखित लेख का समर्थन और तस्दीक (प्रमाणक) सरदार कपूरसिंह जी एम० ए० और सरदार जी० बी०

सिंह ने प्राचीन बीड़ां नामी पुस्तक में की है, और लिखा है कि दीवान चन्दू लाल की मगनी की कहानी को इतिहास कारां ने ऐसे ही बढ़ा दिया है और इस घटना को गुरु अर्जुन देव जी के सब दुखों का और शहादत (बलिदान) का कारण बता कर अपनी बेसमझी का ढोल बजाया है यदि तौजक जहांगीरी न होती तो हम धोखा खा जाते।

इस घटना पर सर अबदुलकादर, प्रोफैसर इस्लामियां कालेज ने २४जुलाई१९४६ई० को अखबार निवाए वक्त में लिखा था कि खुसरो जब गुरु अर्जुन देव के पास आया तो आपने उस को आशीर्वाद दी और माथे पर केसर का तिलक लगाया और दस हजार रुपया सहायतार्थ नकद दिया। यदि खुसरो सफल हो जाता तो गुरुजी को बहुत लाभ पहुंचता। परन्तु उसकी पराजय के कारण आपको कष्टों का सामना करना पड़ा, और आपको लाहौर के किले में कैद कर लिया गया जहां आपकी मृत्यु हुई।

अब देखिये इतना सबल, सच्चा और निर्पक्ष प्रमाण होने पर भी यह पक्षपाती नबीन खालसा अपने ही बाप दादा (हिन्दुओं) पर उल्टा तथा झूठा इलजाम (आरोप) लगा रहा है और बिना कारण ही हिन्दू सिख सवाल पैदा कर रहा है, हालांकि मास्टर तारा सिंह जी की भान्ति यह भी हिन्दुओं में से ही सिख सजा होगा, और यह या एक दो पुश्त पहले इसके बुजुर्ग (पूर्वज) हिन्दू ही होंगे।

दाअवा– यह ठीक है कि लखोखा हिन्दू गुरु महाराज की शरण में आए और सिख बने, लेकिन यह हिन्दुओं का सत्गुरुओं पर कोई एहसान (कृपा) नहीं। श्री गुरु तेग बहादुर जी ने हिन्दुओं की फरयाद पर उन की मुसीबत (कष्ट) अपने सिर

ली और बलिदान प्राप्त किया।

समालोचना—हम पहले लिख चुके हैं कि गुरु नानक देव जी ने बाबर बादशाह को सात पुश्तों (पीढ़ियों) तक राज्य करने की दुआ (आशीर्वाद)दी थी। गुरु अंगद जी ने हमायूं को वर दिया था कि जब वह फारस से लौट कर आयेगा तो उसको मुलक (देश) वापस मिल जाएगा। गुरु अमर दास जी ने अकबर बादशाह को दुआ (आशीर्वाद) दी थी कि जब बाबली साहिब का कड़ टूटेगा तब तू चितौड़ के किले पर कबजा (अधिकार) हो जाएगा, हालांकि यह मुकाबला जैमल और फता जैसे देश भगत राजपूतों के आधीन भारत की स्वतन्त्रता के लिये हो रहा था। चुनांचि जब किला चित्तौड़गढ़ मुगलों ने सरकर लिया जीत लिया तो बादशाह ने काफी जागीर (सम्पत्ति) गुरु जी को अर्पण की, इतने पर भी हिन्दुओं ने गुरुओं से मुहं मैला न किया, और बदस्तूर (पहले की तरह)उनको अपना समझते रहे। गुरु अर्जुन देव जी ने केवल अपने लाभ की खातिर खुसरो की धन से सहायता की और उसके माथे पर तिलक लगा कर आशीर्वाद दी,जिसके बदले में उनको जामे शहादत नोश करना पड़ा अर्थात अपना बलिदान देना पड़ा तो भी पंजाब के हिन्दुओं ने गुरुओं का साथ न छोड़ा। बल्कि इसका बदला लेने के लिये महात्मा गोतमदास जी के सपुत्र भाईपागा जी जैसे धर्मवीर,जो भाई मति दास जैसे विख्यात उच्च बलिदानी के पिता थे,ने गुरु हर गोविंद जी का पूरा २ साथ दिया, और कई लड़ाईयों में मुगलों के छक्के छुड़ाए गुरुओं ने ही औरंगजेब के विरोधी भाई दारा शिकोह की सहायताकी थी,जिसके कारण औरंगजेब गुरु हरराये जी के समय से गुरु घर का शत्रु बना और बाबा रामराये को अपने भाईयों का

विरोधी बना कर इन्आम (पारितोषक) में उसको डेरादून की जागीर दी और गुरु तेग बहादुर जी को चांदनी चौंक देहली में शहीद (बलिदान) किया ऐसे नाजक समय में भी भाई मति दास जैसे कर्मवीर और धर्मवीर ब्रह्मण गुरु जी के साथी रहे और भाई दयाला जी और दूसरे हिन्दू वीरों को साथ लेकर पूरा साथ निभाया, बल्कि तेज आरे के नीचे सर दे कर अपना सारा शरीर चरवाया और एक ओंकार का नाअरा (घोष) लगाया।

गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज को जब सिखों ने बेदाअवा लिख कर दे दिया था और वह उनकी बेरुखी देख कर दक्षिण की ओर चले गए थे तो एक हिन्दू वीर बैरागी लछमण देव (बाबा बन्दा बहादुर) जैसे बहादर क्षत्री राजपूत ने अपने शरीर का बन्द बन्द (अंग अंग) कटवा कर गुरु पुत्रों के बलिदान का बदला लिया था, उस समय भी ऐसे मोहसन (कृतज्ञ) और देश भक्त बैरागी के साथ तत् खालसा सिखों ने गद्दारी की थी, जो फरख सैर से झवाल की जागीर पाकर और उसकी फौज में भरती होकर बाबा जी का साथ ही न छोड़ गए थे, बल्कि शत्रु के साथ मिलकर बैरागी से लड़ने के लिये मैदान जंग (रण क्षैत्र) में उतर आए थे। इतने पर भी हमारे नवीन सिख सज्जन "सिख हिन्दू नहीं" जैसे दिल दुखाने वाली पुस्तकें लिखकर अहसान फरामोशी (कृतघ्नता) के भागी बन रहे हैं, हालांकि वह हिन्दुओं के ही गोशत (मास) और पोस्त (चमड़ी) है सच मुच :-

'इस घर को आग लग गई घर के चिराग से'

यह है इन प्यारे बरखुदारों की पितृ भगति।

दाअवा– आंहजूर (गुरु गोविन्द सिंह जी) के दो मासूम छोटे साहबजादों को एक ब्राह्मण ने पकड़वा कर सरहन्द की दीवारों में जिन्दा (जीवित) चुनवाया और आपकी वालिदा साहिबा (माता जी) को शहीद करवाया। नीज (और) इतिहास इस बात का शाहिद(साक्षी) है कि गवर्नर सरहंद को साहिबजादों पर वहशीपनके जुलम(पाशविक अत्याचार)का मशवरा (परामर्श) देने वाला भी मशहूर हिन्दू दीवान सुचानन्द था।

समालोचना– गंगू जिसको आप लोग ब्राह्मण कहते हैं वह तो गुरुकलगीधर जी का पुराना रसोईया था, इतिहास कारों का कहना है कि वह बीस बर्ष से गुरुघर का बर्तन मांजने वाला था, आपको समझ लेना चाहिये कि रसोईया ब्राह्मण नहीं हुआ करता, ब्राह्मण किसी के झूठे बर्तन साफ नहीं किया करते न किसी का बोझ उठाया करते हैं। यदि गुरुओं की इतनी नौकरी और संगति से इस पर कोई असर (प्रभाव) नहीं हुआ तो इस का दोषी कौन ? यदि एक कुली ने अपने मालक से नमक हरामी की,तो इसका अपराधी ब्राह्मण वर्ण कैसे? असली ब्राह्मण तो भाई मति दास जी और परोहित दया राम जी थे जिनको दशम बादशाह के बचित्र नाटक में गुरु द्रोणाचार्य का लकब (पद) दे रखा है।

देखिए ! धन के लालच ने सिखों से बेदाअवा लिखवाया था इसी धन के जाल में फंस कर तत् खालसा फर्रुख सेर की फौज में भरती हुआ था। यदि इसी प्रकार एक रसोईया वतन फरोश, देश घातक,कौम फरोश जाति घातक और मालक(स्वामी) का गद्दार (विद्रोही) बन गया तो इसमें हिन्दुओं का क्या दोष !

गुरुजी के दो मासूम बच्चे जीवित दीवारमें चुनवा दिए गए या वैसे ही मारे गए, यह भी खोज करने की बात है, माता गुजरी ने छत से छलांग मार कर बलिदान दिया तो अपने जिगरके टुकड़ों, पोतों के मोह में। भला इसमें ब्राह्मण जाति का क्या दोष? और वास्तविक बात तो यह है कि स्वार्थी लोगों ने हिन्दू सिख का प्रश्न बनाने के लिये गंगा राम पर झूठा इलजाम (आरोप लगाया है। अतः गंगा राम का इस में जरा भर भी दोष न था। इतिहास साक्षी है कि गुरुके सिख गुरु कलगीधर को तीन वार बेदावा लिख कर दे चुकेथे कि "तू हमारा गुरु नहीं हम तेरे सिख नहीं" परन्तु ऐसे कठिन समय में भी गंगा राम ने गुरु जी का साथ न छोड़ाथा और जिस समय गुरुजी ने आनन्दपुर का किला (दुर्ग) छोड़ा था और शत्रुओं ने अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर उन पर आक्रमण कर दिया था और सारा सामान या तो जला दिया था या लूट लिया था तो उस समय भी गंगा राम गुरु जी के साथ था गुरु जी ने कुछ साथियों सहित केवल तीन कपड़ों में गढ़ी चमकोर में पनाह (आसरा)ली थी इस कठिन अवस्थामें गुरु जी ने गंगा राम को विश्वास पात्र समझ कर मा ता गुजरी और दोनों साहिबजादों को उसके साथ भेज दिया था। अब जब यह कहा जाता है कि गंगा राम ने सोने की मोहरों के लालच में गुरु पुत्रों को पकड़वा दिया था। प्रश्न तो यह है कि सोने की मोहरों से लदी हुई वह खच्चर कहांसे आ गई थी जब कि गुरु जी सिवाए अपने तन के और कुछ भी अपने साथ न ला सके थे। निर्पक्ष इतिहासकारों का कहना तो यह है कि सरहन्द में मुगलों ने जो सिखों की तलाश (भाल) में रहते थे गंगा राम को माता गुजरी और दो मासूम बच्चों समेत पकड़ लिया था और उस को मार

पीट कर साहिबज़ादों को छीन कर मार दिया था।

जिस प्रकार दीवान चन्दू लाल पर लगाए गए इल्ज़ाम (आरोप) की तरदीद (समाधान) स्वयं जहांगीर ने की और समझदार सिख इतिहासकारों ने इस का समर्थन किया, ठीक उसी प्रकार सुचानन्द भी मुग़ल राज्य का एक तुच्छ मुलाज़िम (नौकर) था, किसी को फांसी दिलवाने या ज़िन्दा दीवार में चुनवाने या मौत की सज़ा (दंड) देने का उस को क्या हक्क (अधिकार) था? गुरु पुत्रों को सज़ा (दंड) तो वहीद खान जैसे पक्षपाती और अधिकार प्रस्त मुग़ल हाकिम ने दी थी, उसी ने बच्चों को मुसलमान बनने और विवाह करा देने का लालच भी दिया था। अकारण ही घटनाओं को गलत (झूठ) पेश करना और बेगुनाह (निर्दोष) हिन्दुओं के सिर थोपना और सिख हिन्दू सवाल पैदा करना कहां की ईमानदारी है?

दाअवा— अब भी कुछ हिन्दू अखबारात (समाचारपत्र) और चन्द (कुछ) मतलब प्रस्त (स्वार्थी) और चालाक लीडर फज़ूल शोर मचा रहे हैं कि सिख हिन्दू हैं।

समालोचना— आप को भ्रम हो रहा है वरन: कोई समाचार पत्र का समझदार सम्पादिक या लीडर मैकालफी विचारधारा के पक्षपाती सिखों को हिन्दू जानने और मानने को तय्यार नहीं हां दसों गुरु साहिबान और उन की शिक्षा पर चलने वाले वैदिक धर्मी सिख निश्चित रूप में हिन्दू हैं और वैदिक धर्मी। इन पर आप का कब्ज़ा मुखालफाना (विपरीत अधिकार) किसी प्रकार भी सहन नहीं किया जा सकता। इसी कारण हिन्दू समचारपत्र देश और जाति के गमखार (हितेषी) हिन्दू लीडर, गुरुओं को अपना साबित करते अर्थात मानते हैं, चूंकि नवीन सिख गुरबाणी

को छोड़ कर रहितनामों के सिख हैं इस कारण उन का गुरुओं को अपनाने का कोई अधिकार नहीं।

दाअवा– गुरु गोविन्द सिंह जी का फरमान (आदेश) है कि सिख रिश्ते (सम्बन्ध) सिखों के साथ ही करें। जिस के सिर पर केस न हों उसे लड़की न दें।

समालोचना-दसमगुरु कलगीधरजी केतीन विवाह हुए और तीनों ही जन्म के क्षत्री घरानों में। इसी प्रकार दसों गुरु साहिबान ने क्षत्री घरानों में विवाह किये और अपने लड़के और लड़कियों के सम्बन्ध भी क्षत्री बिरादरी में किये। उन का एक सम्बन्ध भी जन्म की किसी दूसरी जाति से नहीं हुआ। अब भी ब्राह्मण सिख ब्राह्मण से, क्षत्री सिख क्षत्रियों से अरोड़े सिख अरोड़ों से और जाट सिख जाटों से सम्बन्ध करते हैं। अब भी समाचारपत्रों में यह इश्तहार (विज्ञापन) छपते हैं कि जाट सिख लड़की के लिये जाट वर की आवश्यकता है। यदि कहीं जात पात छोड़ कर रिश्ते (सम्बन्ध) होने लगे हैं तो केवल आर्य समाज के प्रचार और शिक्षा के आधीन। बाकी रहा सिख वर का सिख लड़की के साथ सम्बन्ध, सो यह भी दसम गुरु गोविन्द सिंह जी का आदेश नहीं, अतः रहितनामों की पक्षपात भरी शिक्षा का कारण हैं।

प्यारे भाई ! हिन्दुओं और सिखों के रिश्ते नाते वहीं तक थे जबकि सिख अपने आपको अलग (पृथक) न मानते थे। अब जबकि नवीन सिख अलग हो रहे हैं इस कारण कोई भी समझदार हिन्दू नवीन सिखों के साथ रिश्ता (सम्बन्ध) करने को तैय्यार नहीं। यदि भूल और अज्ञानता से कुछ भोले भाले हिन्दू आप के जाल में फंस कर सम्बन्ध कर भी देते थे तो

अब वह भी आप की जहनीयत (विचारधारा) देख कर चेत हो जाएंगे और नवीन सिखों को अपना धर्म विरोधी जानकर उनके समीप तक न फटकेंगे।

दाअवा– सिख अकसर हिन्दुयों से बने इस लिये कुछ पुराना रिवाज (प्रथा) मौजूद है।

समालोचना– आप लोगों के पक्षपात और तंगदिली (संकुचित हृदय) को देख कर अब कोई समझदार हिन्दू सिख बनने या आपके गुरुदवारों में जाने को तय्यार नहीं होगा। यदि कोई भूला भटका बन भी गया तो उसके बदले में सिख भी हिन्दू बनाए जाएंगे। क्योंकि विचारों का संघर्ष दोनों ओर से होगा और ताली दोनों हाथों से बजेगी।

दाअवा– सिख हिन्दुओं की निसबत (अपेक्षा) मुसलमानों के ज्यादा (अधिक) नज़दीक (समीप) हैं।

समालोचना–नवीन सिख जूं जूं गुरवाणी, गुरु आशय और सिख इतिहास से दूर जा रहे हैं तयूं तयूं वह मुसलमानों के समीप जा रहे हैं। परन्तु इनके लिये मुश्किल (कठिनाई) यह है कि मुसलमान ही इनको अपनाने को तय्यार नहीं। वह उलटा हिन्दुओं से तो सम्बन्ध रख भी सकते हैं और उनके हाथ का खा लेते हैं, परन्तु झटका खाने वाले सिखों के हाथ का खाना वा छूना कुफर और गुनाह (पाप) समझते हैं। पिछले बटवारे में मुसलमानों ने जितना सिखों को मारा और लूटा इतना हिन्दुओं को तंग नहीं किया। मेरे एक अहमदी दोस्त मेरे घर में बैठकर भोजन कर लेते थे परन्तु सिख का छुआ गन्ना भी न चूसते थे, वह साफ कहते थे कि आर्य समाजी मांस नहीं खाते इस लिये

उनसे परहेज का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। मगर सिख झटका शराब आदि हराम चीजों का प्रयोग करते हैं इस कारण उनसे बतोत्र रखना इसलामी शरह (धार्मिक नियम) के खिलाफ है।

दाअवा—सिख मज़हब के मुताबिक हर गैर सिख, लड़की को सिख बनाकर उससे शादी कर सकता है परन्तु कोई सिख अपनी लड़की गैर सिख को नहीं दे सकता क्योंकि इस से लड़की पतित हो जाती है।

समालोचना—प्यारे खालसा जी! अब हिन्दुओं को भी आप की विचारधारा का पता लग गया है बिलकुल आप की तरह एक हिन्दू भी सिख लड़की को हिन्दू बनाकर उससे विवाह कर सकता है और हर समझदार हिन्दू किसी सिख को या गैर हिन्दू को अपनी लड़की देने को तय्यार नहीं, हां! एक गैर हिन्दू को हिन्दू बनाकर उससे अपनी लड़की का सम्बन्ध कर सकता है, क्योंकि वह जानता है कि गैर से रिश्ते करने पर लड़की पतित हो जाती है। यकीन (विश्वास) रखिये वह दिन गये जब अकेले खलील खां फाखता उड़ाया करते थे।

दाअवा— सिख और मुसलमान हर दो अक़वाम (जातियां) तौहीद परस्त(एक की ही पूजा करने वाले)एक खुदा (प्रभु)के कायल (मानने वाले) और जंगजू लड़ने वाले) हैं इस लिए एक हैं।

समालोचना— बिना शक जिस प्रकार मुसलमान लोग खुदा (परमात्मा)के साथ हज़रत मुहम्मदसाहिब की शिरकत(मेल)जरूरी मानते हैं रसूल अल्लाह के बिना उनका कलमा अधूरा है ठीक इसी प्रकार नवीन सिखों के लिये अकाल पुरुख के साथ दस गुरुओं और गुरु ग्रन्थ साहिब की शिरकत(मेल) लाजमी (जरूरी) है। इस

के बगैर उनकी अरदास नामुकम्मल है जिस प्रकार कुरान (मुसलमानो की धार्मिक पुस्तक) और क्यामत (परलै) पर ईमान लाए और सुन्नत कराए बगैर कोई सच्चा मुसलमान नहीं बन सकता, इसी प्रकार पांच ककार की रहित और खण्डे को फेर कर पताशों का शर्बत (अमृत) पिये बगैर कोई नवीन सिख नहीं बन सकता। कोई सिख गुरबाणी को उलटा समझे या सीधा, रहित नामों की आज्ञा पर चलना उस के लिये जरूरी है। वाकई (सचमुच) इन मजहबी तोहमात (भ्रमजाल) में मुसलमान और सिख एक ही तराजू (तकड़ी तुला) के चटटे बट्टे हैं। उसके अतिरिक्त नवीन सिख, पुस्तक पूजा, मूर्ति पूजा, मनुष्य पूजा को सिखी सिदक,तालाब,बावलियों और बुन्गोके दर्शन और असनान में पापों का नाश,बाबा अटल और गुरुद्वारों की दीवारों को मुठी चापी करने को धर्म प्रेम मानते हैं, इतने पर भी यह दावा कि सिख तौहीद प्रस्त (एक के पुजारी) और एक खुदा (परमात्मा) के कायल (विश्वासी) हैं बलिहार तेरी कुदरत !

बाकी रहा सिखों का जंगजू (योद्धा) होना, गैरों की कमान के नीचे अपनों पर वार करना, ततखालसा ने बाबा बन्दा बहादुर के समय ही सीख लिया था, बाकी कसर उस दिन पूरी हो गई था जब अंग्रेज ने सिखों को फौजी कबीला (सैनिक परिवार) समझ कर इनको हिन्दुओं से अलग करने और फूट डलवाने की नीति अपनाई थी और जब कि इस लालच में ब्राह्मण क्षत्री और अरोड़े सिख बनकर अंग्रेजी फौज में जा भरती हुए थे और भारत की गुलामी (परतन्त्रता) की जंजीरों को मजबूत (पक्का) किया था। सिखों का जंगजू होना तो बटवारा के समय ही पता लग गया था जबकि यह मुसलमानों

के डर के मारे जिला जेहलम और रावलपिन्डी में सिखी निशान को भी तिलांजली देते और भारत को भागते फिरते थे।

दाअवा—कहा जाता है कि चूंकि गुरु ग्रन्थ साहिब की बाणी की जबान हिन्दी है इस लिये सिख हिन्दू हैं, इसके जवाब (उत्तर) में लिखा जाता है कि कोई मजहब जबान से नहीं बनता आपको यह पता होना चाहिये कि सिखों के लड़के लड़कियों के जहां परमात्मा कौर, प्रकाश सिंह आदि नाम हैं वहां इखलाक कौर, फतेह सिंह, मेहरबान कौर, खुशवन्त सिंह, इकबाल कौर, बगैरा अरबी फारसी जबान के नाम भी हैं।

समासोचना—यदि मातृभाषा या धर्मग्रन्थ की भाषा से सिखों का कोई सम्बन्ध नहीं तो क्या भाषा, सभ्यता और धार्मिक असूलों को दूसरों से उधार लेना या इधर उधर से "कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा; भान मति ने कुम्बा जोड़ा"। के असूल पर चलना सिखी धर्म है? हमारा सवाल तो यह है कि क्या आपके पास कुछ अपना भी है या सब कुछ इधर उधर से मांग कर बनाया है?

दाअवा—मुसलमानों की रसालत (गुरयाई) हजरत मुहम्मद साहिब पर और सिखों की गुरयाई श्री गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज पर खत्म (समाप्त)होगई है यह एतकाद (विश्वास) सिखों और मुसलमानों में यकसां (बराबर) है।

समालोचना—हां! मौज से है गुजरती, जब मिल गए दीवाने दो। पर सवाल यह है कि रसालत और गुरयाई यहां आ कर ही क्यों समाप्त होगई क्या खुदा या अकाल पुरुख के पास इतना ही सरमाया (सम्पत्ति) था; जो चन्द पैगम्बरों और दस गुरुओं पर आ कर ही समापत हो गया। इसके भी पक्षपात के

रोग ने रोगी बना रखा है, हमारा सिद्धान्त तो यह है कि इसका भण्डार समाप्त होने वाला नहीं और न अकाल पुरुष में पक्षपात ही है आदि सृष्टि मे विद्वान, धर्मात्मा, गुरु लोग पैदा होते चले आ रहे हैं और भविष्य में भी होते रहेंगे। यह सिलसला न कभी समाप्त हुआ है और न होगा। हमारे नवीन सिख भाई यदि इस सम्बन्ध में और पूछना चाहें तो अपने नामधारी सिखों से पूछ लें जिनका गुरुओं का सिलसला बराबर जारी है।

दाअवा- देवी तो गुरु महाराज के दरबारकी झाड़ूबरदार थी।

समालोचना- जिस देवी को हमारे पौराणिक भाई जगत माता मान कर आदर करते और उपास्य देव मानते हैं तो उसको क्या मुसीबत पड़ी थी कि वह गुरु नानक देव जी के दरबार की झाड़ूबरदार (फेरने वाली) बन गई? क्या यह दूसरों के बजुर्गों की तौहीन (अपमान) नहीं? वास्तव मे ऐसा लिख कर नवीन सिखों ने देवीके उपासक भाईयों की दिलाज़ारी की(दिलदुखाया) है फिर उसी देवी माता के सम्बन्ध में गुरु गोविन्द सिंह जी कहते हैं कि:—

प्रमुद करण सब भय हरण-नाम चण्डका जास।
रचूं चरित्र विचित्र तव - करो सबुद्धि प्रकास॥
(चण्डी चरित्र)

अर्थात- जिस माता का नाम चण्डी देवी है जो आनन्द के देने वाली और भय को भगाने वाली है उसका विचित्र जीवन चरित्र मैं रचने लगा हूँ ऐ देवी माता! तुम मेरी उत्तम बुद्धि को प्रकाशित करो। फिर कहा:—

दैत संघारण के निमित-काल जन्म एह लीन।
सिंह चण्ड बाहन भयो- शत्रुन को दुख दीन॥

अर्थात-पापी राक्षसों के नाश करने केलिये काल (परमात्मा) ने यह चण्डी देवी का जन्म लियाथा, उस देवी की स्वारी शेर की थी, जिसने दुश्मनों को भारी दुख दिया था।

कलगीधर गुरु की अपनी वाणी और सिख इतिहास से सिद्ध है कि दसम गुरु देवी माता की उपासना किया करते थे। क्या नवीन सिख यह बतला सकते हैं कि गुरु नानक देव जी के दरबार की झाड़ू-बरदार देवी दसम गुरु गोविन्द सिंह जी की किस प्रकार उपास्य देव बन गई ! और अब नवीन सिख देवी माता की बजुर्गी और बड़ाई के क्यों मानने वाले नहीं रहे ?

दाअवा-हिन्दू लोग अवतारों के श्रद्धालू हैं, मगर सिख धर्म में इनका खण्डन है। गुरु गोविन्दसिंह जी का हुकम है कि सिख किसी, अवतार देवी देवता, वेद पुराण वगैरा पर यकीन न लाएं। अगर वह ऐसा करेंगे तो मैं उनका साथ न दूंगा।

समालोचना-यदि ऐसा है, तो फिर क्यों मानते हो कि:—

पार ब्रह्म पूर्ण ब्रह्म-गुरु नानक देव। या
गुरु गोबिन्द,गोबिन्द गुरु, जोत इक दो नाम धराये, या
निरंकार नानक देव, निरंकार आकार बनाया। या
गुरु नानक सब के सरताजा, जिसको सिमर सरे सब काजा।

अर्थात- गुरु नानक देव जी आदि दसों गुरु परमात्मा या परमात्मा का अवतार थे, मानो निराकार परमात्मा ही साकार हो कर गुरु रूप में आया था, उनके स्मरण से ही सब कारज रास आते हैं।

आप लोग अवतार-वाद का ही खण्डन मानते हैं या केवल हिन्दू अवतारों का ?

दाअवा— गुरु ग्रन्थ साहिब में हिन्दू भगतों और भाटों की बाणी में कुछ हिन्दुओं के से ख्याल और मुसलमान फकीरों की बाणी में कुछ इस्लाम के ख्याल पाए जाते हैं। इनमें कुछ ऐसे हैं जो सिखी असूलों के मुताबिक (अनुकूल) नहीं। बाअज लोग इन हवाला जात (प्रमाणों) से सिखों को मुगालता (भूल) में डालते हैं, मगर वह बाणी दूसरे मजाहब के भगतों की है न कि सत्गुरुओं की, बेशक इसकी श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में मौजूदगी जरूरी है लेकिन इसका दर्जा गुरु बाणी का नहीं, भगत वाणी का है।

समालोचना- यदि हिन्दू भगतों, भाटों और मुसलमान फकीरों की बाणी सिखी असूलों के खिलाफ थी, तो इसको गुरु ग्रन्थ साहिब में दर्ज ही क्यों किया गया था ! जबकि आपका यह दाअवा भी है कि गुरु अर्जुन देव जी ने बड़ी छान बीन करके सारी बाणी को दर्ज किया है जिन भगतों की जैसे छज्जू भगत, पीलू भगत आदि की बाणी को सिद्धांत अनुकूल नहीं समझा, इसको ग्रन्थ साहिब में दर्ज करने से इन्कार कर दिया गया था। तो फिर इस खिलाफ असूल बाणी को क्यों जगह दी गई और फिर जब आप लोग सारे गुरु ग्रन्थ साहिब को आदि से अन्त तक गुरु का दर्जा देते हैं, और इसके हर शब्द को प्रमाण मानते हैं जैसा कि आपने स्वयं ही इसके मुखपृष्ठ (बाहर का पेज) पर सब से प्रथम तथा ऊंचा दर्जा दिया है तो फिर आप गुरु रूप ग्रन्थ साहिब के इन वचनोंसे क्यों इन्कारी हैं ? देखिये एक सिख विद्वान की पुस्तक 'गुरु मत दर्शन'। जिसमें लिखा है कि मुर्दा गऊ को जीवत करना ठाकुर जी का दूध पी लेना बढ़ई तरखान का रूप धार कर नाम देव का छप्पर बनाना, आदि सारी बातें

ना ममकिन (असम्भव) थीं परन्तु इस निरंकार ने प्रेमी भगत की कामना पूरी करने के लिए न होने वाली बातें भी ममकन (सम्भव) कर दिखाईं; जिन भगतों की आपका अकाल पुरुख ना-ममकिन बातों को मानता है इन भगतों की बातों से आप क्यूं इन्कार करते हैं। और तवारीख खालसा भाग पहला के सफा (पन्ना) ४४० और ४४१ पर लिखा है कि जब अमृतसर तीर्थ की तय्यारी हो रही थी तो अकाल पुरुख स्वयं; उसके अवतार, और देवता लोग सिर पर टोकरियां उठाये मट्टी ढो रहे थे। जब सिखों ने गुरु अर्जुन देव जी से इन के सम्बन्ध में पूछा. तो बतलाया कि यह विष्णु आदि देवता हैं जो भगतों की महिमा को बढ़ाने के लिये आए हैं, अकाल पुरुख हमेशा ही ऐसे काम करता है इस ने कबीर भगत की लाज बन्जारा बन कर रखी थी, सैन नाई की हजाम (नाई) बनकर, त्रलोचन की मजदूर बनकर, धन्ना जाट की कांमा (काम करने वाला) बन कर लाज रखी थी। अब मजदूर बन कर और टोकरी उठा कर तीर्थ खोदने के लिए आये हैं। इसपर गुरु जी ने एक शब्द उच्चारण किया था :-

सन्ता के कारज आप खलोया हरि कम करावन आया राम
धरत सुहावी ताल सुहावा-विच अमृत जल छाया राम

प्यारे भाई! गुरु जी तो हिन्दू विचारों और भगतों का समर्थन कर रहे हैं परन्तु आप हैं कि गुरु सिख कहला कर गुरुओं के किये कराये पर पानी फेर रहे हैं — चेह खूब (कैसी अच्छी बात है)।

दावआ— सिख बेशक गऊ कुश (गाए हत्यारे), नहीं

इसका सबब (कारण) यह है कि वह ज्यादातर (अधिक) जमींदार हैं, नीज़ (तथा) वह हिन्दू भाईयों के मुलकी (देश) भाई होनेकी हैसीयत (दशा) में रवादारी (सहानुभूति) रखना चाहते हैं, सिख हिन्दूओं की तरह गाए को माता कह कर पूजा नहीं करते।

समालोचना—सिख यदि अधिक जमीदार (भूमिपति) हैं तो इन के लिये बैलों की पालना जरूरी है परन्तु चूंकि वह अधिकतर गऊ का दूध पीने वाले, घी, माखन और लस्सी पीने वाले हैं इस लिए गऊ उनकी माता भी है जैसा कि जन्म साखी के सफा १५६ पर लिखा है:-

गऊ चौधवां रत्न है, काम धैन तेह नाम।
पूजन सब अवतार तिसें, करके मात समान।
शीर जिन्हा दा पीविये, तिस मारयां बहुत गुनाह
नानक आखे रुकन दीन, बहु सुखियां होय निबाह

अर्थात— गुरु नानक देव जी तस्लीम कर रहे हैं कि गऊ चौधवां रत्न और कामधेनु है; हिन्दू अवतार और ऋषि मुनि इस लिये इसकी पूजा या सत्कार करते हैं क्योंकि जिसका दूध पिया जावे वह माता का दरजा (स्थान) रखती है, उसका मारना भारी गुनाह (पाप) है। और कहा कि गऊ तो भूखों को जीवका देने वाली और निर्वाह कराने वाली है।

जन्म साखी के सफा १४५ पर आदेश दिया गया है कि:-

वड्डा पाप गऊ वद्ध है, जिस पर सारे लोए।

फिर कहा:-

पापी वहु प्रकार दे उत्तम मध्यम जान
हत्या खट प्रकार है मन में लै पछान।

गौ ब्राह्मण मारिये, गोत्री हित कराये
ऋण हत्या, कन्या हत्या, विश्वासघात अधिकाए।

अर्थात- गऊ का मारना इस लिये घोर पाप है क्योंकि इस पर सारे संसार का आश्रय है, हत्या छेः प्रकार की है, गऊ और ब्राह्मण को मारना, गोत्र हत्यारा, ऋण लेकर न देने वाला, लड़की को मारने और बेचने वाला और विश्वासघाती यह छेः कसाई हैं इस सम्बन्ध में विस्तार से देखना हो तो हमारा लिखा ट्रैक्ट 'सिख गुरु और गऊ रक्षा" पढ़िये जिसमें न मानने वालों के लिये लाजवाब (निरुत्तर) प्रमाण हैं।

दाअवा- हिन्दुओं में वेद सब से मुकद्दस (पवित्र, उत्तम) है मगर सिखों में गुरु ग्रन्थ साहिब। वेदों के मुतअल्लक (सम्बन्ध में) श्री गुरु ग्रन्थ साहिब के यह अहकाम (आदेश) हैं:-
(१) शास्त्र स्मृति बिनशेगे वेदा। (२) पंडत मैल न चूकई, जे वेद पढ़ें जुगचार (३) वेद कतेब स्मृति इन पढ़ियां मुक्त न होई।

समालोचना-वेद ईश्वरी ज्ञान है, इसलिये नित्य और अनादि है आदि सृष्टि में परमात्मा इसको प्रकाशित करते हैं. फिर परलै में यह अपने कारण रूप में मौजूद (उपस्थित) रहते हैं, इनका सर्वथा अभाव नहीं होता, हां! मनुष्य कृत ग्रन्थ चाहे स्मृति हों या पुराण, कुरान हो या गुरु ग्रन्थ साहिब, यह बिन्स जाया करते हैं, क्योंकि जो बनता है उसका बिगड़ना लाज़मी (अवश्य) है।

प्यारे भाई! कागज़ पर छपी पुस्तकों का नाम वेद नहीं, यह तो लिखे और छापे जाते हैं तब समय पाकर फट जाते और नाश हो जाते हैं, यह हाल सारे ग्रन्थों का है। इस लिये तो इन ग्रन्थों की पूजा, भेंट, चढ़ावा और उनके आगे अरदास करना

बुत प्रस्ती (मूर्तिपूजा) है। जब गुरु ग्रन्थ साहिब ही वेदों की बजुर्गी(महानता) और ईश्वरी ज्ञान होने को मानता है तो आपका इन्कार क्या अर्थ रखता है। देखिये गुरु अर्जुन देव जी राग गौड़ी में आदेश दे रहे हैं, कि:-

वेद व्याखान करत साधु जन— भाग हीन समझत नहीं खल।

अर्थात— साधु लोग या ऋषि मुनि महात्माजन वेदों के व्याख्यान करते हैं या वेदों के आधार पर लोगों को सत्यज्ञान का उपदेश देते हैं परन्तु अभागे और मूर्ख लोग इसको समझते ही नहीं। गुरु अमर दास जी ने कहा है. कि:-

वेदों में नाम उत्तम सो सुने नाहीं - फिरें ज्यों बे तालिया
कहो नानक जिन सच तजया कूड़ लगे - तिन जन्म जूए हारिया

अर्थात- वेदों में ईश्वर का नाम या गुण कर्म स्वभाव और ज्ञान उत्तम ढग से दिया गया है इसको तू सुनता नहीं, पागलों की तरह इधर उधर भटक रहा है नानक जी कहते हैं कि जिन लोगों ने सच्चाई छोड़ कर झूट को ग्रहण किया, वह अपने बहु-मूल्य मनुष्य-जन्म को जूए में हार गए।

गुरु नानक देव जी जप जी साहिब में आदेश देते हैं कि:—

ओड़क ओड़क भाल थके; वेद कहन इक बात

अर्थात- लोग सच्चाई की तलाश में दूर दूर तक भागे, वेद ही एक, और सच्ची बात बतलाते हैं। वही ईश्वरी सत्य ज्ञान का कोष हैं। फिर कहा :—

गावन पंडित पढ़न रिखीश्वर, जुग जुग वेदों वाले।

अर्थात- प्रभु के सत्य ज्ञान को वेद वक्ता पंडित लोग गाते

और ऋषि लोग हर जमाना (समय) में वेदों द्वारा पढ़ते हैं। गुरु राम दास जी राग सूही में कह रहे हैं, कि:—

बाणी ब्रह्मा वेद धर्म दृढ़ो-पाप तजाया बलराम जिओ।

अर्थात- ईश्वरी बाणी वेद को पढ़ो और इस पर दृढ़ता से आचरण करो, इसमें तुम्हारे सब पाप कट जाएंगे और आत्मिक बल की प्राप्ति होगी।

प्यारे भाई! आपने जो प्रमाण वेद के खण्डन में पेश किये हैं वह तो उलटा वैदिक सिद्धान्त का मण्डन कर रहे हैं। गुरु जी साफ कह रहे हैं, कि यदि कोई वेदों शास्त्रों या गुरु बाणी को लम्बे समय तक पढ़ता रहे परन्तु उसके अनुकूल अपना आचरण न बनाए तो उसके मन की मैल या पाप दूर नहीं होते। इनके पाठ मात्र से मुक्ति नहीं होती। परन्तु आज जो भाई गुरु ग्रन्थ साहिब का साप्ताहिक पाठ या अखण्ड पाठ रखवा कर दुखों की निवृत्ति या मन की भावनाओं के पूर्ण होने की आशा रखते हैं वह भूल में हैं।

आप ने अपने पक्ष की सिद्धि में जो प्रमाण ऊपर दिये हैं यह भगत बाणी के हैं, आप तो स्वयं, लोगों को भूल में डालकर मुजरम (अपराधी) बन रहे है। ऐसा प्रतीत होता है कि आपको इन बातों की तमीज (विवेक) ही नहीं, वरना इन प्रमाणों को पेश ही न करते। क्या जो ग्रन्थ साहिब छापा खानों में छपते हैं वह परलै तक पुस्तक रूप में कायम (स्थिर) रहते हैं? हम तो ग्रन्थी भाईयों के मुंह से सुनते हैं कि अब बाबा जी (ग्रन्थ साहिब) वृद्ध (जीर्णजीर्ण) हो गए और जीर्ण हो कर जल प्रवाह कर दिये गए।

दावा—अब हिन्दुओं और सिखों के असूलों का मुकाबला किया जाता है जिस से फौरन (तत्काल) अन्दाजा (अनुमान) लगाया जा सकेगा कि सिख हिन्दू नहीं।

असूल	सिख अकीदा (विश्वास)	हिन्दू अकीदा (विश्वास)
१. गुरु मन्त्र	वाहिगुरु	ओ३म
२. मंगलाचरण	एक ओंकार से सतगुरुप्रसाद तक	ओम श्री, गणेशायनमः
३. मिलाप के वक्त (समय)	वाहिगुरु जी का खालसा वाहिगुरु जी की फतह	राम राम या नमस्ते वगैरा (आदि)
४. धर्म पुस्तक	श्री गुरु ग्रन्थ साहिब	वेद शास्त्र रामायण वगैरा (आदि)
५. तीर्थ	पांचों तख्त साहिबान गुरुद्वारे	गंगा जमुना हरिद्वार वगैरा (आदि)
६. पूजने की तरफ	चारों तरफ अरदास करने की इजाजत (आज्ञा)	मशरक (पूर्व)
७. पाठ	जितनेम, आसा दी वार वगैरा (आदि)	सन्ध्या वगैरा
८. सस्कार	अमृत, आनन्द, विवाह वगैरा (आदि)	मुण्डन, जंजू वगैरा (आदि)

९. निशान (चिह्न)	पाचों ककके	तिलक जंजू वगैरा (आदि)
१०. बड़े दिन	गुरु पूर्व गुरु साहिबान	जन्माष्टमी, राम नवमी शिवरात्री वगैरा
११. भेंट	कड़ाह प्रसाद	चूर्मा, शक्कर, लड्डू
१२. लिबास, भेस)	कछेहरा और दस्तार	धोती, सिर से नंगे
१३. पूज्य	खालसा पन्थ	ब्राह्मण, सन्यासी वगैरा
१४. शादी (विवाह)	आनन्द कारज	वेदी (वेदोक्त)

समालोचना—(१) वाहिगुरु शब्द ईश्वर के अर्थ में दसों गुरुओंने प्रयोग ही नहीं किया, तो यह आपका गुरुमन्त्र कैसे बन गया ? यह तो भाटोंने प्रयोग किया था, इसलिए इसको भाट मन्त्र तो कह सकते हैं, गुरु मन्त्र नहीं। गुरु मन्त्र तो आप का एक ओंकार है जो ओम् के समान है और यही गुरुबाणी के आदि में लिखा है।

(२) ओं गणेशायनमः का अर्थ है – एक ओंकार जो प्राणी मात्र का स्वामी है को नमस्कार, तो क्या आप का वाहिगुरु केवल सिखों का ही स्वामी है ?

(३) अगर खालसा वाहिगुरु (परमात्मा) का है तो बाकी दुनियां किसकी है! यदि नमस्तेशब्द ठीक न था तो दसमगुरु कलगी धरने जाप साहिबमें अठानवेंबार क्योंलिखा? और रामशब्द गुरुग्रन्थ साहिब में चौबीस हजार दोसौ बार क्यों लिखा है ?

(४) जब तक गुरु ग्रन्थ साहिब को गुर्याई न मिली थी तब तक सिखों का धर्म पुस्तक कौन सा था। गुरुनानक साहिब बेदी

इसीलिए थे कि उनके पूर्वज वेद पढ़े थे और उन्होंने जपजी साहिब में वेद को ईश्वरी ज्ञान माना था। गुरु कलगी धर ने रामकथा (रामायण) को जुग जुग अटल क्यों लिखा था ?

(५) यदि अरदास चारों ओर हो सकती है तो गुरु ग्रन्थ साहिब के सामने खड़े हो कर क्यों करते हो ! क्या कोई सिख ग्रन्थ (दरबार) साहिब की तरफ पीठ करके अरदास कर सकेगा !

(६) आप ने इस पुस्तक के हवन प्रकरण में तीर्थों का खण्डन किया है फिर आपके हां पाचों तख्त और गुरु द्वारे कैसे तीर्थ बन गए ?

(७) पाचों बाणियां तो गुरु अर्जुन देव जी के बाद पूर्ण हुईं पहिले चार गुरुओंके सिख किसका पाठ करते थे? और गुरु नानक जी ने किसका पाठ किया था ?

(८) अमृत संस्कार तो सं० १७५६ में जारी (प्रचलित) हुआ, पहिले दस गुरुओंके संस्कार क्या थे ? गुरु अर्जुनदेव जीने हरगोविन्दजी के सारे संस्कार वेद रीति सेक्यों करवाए थे !

(९) मज़हबी निशान (धार्मिक चिह्न) तो भेख (वेष) में शामिल है उसके धारण करनेवाला सिख अगर धर्मात्मा बन सकता है तो कई सिख इखलाकी जुर्म (नैतिक अपराध) करके जेलों में क्यों बन्द हैं !

(१०) गुरु पर्व बड़े दिन हैं तो छोटे दिन कौन से हैं ! क्योंकि परमात्मा ने तो सारे दिन २४ घन्टे के बराबर बनाए हैं !

(११) भेंट के लिए गुरु ग्रन्थ साहिब का कौन सा प्रमाण है जिस में यह लिखा है कि मैं कड़ाह प्रसाद तो स्वीकार कर लूंगा

परन्तु चूर्मा, शक्कर, लड्डू परे फैंक दूंगा !

(१२) कछैहरा और दस्तार यदि सिखों का लाज़मी (आवश्यक) और कुदरती (प्राकृतिक) लिबास (पहरावा) है तो जन्म के साथ ही पैदा क्यों नहीं होता, जब कुदरत (परमात्मा) ने नंगे सिर पैदा किया था तो इन्कार क्यों न किया ?

(१३) खालसा पन्थ का सं० १७५६ में निर्माण हुआ इससे पहले सिखों का कौन पूज्य था !

(१४) आनन्द कारज बिल १९०८ई० में बना था और सिख संस्कार विधि १९१४ ई० में, इससे पहिले दसों गुरुओंके विवाह वैदिक रीतिसे हुए थे और दसों गुरु साहिबान जनेऊधारी थे इस सम्बन्ध में ज्यादा देखना हो तो हमारा ट्रैक्ट "सिख गुरु और यज्ञोपवीत" पढ़ो।

यह हैं सिख और हिन्दू असूलों (नियमों) के सम्बन्ध में संक्षिप्त प्रश्नावली, जिसका विचार पूर्वक उत्तर देना हर सिख विद्वान का कर्तव्य है।

दाअवा—सिख हिन्दू नहीं की मज़बूती (पुष्टि) के वास्ते चन्द गुरुबाणी और सिख इतिहास के सबूत (प्रमाण) :-

(१) न हम हिन्दू न मुसलमान।

(२) हमारा झगड़ा रहा न कोऊ-पंडित मुल्ला छाडे दोऊ।

(३) हिन्दू अन्हा तुर्क काना, दोहां ते ज्ञानी (खालसा) सियाना।

(४) हिन्दू पूजे देहरा मुसलमान मसीत-नामे सेई सेवयां न देहरा न मसीत॥ इलावा अर्जी (इसके अतिरिक्त) रहिब

नामों और सिख इतिहास के प्रमाण दर्ज किये हैं।

समालोचना-(१) यह चारों प्रमाण कबीर और नामदेव धोबी के हैं जो भगतबाणीका दर्जा रखते हैं गुरुबाणीका नहीं।

(२) रहितनामे दसों गुरुओं के बाद के सिखों ने लिखे हैं।

(३) सूर्ज प्रकाश, पन्थ प्रकाश गुरुओं के बाद लिखा गया इतिहास हैं यह गुरुबाणी का दर्जा नहीं रख सकते और जब तक गुरुबाणी के अनुकूल न हों तब तक काबल सबूत (प्रामाणित) नहीं।

दाअवा- सहजधारी सिख वह है जिस का ईमान सिखी पर है मगर कुछ हालात के सबब से खंडे का अमृत ले कर केसधारी खालसा नहीं बना, जब तक खालसा नहीं बना उसकी कमजोरी है।

समालोचना-जिस का ईमान (विश्वास) सिखी पर है परन्तु सिखी के खिलाफ (विपरीत), वह सहजधारी सिख कैसे? अमृत की रीति, (खालसा पन्थ प्रकाश) तो सम्मत १७५६ में अमल (प्रयोग) में आई थी, तो क्या इस से पहिले के गुरसिख कमजोर और अधूरे थे? इस बात का क्या प्रमाण है कि पहिले के सिख अधूरे थे और अब के पूरे? यह बात भी नोट कर लें कि गुरु अङ्गद से ले कर दसम गुरु तक सारे गुरु पहिले तो वह, सिख थे, फिर बाद में गुरु बने थे, उन में कमजोरी रहने का क्या कारण? ठीक इसी प्रकार जैसे आप के मान्नीय लीडर मास्टर

तारा सिंह जी और उन के भाई पहिले कमजोर सिख थे बाद में अमृत ले कर बलवान हो गए।

दाअवा— बावजूद कई कोशिशों के हमारे बहुत से जात अभिमानी हिन्दू भाईयों के दिल से छूत छात का असर दूर नहीं हो सका।

समालोचना-आप के घर का भी तो यही हाल है। इस समय तक चौथे पौड़े के सिख मजहबी सिख और रईदासी सिख अछूत माने जाते हैं, जरा ग्रामों में फिर कर देखिये, जाट सिख इन गरीबों को न कुएं पर चढ़ने देते और न ग्रन्थ साहिब के दर्शन करने देते हैं। कई जगह उनके गुरुद्वारे और गुरु ग्रन्थ साहिब अलग हैं, जहां का कड़ाह प्रसाद ऊंची जाति के सिख कदाचित नहीं खाते, गोया कड़ाह प्रसाद गुरु की भेंट तो हो सकता है परन्तु सिख इसे छू तक नहीं सकता क्योंकि इसको चौथे पौड़े के मज़हबी सिख ने बनाया है।

दाअवा— कहा जाता हैं कि सिख इसलिए हिन्दू हैं कि सिख सत्गुरुओं और सिखों ने हिन्दुओं की हिफाज़ित (रक्षा) की; दयानत दार पोलीस और फौज तमाम रयीयत की हिफाज़ित (रक्षा) करती है क्या यह जरूरी है कि रयीयत का मज़हब पोलीस और फौज का मज़हब हो जाए।

समालोचना— दसों गुरु साहिबान और हिन्दू तो एक ही थे,

इनको दो समझने वाला अज्ञानी है। गुरुओं ने यदि मुगल हकूमत से जंग किये तो अपनी आन और धर्म की रक्षा के लिये किसी पर कोई एहसान नहीं किया, उस वक्त सारी हिन्दू जाति उनको अपना मान कर ही उन का साथ देती रही, सिख तो उलटा शत्रुओं का साथ ही देते रहे जैसा कि वीर वैरागी बन्दा के समय फर्रुखसैर के साथी बने थे।

प्यारे भाई! अब जब मैंकालिफ साहिब की शागिर्दी में नवीन सिख हिन्दुओं से अगल हो चुके हैं, तो हिन्दुओं की रक्षा कौन कर रहा है उलटा बटवारे के दिनों में हिन्दुओं ने सिखों को अपना गोश्त (मांस) और पोस्त (चमड़ा) जान कर कई जगह उन की रक्षा की थी। इस बात को भली प्रकार समझ लिया जावे कि हिन्दू किसी भी बात में सिखों से कमजोर या उन की सहायता के मोहताज (अधीन) नहीं हैं। हिन्दू प्रजा थे और सिख पोलीस और फौज, इसका कोई प्रमाण भी है यां जबानी डींग।

दाअवा—अछूत खुद (स्वयं) हिन्दुओं से तंग हैं, वह महाशय कृष्ण और गोस्वामी गणेश दत्त से पूछ कर सिख नहीं बनेंगे।

समालोचना—अछूत हिन्दुओं की अपेक्षा सिखों से जयादा तंग हैं बल्कि जाट सिखों से दूसरी जातियों के सिख साधारण और मजहबी आदि अछूत सिख विशेष कर नालां व गिर्यां (दुखी) हैं और नित नये मुज़ालिम (कष्टों) का शिकार। महाशय

कृष्ण जी और महर्षि दयानन्द के अनुयाइ आर्य वीर ही उनकी तकलीफों (कष्टों) को दूर करने में सामर्थ हैं, उनकी कोशिशों का बल है कि आज देशसे जातपात और छुआ छूत का भूत भागता नजर आ रहा है। विश्वास रखिये, दयानन्द के वीर सैनिक देश की कुरीतियों और फूट का सर्वथा नाश करके दम लेंगे, जबकि देश के कोने कोने से यह सदा (ध्वनि), आवाज बुलन्द होगी :-

सारे जगत से अच्छा भारत वर्ष हमारा।
इसके गुणों का सिक्का मानेगा जगत सारा ।

ओम शम्

गुरु घर में

धन और मान के झगड़े

भूमिका

प्यारे पाठक ! जब तक देश से साम्प्रदायक पक्षपात और आपस का वैर विरोध नहीं छूटता, तब तक देश सुखी नहीं हो सकता। यह निश्चय है कि यदि देश के विद्वान लोग ईर्षा, द्वेष, स्वार्थ और मान बड़ाई की भावना को छोड़कर देश और जाति के लाभ के लिये निस्वार्थ काम करें, झूठ को छोड़ सच्चाई का आश्रा लें, तो लोग एकता के सूत्र में बन्ध कर सुखी हो सकते हैं। वास्तव में विद्वानों के विरोध ही ने साधारण जनता को विरोध जाल में फसा रखा है यदि यह नेता लोग धन और मान के स्वार्थ में न फंस कर सब की भलाई को अपनी भलाई समझें तो एक मत हो कर देश और जाति का कल्याण कर सकते हैं। गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज ने कहा भी है कि :-

धन धन धन को भाखिये, जा का जगत गुलाम-
सब इसको निरखत फिरें, सब चल्ल करत सलाम।

इस धन और मान की इच्छा ने ही दुर्योधन को अभिमान में अन्धा बना दिया था, इस कुल-हत्यारे की गलती (भूल) ने ही देश को गिरावट के गढ़े में धकेल दिया था। आपस की फूट ने ही पृथ्वी राज चौहान की आंखें निकलवाईं, यही फूट गुरु नानक देव जी के जीवन में ही सिख मत के पैरुओं में घुस आई थी जिसने पाचवें गुरु के बाद भयंकर रूप धारण किया, इसी फूट ने गुरु गोविन्द सिंह जीसे पंजाब छुड़वाया, इसके कारण बाबा बन्दा के बन्द बन्द काटे गए। इसी ने पंजाब से सिख राज्य को समाप्त किया। इसी ने १८५७ ई० के स्वतन्त्रता युद्ध को असफल बनाया इसी से भारत का टुकड़ा कट कर पाकिस्तान बना। आज इसी फूट को अपना कर मास्टर तारा सिंह और उनके विचारों के अकाली नेता देश में बद अमनी (अशान्ति) और परस्पर नफ़रत (घृणा) फैला रहे हैं।

इसी लिये देश वासियों को फूट के भयानक आक्रमण से बचाने के लिये यह कुछ शब्द लिखे हैं, आशा है कि कल्याण मार्ग पर चलने के उच्छुक इसका विचार पूर्वक मनन करेंगे, आप सुखी होंगे और देश को सुखी बनाएंगे।

अमृतानन्द सरस्वती

॥ ओ३म् ॥

फूट का कारण, धन और मान

विचार आरम्भ

श्री गुरु नानक देव जी का जन्म सं० १५२६ वि० में पंजाब प्रान्त के राये भोए की तलवंडी नामक ग्राम में हुआ, जिसको इस समय ननकाना साहिब कहतेहैं, आपका विवाह मूलचन्द खत्री की सुपुत्री सुलखनी से हुआ था. जिससे, बाबा सिरी चन्द जी और बाबा लखमी दास जी दो सुपुत्र उत्पन्न हुए। बाबा सिरी चन्द जी बड़े त्यागी और वैरागी महात्मा थे, आपने गृहस्थ आश्रम में प्रवेश न कर आयु भर तप त्याग और ईश्वर भक्ति का जीवन व्यतीत किया। कारण का पता नहीं, कि गुरु नानक देव जी ने अपने पुत्रों को गुरु गद्दी न देकर लहना जी (गुरु अंगद) जी को अपना जांनशीन (स्थानीवत) बनाया जिस से उनके दोनों पुत्र तथा उनकी धर्म पत्नि बहुत नाराज (रुष्ट) हुए उन्होंने इस पर इतना झगड़ा किया कि गुरु नानक देव जी ने गुरू अंगद देव जी को करतारपुर छोड़कर खडूर साहिब रहने का मशवरा (प्रामर्श) दिया। इस घटना से साफ सिद्ध है कि इस झगड़े और आपसी फूट का कारण गुरु गद्दी से प्राप्त होने वाला धन और मान ही था। हालांकि बाबा सिरी चन्द के ऊंचे चरित्र और गुणों का इतना प्रभाव था कि छटे गुरु हर गोविंद जी तक सारे गुरु आप को मान की दृष्टि से देखते रहे थे, चुनांचि हर वर्ष आप को पांच सौ रुपया और एक घोड़ा भेंट रूप में दिया जाता था, बल्कि छटे गुरु जी ने अपना सुपुत्र गुरु दित्ता

भी बाबा सिरीचन्द के अर्पण कर दिया था, जो उनके बाद उदासी मत का जांनशीन (स्थानीवत) बना। बाबा सिरी चन्द जी ने अपने पिता गुरु नानक देव जी को गुरु न धारण करके श्री अविनाशी मुनि जी को गुरु धारण किया था।

गुरु अङ्गद देव जी के दो सुपुत्र थे, दातो जी और दासो जी, आप ने भी अपने पुत्रों को गुरयाई न दे कर अमर दास जी को अपना जांनशीन (स्थानीवत) बनाया। गुरु अमर दास जी आयु में गुरु अङ्गद देव जी से बड़े थे परन्तु उन की सेवा से प्रभावित हो कर गुरयाई का अधिकार अमर दास जी को दिया, जिस से दातो जी और दासो जी नाराज हो गए। गुरु अङ्गद देव जी का लड़का दातो अपनी अलग गुरगद्दी बना कर खडूर साहिब में बैठ गया और आज्ञा दी कि – अमरू बूढ़ा है और मेरा सेवक है मैं साहिबजादा गुरु जी की अन्श और गुरयाई का अधिकारी हूँ परन्तु गुरु अमर दास जी का मान दिन प्रति दिन बढ़ने लगा। वह गोयंदवाल में रहने लग गए थे। एक बार एक आदमी ने दातो जी से कहा कि तेरा नौकर अमरू तो राज कर रहा है, तू मालिक था परन्तु अब चाकरों का भी चाकर है; सिखों का बेअन्त धन चढ़ावे के रूप में अमर दास को मिल रहा है। यह सुनकर दातो प्रातः काल ही उठ कर गोयंदवाल पहुंचा, गुरु जी के पास शानदार सज धज देख कर दातो कहने लगा कि कल तक तो तू हमारे घर का पानी भरने वाला था परन्तु आज तू गुरु बन बैठा है, इतना कह कर दातो ने गुरु अमर दास जी को ज़ोर की लात मारी और उन को सिहासन से नीचे गिरा दिया। इस घटना से भी सिद्ध है कि झगड़े और फूट का कारण धन और मान था।

बलवंड और सत्ता रबाबी थे जो गुरु अङ्गद देव जी के दीवान में संगतों को शब्द कीर्तन सुनाया करते थे, एक बार उन्हों ने गुरु जी से पांच सौ रुपया अपनी लड़कियों के विवाह के लिये मांगा गुरु जी ने वैसाख मास में देने को कहा, बलवंड बोला हम इतना इन्तजार (प्रतीक्षा) नहीं कर सकते हमें रुपया जलदी मिलना चाहिये, चाहे उधार ले कर दो। गुरु जी ने कहा उधार लेना ठीक नहीं। इस पर उन्हों ने गुरु जी को सख्त सुस्त कहना शुरु कर दिया और कहने लगे, कि हम ने आप का यश गा गा कर आप को मशहूर किया है यदि हम कीर्तन न करें तो लोग आप को चढ़ावा न दें। इस लिये इस से नाराज हो कर उन्हों ने दीवान में आना और कीर्तन करना छोड़ दिय। इस घटना से सिद्ध है कि गुरु दरबार में कीर्तन करने वाले रागी भी गुरयाई को धन और मानका साधन जानतेहैं और यहीथा आपसकी फूट का कारण।

गुरु अमर दास जी ने गुरयाई अपने पुत्रों को न दे कर अपना जांनशीन (स्थानीवत) अपना दामाद (जमाई) गुरु राम दास जी को बनाया इस पर उनके पुत्र सख्त मुखालिफ (घोर विरोधी) हो गये; बीस बिसवे पहले ही यह विचार कर कि हमारे पुत्र मोहन जी मोहरी जी गुरु राम दास जी को दुख देंगे गुरु जी ने उनको कहा कि सिखों के लाभ के लिये गोंयंदवाल की बजाए कोई और जगह तलाश करें। वहां एक शहर बसा लें चुनांचि इस मुखालफित (विरोध) से डर कर चौथे गुरु राम दास जी ने अमृतसर बसाया। गुर पुत्र अपनी अलग गद्दी बना कर गुरयाई करते रहे अतः आज भी भले साहिबजादे अपने अलग सिख बना कर उनके गुरु बने हुए हैं और कार भेंट प्राप्त करते हैं।

गुरु राम दास जी ने गुरयाई रखी तो अपने परिवार में ही, परन्तु अपने बड़े पुत्र पृथी चन्द को जांनशीन न बना कर छोटे पुत्र अर्जुन देव को गुरु बनाया, जिससे पृथी चन्द इतना नाराज़ हुआ कि आयु भर अपने भाई का शत्रु बना रहा, मुसलमान राज्य कर्मचारिकों से मिल कर गुरु अर्जुन देव और उनके सिखों को नुकसान पहुंचाता रहा। बादशाह जहांगीर को सदा ही गुरु अर्जुन देव के खिलाफ (विरुद्ध) भड़काता रहा। मैकालिफ साहिब और ज्ञानी प्रताप सिंह ने लिखा है कि गुरु राम दास जी के पुत्रों में पृथी चन्द सबसे बड़ा था। सारा काम काज, आय व्यय का ब्योरा और चढ़ावा लेने का प्रबन्ध उसी के पास था। संगतों में उसका बड़ा रसूख था। मसन्दों (जो गुर भेंट बाहर से इकठी करके लाया करते थे) के साथ खूब मेल था, परन्तु जिस प्रकार पत्थर पानी में रह कर भीगता नहीं, गुरु जी के पास रह कर भी उसका मन कठोर ही रहा। यह गुरगद्दी को मान बड़ाई और पूजा भेंट लेने का साधन समझता था, वह गुरु जी से झगड़ा करता कि बड़ा पुत्र मैं हूँ गद्दी का अधिकार मेरा है, सम्पत्ति का मैं मालक हूँ. इस प्रकार उसने अपने पिता और गुरु राम दास जी को भी खरी खोटी बातें सुनाई।

आगे चल कर ज्ञानी प्रताप सिंह जी लिखते हैं कि बड़ा भाई पृथी चन्द और उसका लड़का मेहरबान, गुरु अर्जुन देव जी के घोर विरोधी थे, राज्य ने उन्हें मालवे में कोठा ग्राम जागीर में दी ताकि भाईयों की परस्पर फूट रहे। यह फूट ही गुरु अर्जुन देव जी की शहीदी (बलिदान) का एक कारण थी।

हम पहले लिख चुके हैं कि बाबा गुरुदित्ता जी गुरु हरगोबिन्द

जी के पुत्र थे, जिनको गुरु जी ने बाबा सिरी चन्द जी के अर्पण कर दिया था और वह उदासी मत के गद्दी नशीन बन गए थे। बाबा गुरुदित्ता जी के पुत्र बाबा धीर मल जी गुरु बनना चाहते थे, परन्तु गुरु हरगोबिन्द जी गुरु गद्दी बाबा गुरुदित्ता के छोटे पुत्र हरराये जी को देना चाहतेथे जिससे बाबा धीरमलने अपनी अलग गुरुगदी स्थापित कर ली। गुरु अर्जुनदेव जी का लिखवाया हुआ ग्रन्थ साहिब उसी के अधिकार में था इस मुखालफित (विरोध)के कारण ही वह मुगल राज्य का तरफदार (साथी) था, अतः जब मुगल सेना ने एक बार करतारपुर को घेर लिया था. तो बाबा धीर मल ने अपने दादा गुरु हरगोविन्द जी के खिलाफ गद्दारी की। पहले तो वह माता जी को कहता रहा कि लड़ाई का कोई लाभ नहीं गुरु जी को मुगलों के साथ युद्ध नहीं करना चाहिये, परंतु युद्ध के दिनों में उसने सूबा जालन्धर को चिठी लिखी कि मैं तुम्हारा साथी हूँ। गुरु जी को इस चिठी का पता चल गया और धीरमल की कुछ पेश न गई।

बाबा धीर मल जी गुरु गद्दी के झगड़े के कारण ही सातवें, आठवें और नावें गुरु का विरोधी बना रहा। एक बार गुरु तेग बहादर पर बन्दूक का आक्रमण किया और उन का कन्धा जख्मी कर दिया। तात्पर्य यह कि गुरयाई की आय, धन और मान ही परस्पर फूट का कारण बने रहे और गुरु पुत्र अपने सगे भाईयों के खिलाफ (प्रतिकूल) मुगल राज्य का साथ देते रहे।

औरङ्गजेब बड़ा चालाक था, वह सिख गुरुओं को आधीन करना चाहता था। सातवें गुरु, गुरु हर राये जी उस से मिल वर्तन न करना चाहते थे। औरङ्गजेब ने गुरु जी को पत्र लिखा कि वह

देहली में आ कर मिलें, गुरुजी स्वयं न गए, अपनी जगह अपने बड़े पुत्र राम राये को भेज दिया। औरङ्गजेब ने दरबार में राम राये से पूछा कि तुम्हारे ग्रन्थ साहिब में इस्लाम के खिलाफ लिखा गया है। राम राये शाही रोब (दबाव) में आ गया, उसने उत्तर दिया, बादशाह सलामत! ग्रन्थ साहिब में "मिट्टी मुसलमान की" अक्षर नहीं अतः "मिट्टी बेईमान की" लिखा है औरङ्गजेब तो यह सुनकर खुश हो गया परन्तु गुरु जी और सिख शब्द को उलटने पर बहुत नाराज हो गए। राम राये का गुरुआई का अधिकार छीन लिया गया। गुरु गद्दी पांच वर्ष के नाबालिग पुत्र गुरु हर कृष्ण जी को दी गई। राम राये इस निर्णय को सुनकर सख्त नाराज़ हुआ वह लाहौर आया और मुसलमान राज्याधिकारियों से मिल कर गुरु गद्दी प्राप्त करने का यत्न करने लगा। उस ने बाबा धीरमल को पत्र लिखा कि वह गुरु जी को कहे कि गुरुआई मुझे दी जाए, नहीं तो बहुत बुरा परिणाम निकलेगा। गुरु हर राये जी ने इस धमकी की परवाह न की। औरंगजेब ने भाईयों में फूट डलवाने के लिये राम राये को डेरादून में जागीर दे दी और सजादानशीन का पद और खिताब प्रदान किया। राम राये ने अपनी अलग गुरु गद्दी स्थापित की और गुरु घर का आयु भर विरोधी बना रहा। इस फूट का कारण भी धन और मान था।

तवारीख खालसा ज्ञानी लाल सिंह के आधार पर आनन्द पुर के किला में दसम गुरु गोबिन्द सिंह जी की बड़ी दुखदाई अवस्था थी, गुरु जी धीर और वीर थे वह किला छोड़ना न चाहते थे परन्तु सिख ठहरना न चाहते थे, बाहर से सहायता की आशा न

थी किले के बाहर कोई मित्र न था, बहुत से सिख साथ छोड़ गए थे इसलिये ईश्वर के सिवाए कोई आशा न था।

सिख वेदाअवा लिख कर घरों को चले गए थे कि न तू हमारा गुरु है और न हम तुम्हारे सिख, उन्होंने गुरु सिखी त्याग दी। गुरु जी फूट के कारण बेबस हो गए, किला छोड़ना पड़ा, सरसा नदी पर बहुत से सिख मारे गए। खालसा चमकौर में समाप्त हो गया। दूसरे की रक्षा करना तो दूर रहा अपनी रक्षा भी मुश्किल हो गई। जिस बहादर कलगीधर ने औरंगजेब के राज्य की जड़ें हिला दी थीं वह घर की फूट से विवश हो गए और दक्षिण की ओर चले गए।

गुरु गोविन्द सिंह जी के दक्षिण चले जाने के बाद कई सिख, नवाब सरहन्द के पास नौकर हो गए। कलगीधर की जबानी देश की अवस्था सुनकर वीर वैरागी बन्दा से न रहा गया वह देश और जाति को स्वतन्त्र कराने के लिये मैदान में आ गया। सिखों को एक दिन मुगल बादशाह ने ताअना (उलाहना) दिया कि तुम्हारे एक गुरु की तो दक्षिण में दुर्गति हो रही है अब एक दूसरा आया है इसकी भी ऐसी ही खबर ली जायेगी, सिख इस बात को सहन न कर सके, नौकरी छोड़ कर बाबा बन्दा से आ मिले। बाबा बन्दा ने मुगल सूबे के छक्के छुड़ा दिये। बादशाह को अपनी जान के लाले पड़ रहे थे; राज्य का बचना कठिन नज़र आता था ऐसे नाज़क (गम्भीर) समय में मन्त्रियों ने बादशाह को परामर्श दिया कि खालसा को लालच देकर अपने साथ मिला लिया जावे। बादशाह को यह बात पसन्द आ गई। खालसा को समझाया कि कह मुगलों के साथ दुश्मनी न करें, बाबे की और बाबर की

एक ही बात है. वैरागी फसाद की जड़ है, आप अमृतसर में बैठे बिठाए दस हजार रुपया मुझ से ले लो और सुलाह कर लो दाना के लालच में आकर पंछी जाल में फंस गए, सिखों ने जहरीले दूध का कटोरा पी लिया, वह बाबा बन्दा वैरागी के विरुद्ध फरख सेर से मिल गए और एक सुलाह नामे पर हस्ताक्षर कर दिये। बादशाह का काम बन गया, अब अपने ही एक दूसरे को तबाह (विनाश) करने पर तुल गए। वैरागी के जीवन का यह समय बड़ा नाजक (गम्भीर) था उसका भविष्य बड़ा डरावना था तो भी उसने मुगलों से लोहा लेने का इरादा (इच्छा) कायम रखा। अगर वैरागी जीत जाता तो भारत का इतिहास बदल जाता। परन्तु खालसा तो बाबा बन्दा के विरुद्ध मुगलों की सहायता करने का वचन दे चुका था इस लिये पांच हजार सिख मुकाबला के लिये आ गए। उनका वेतन था, सिपाही का आठ आने (आधा रुपया) और हवालदार का एक रुपया। मीर सिंह खालसा दल का नेता था। सूबा की मुसलमान फौज से तो वीर वैरागी के बहादर सिपाही दिल खोल कर लड़े, परन्तु जिन लोगों के साथ मिलकर सालों तक दुश्मन पर तलवार चलाई थी उन पर वार करना कठिन हो गया वीर वैरागी की फौज ने मैदान जंग (रणक्षेत्र) से पग पीछे हटा लिया, मानो देश का भाग्य पलट गया।

बादशाह बड़ा प्रसन्न हुआ, उसका जादू चल गया उसने खालसा दल के हौंसले और बहादरी की बड़ी प्रशंसा की, सिखों को इन्आम(पारितोषक) मिले और गुरु पत्नि को बहुत सा धन दिया। वैरागी जाति का पहला सपूत था जिसने शताब्दयों की प्रतन्त्रता के बाद पहली बार अजादी का झंडा हाथ में लिया था

परन्तु घर की फूट और अपनों की गद्दारी से सफल न हो सका। वैरागी पकड़ लिया गया, मुसलमान सुख की नींद सोए परन्तु हिन्दुओं की आशा पर पानी फिर गया। वैरागी के चारों ओर भालों की कतारें (पंक्तियां) खड़ी थीं। जिन पर उसके साथियों के कटे हुए सिर लटक रहे थे, वैरागी के छोटे से बालक को उसकी टांगों पर लिटाया गया, जल्लाद ने उसके टुकड़े कर डाले और उसका कलेजा निकाल कर मुंह पर दे मारा, लोहे की गरम सलाखों से वीर बहादर को रह रह कर मारना शुरु किया, लोहे के गर्म चिपटों से मास नोचा गया और फिर उसका एक एक बन्द काटा गया।

वैरागी की आंख बन्द होने की देर ही थी कि सिखों की आंख खुली, उन्हें अब पता चला कि वह क्या कर बैठे हैं, मुगलों ने सुलह नामे की शर्तों को एक ओर रख दिया, सिखों को चोरी खून के इलज़ाम (आरोप) में कैद कर लिया गया, कहा जाता है कि इस समय सिख का सिर काट लानेपर इनआम(पारितोषक) मिलता था. दस दस रुपये सिर का मूल्य पड़ने लगा।

कुछ वर्षों के पश्चात सरदार महां सिंह जी के सुपुत्र रणजीत सिंह ने कुंजाह के खत्री दीवान मोती राम की सलाह से लाहौर पर अधिकार कर लिया और पंजाब में सिख राज्य की नीव रखी इसके पश्चात जरनैल हरीसिंह नलवा ने काबल तक अपने राज्य का सिक्का जमाया, परन्तु जिस जाति में फूट की खानदानी बीमारी घर कर कुकी हो उसका इलाज कठिन। इन हर दो वीरों की मृत्यु के बाद कौमी गद्दार (विद्रोही) अंग्रेजों से जा मिले। लाल सिंह और तेजा सिंह जैसे सिख सरदारों ने सिख राज्य का तख्ता उलट के रख दिया। यहां एक कहानी याद आ गई है:-

कहते हैं एक स्त्री कांच की चूड़ियां बेचती हुई किसी एक महले में आ निकली दोपहर हो गई थी भूख ने तंग किया तो भोजन बनाने की तय्यारी करनेलगी, मिट्टी का ठीकरा हाथ मेंलिया और आग लेने एक घर में जा निकली, इस घर में थोड़ी देर ठहरने पर पता लगा कि यहां फूट की बीमारी फैल रही है, परिवार के छोटे बड़े सब आपस में लड़ रहे हैं और एक दूसरे पर दोष लगा रहे हैं स्त्री को समय मिल गया, एक युवक के (जो कि इनमें होशियार था) पास जा बैठी, कहने लगी कि तुम ही तो इस घर में आदमी हो यह बाकी लोग तो सब निकम्मे हैं, तुम जितना चाहो इनको दबा कर अपना भाग ले लो और अलग होकर मौज करो मैं इसमें तुम्हारी सहायता करूंगी, यदि तुम सफल हो गए तो कुछ भाग मुझे भी दे देना। स्त्री का जादू चल गया उसको आदर के साथ बिठाया, खाना खिलाया, फिर दोनों ने मिल कर बाकी परिवार पर आक्रमण कर दिया, वह बिचारे मुकाबला न कर सके आपस की फूट के कारण एक दूसरे की सहायता को न बढ़ इस कारण मार खानी पड़ी, दोनों ने खूब धन माल लूटा, स्त्री को भी भाग मिल गया अब उसके पांव जम चुके थे, एक दूसरे को भड़काती आपस में लड़ाती और अपना भाग बांट लेती; इस प्रकार बन्दर बांट करते आग लेने आई स्त्री घर की मालिक बन बैठी। स्त्री को "फूट डालो और राज्य करो" का सफल नुस्खा हाथ आ गया था, घर के आदमियों को चिठी लिख कर उनको भी अपने पास बुला लिया इस प्रकार स्त्री का परिवार पहले परवारों को आधीन बना कर स्वयं राज्य अधिकारी बन बैठा। कुछ समय पाकर पहले परिवार के कुछ आदमियों को होश आया उनको अपनी भूल का पता लगा,

उन्होंने अपनी दुर्गति का कारण घर की फूट और स्त्री की चालाकी को समझा इस लिये उनमें से कुछ मन चले युवकों ने एक दिन समय पाकर स्त्री राज्य के विरुद्ध विद्रोह कर दिया, स्त्री भी कम चालाक न थी उसने घर के दूसरे परिवारों को धन और मान का प्रलोभन दे कर अपने साथ गांठ लिया उनको आगे कर विद्रोहियों का मुकाबला किया, बेचारे देश भक्तों को घर की फूट के कारण मुंह की खानी पड़ी। अब स्त्री के राज्याधिकारियों ने एक एक को चुन कर फांसी के तख्तों पर लटकाना आरम्भ किया, कानून ज्यादा सख्त कर दिये गए जिनसे सारे मुहल्ले को परतन्त्रता की जंजीरों में जकड़ कर रखा जाने लगा।

देश भक्त युवकों ने कई बार स्त्री के राज्य को उलटने का यत्न किया परन्तु जाति घातक रास्ते में आते और यह लोग फांसी के रस्से पर खुशी खुशी झूल जाते, आखर मुहल्ले के वीर सपूतों ने अपने लगातार बलिदानों से ऐसी अवस्था पैदा कर दी कि उस स्त्री को इस घर को छोड़ कर परिवार सहित अपने देश की राह लेनी पड़ी, परन्तु जाते २ वह इस घर की फूट से इस परिवारके टुकड़े कर ही गई, इस मुहल्लेमें अब भी कुछ ऐसे भोले परिवार है जो इसके और टुकड़े करना चाहते हैं।

प्यारे भाई! बिलकुल यही अवस्था हमारे देश की हुई जैसा कि उपरोक्त एतिहासिक घटनाओं से सिद्ध किया गया है। गुरु अर्जुन देव जी, गुरु तेग बहादुर जी, गुरु गोबिन्द सिंह जी, इन के चारों सहिबजादों और बाबा बन्दा बैरागी की जीवन घटनाएं आपके सामने हैं। इसके पश्चात स्त्री के रूप में अंग्रेज व्यापारी आए उन्होंने भारत में घर घर फूट को देखा, देश वासियों को एक

दूसरे से लड़ाया, परिणाम यह हुआ, आग लेने आए थे घर के मालिक बन बैठे। १८५७ ई० में देश भक्तों ने उठ कर जोर मारा परन्तु मुसलमान टिवानों और पंजाबके सिख जातिद्रोहियों ने अंग्रेजोंका साथ देकर उनके पांव फिर जमा दिए, इसके बाद सिखों को फौजी कवीला करार देकर हिन्दुओं से अलग करने की चाल चली गई। मैकालिफ साहिबने सिख बन कर सिख इतिहास की शकल को बदला। कुछ भाई धन, पदों और उपाधियां के लालच में आकर दाअवा करने लगे कि" सिख हिन्दू नहीं" वह लोग गुरुओं की शिक्षा को भुला कर मैकालिफ साहिब के जा चेले बने। इसी शिक्षा और फूट की नीति के आधीन मास्टर तारा सिंह और उनके कई अकाली साथी पृथक होने की रट लगा रहे हैं। कभी खालिस्तान और कभी पंजाबी सूबा के नाम पर आन्दोलन खड़ा किया जा रहा है। मस्तिष्क पर प्रभाव उन अंग्रेज शिक्षकों का है जिन्होंने तफरीक (घटाना) और तकसीम (बांटना) का हिसाब सिखलाया था। अब भी जब कई देश भक्त जमा (मिलाना) और जरब (गुणा) का हिसाब समझाने का यत्न करतेहैं तो मकालिफी विचारोंके अकाली लीडर दुहाई मचाने लग जाते हैं कि सिख पन्थ खतरा में है और हमारे अधिकार दबाए जा रहे हैं जब हम अपने अधिकारों का प्रश्न उठाते हैं तो यह लोग विरोध करने लग जाते हैं, हिन्दू सिख मिलाप के परदे में कुछ लोग यह यत्न कर रहे हैं कि सिखों की जत्थे बन्दी को तोड़ा जाए परन्तु यह सब सिखोंको धोका दिया जा रहा है और हमारे सयासी और धार्मिक अधिकारों पर मीठी छुरी चलाई जा रही है आदि आदि।

जरा विचारिये तोसही जोलोग एकजाति होकर रहना चाहते है जो सारे देशकी एक जत्थे बन्दी करना चाहतेहैं जो सबको एक जैसा अधिकार देना जाहते हैं जो फिरकादारी (सम्प्रदायकता) और अलग २ जत्थे बन्दी को मिटाना चाहते हैं, उनको अपना दुश्मन समझना देश और जाति का दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है इन फिरकाप्रस्तों की ओर से-आर्य(हिन्दू)जाति पर जो आक्षेप किये जाते हैं और जो इलजाम लगाए जाते हैं उनका एक एक करके यथा शक्ति नीचे उत्तर देने का यत्न किया गया हैं, इच्छा यह है कि आपस की गलत फहमी (भूल)दूर होकर एक दूसरे पर विश्वास बढ़े। देश और जाति एकता के सूत्र में परोई जाकर कल्याण का मार्ग अपनाए।

नवीन सिख-गुरु बाणी और सिख इतिहास के मानने वाले भली भान्ति जानतेहैं कि खालसा पन्थ हिन्दू मुसलमानसे अलग एक तीसरा पन्थ है जिस के जन्म दाता गुरु नानक देव जी थे जिन्हों ने नौ जामे(शरीर)धार कर इस की रखवाली और पालना की, फिर दसवें जामे में सर्व अंगों समेत पूर्ण किया, इस बात को गैर मजाहब (अन्य पन्थ वाले) के निर्पक्ष लोग और इतिहास कार भी अपनी पुस्तकों में मानते हैं।

समालोचना- जब से नवीन खालसा मैकालिफ साहिब के शिष्य बने हैं और फूट की खानदानी बीमारी ने दौरा किया है तब से आप लोग ऐसा मानने लग गए हैं वरना निर्पक्ष सिख विद्वान और दूसरे लोग तो दसों गुरु साहिबान को गुरबाणी और सिख इतिहास के आधार पर वैदिक धर्मी ही मानते हैं।

प्यारे भाई ! जरा सोचो तो सही, जब पहिले नौ गुरुओं के समय तक पन्थ के अंग पूर्ण ही न हो पाये थे तो जन्म किस बात का हुआ था ? किसी भी प्राणी या वस्तु का जन्म तो अंग पूर्ण होने पर ही माना जाता है. हां बचपन में नवजात बालक के अंग छोटे और निर्बल होते हैं जो जवानी में बड़े और बलवान हो जाते हैं। यदि आप के कथनानुसार पहले, नौ गुरु साहिबान, तक खालसा पन्थ के अंग न बन पाए थे तो सिद्ध हो गया कि नवीन सिख मत या खालसा पन्थ का उस समय तक जन्म ही न हुआ था। दूसरे शब्दों में गुरु नानक देव जी से लेकर दसम गुरु के पन्थ प्रकाश तक सारे गुरु और उनके सिख वैदिक धर्म के अन्तर्गत ही थे जैसा कि दसम गुरु विचित्र नाटक में लिख रहे हैं कि :-

जिन्हे वेद पठियो सो बेदी कहलाए
तिन्ही धर्म के कर्म नीके कमाए

और फिर:- इन बेदीयन के कुल विखे प्रगटे नानक राये

अर्थात—जिन महात्माओं ने वेद पढ़े थे और धर्म के पवित्र काम किये थे उन्हीं का नाम वैदिक धर्मी था और इसी बेदी खानदान में गुरु नानक देव जी का पवित्र जन्म हुआ था बल्कि दसम गुरु ने पन्थ प्रकाश किया, तब भी यह आदेश किया कि मैं ने इन सब अमृत धारियों को सोढ़ बन्सी क्षत्री बना दिया है यह वही धर्म था जिसके लिए गुरु अर्जुन देव जी शहीद हुए, अर्थात बलिदान दिया, गुरु तेग बहादर जी का बलिदान हुआ, दसम गुरु ने अपने चार साहिबजादे भेंट किये, पुरोहित दया राम और भाई मति दास जैसे ब्राह्मणों ने जिसको अपने खून

से सोचा। जिस सम्बन्ध में दसम गुरु जी ने बड़े फ़ख़र से कहा था कि :-

तिलक जन्जू राखा प्रभु ता का – कीनो बड़ो कलू का साका
साधन हेत इति जन करी – सीस दिया पर सी न उचरी

अर्थात-परमात्मा ने गुरु तेग बहादर जी के यज्ञोपवीत और तिलककी रक्षाकी जिन्होंने कलयुगमें बड़ा भारी साका(कार्य) किया धर्म प्रेमी साधु जनों के हित इतनी कुरबानी की कि अपना सीस भी वार दिया, परन्तु सी न की अर्थात पीड़ा अनुभव न की।

प्यारे भाई! आप जब यह मानते हैं कि दसों गुरु एक रूप थे जो धर्म, गुरु नानक देव जी ने मान लिया था, उसी का दसों गुरु प्रचार करते रहे परन्तु यहां यह सिद्ध कर रहे हो कि पहले नौ गुरुओं तक कमी रहती आई थी जिसको दसम गुरु ने अंगों समेत पूर्ण किया। दूसरे शब्दों में पहले नौ गुरुओं का रूप पूर्ण न होकर कुछ अधूरा ही था, तो आपका एक रूप होने का दावा स्वयं ही असत्य हो जाता है बल्कि मालूम तो ऐसा होता है कि दसम गुरु भी पन्थ को ऐसा पूर्ण रूप न दे पाये थे, जैसा रूप कि इस समय पन्थ रत्न मास्टर तारा सिंह जी और उनके विचारों के साथी अकाली सज्जन देना चाहते हैं अर्थात जाति रूपी शरीरसे काट कर खालिस्तान रूपी एक अलग जोथड़ा बना देना चाहते हैं।

देखिये औरंगजेब अपने पत्र में स्वयं लिखते हैं कि :-

"शाह आलम के कैम्प से ख्वाजा मुबारक के लिखे हुए खत (पत्र) मिले हैं, उनसे पता चलता है कि बीस हजार हिन्दू

जो अपने आप को खालसा और गुरु नानक देव के सिख कहलाते हैं, बारक जई पठानों के इलाका पर चढ़ आए हैं और काबिज हो रहे हैं।"

क्यों जी ! यह तो है एक निर्पक्ष गवाही, जिसका हवाला (प्रमाण) ज्ञानी प्रताप सिंह जी ने अपनी पुस्तक गुरु मत लैक्चर में दे कर इस के ठीक होने की तस्दीक (प्रमाणित) की है। और गुरु ग्रन्थ साहिब में भगत नाम देव, भगत कबीर आदि गुरु नानक देव जी से पहले के निर्पक्ष भगतों ने पौराणिक हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों का मण्डन किया है।

नवीन सिख–होसकता है कि नामदेवजी ने राम कृष्ण आदि अवतारों,तीर्थ महात्म एकादशी आदि व्रतों की महिमा न जानते हुए पहली (पोराणिक हिन्दू)हालतमें इसका मण्डन किया हो इस अज्ञानता की हालत का प्रमाण काबले तस्लीम(मानने योग्य)नहीं।

समालोचना– हम ऊपर बता चुके हैं कि गुरु नानक देव जी के सपुत्र बाबा सिरी चन्द जी ने उदासी मत का प्रचार शुरु कर दिया था उनके पास गुरु नानक देव जी की बाणी थी। गुरु अंगद देव जी का लड़का दातो अलग गुरु बन बैठा था। गुरु अमर दास जी के वश के भल्ले साहिबजादे गुरुबाणी का मसौदा इकठा करके अलग गुरुगद्दी स्थापित कर चुके थे। गुरु अर्जुन देव जी का बड़ा भाई पृथी चन्द गुरुओं के नाम पर फ़रजी (कलपित) बाणी रच कर गुरु बन, सिखों से अपने मसन्दों द्वारा खूब धन इकठा कर रहा था। ऐसी अवस्था में गुरु अर्जुन देव जी के लिये जरूरी हो गया कि वह शुद्ध गुरु बाणी को एकत्र

करके ग्रन्थ साहिब तय्यार करें। उन्होंने राम सर पर एक रमणीक स्थान पर डेरा लगाया। भाई गुर दास जी लिखारी नियत हुए, स्थान स्थान से गुरु बाणी और भगत बाणी इकठी की गई। गुरु अर्जुन देव जी बड़ी सावधानी से छानबीन कर ग्रन्थ साहिब लिखवाने लगे। आशय यह था कि कोई एक शब्द भी गुरु आशय या सिद्धान्त के विरुद्ध न हो। अतः भक्त बाणी इतनी ध्यान पूर्वक चढ़ाई गई कि इस में कहीं कहीं महला ५ (अपना नाम) लिखकर एक प्रकार से तस्दीक (प्रामाणित) की मोहर लगाई, कि यह मेरी ओर से शुद्ध करके दर्ज की गई है। जिन भगतों की बाणी को गुरु आशय और सिद्धान्त अनुकूल नहीं पाया उसको दर्ज नहीं किया। इतिहास बतलाता है कि भगत छज्जू, भगत पीलू आदि कई भगतों की बाणी को दर्ज करने से इनकार कर दिया।

इस पर भी अकाली नवीन सिखों का यह ढकोसला कि नामदेव और कबीर आदि भगतों की कुछ बाणी अज्ञान अवस्था की है जो ग्रन्थ साहिब में दर्ज है कहां तक ठीक हो सकता है, यदि वह सिद्धान्त अनुकूल न थी और उस समय की उच्चारण की हुई थी जबकि भगतों को अभी पूरा बोध नहीं हुआ था, तो ऐसी भ्रममूलक बाणी का ग्रन्थ साहिब में दर्ज होना कोई बुद्धिमत्ता का काम नहीं था, बात सीधी तो यह है कि आज मास्टर तारा सिंह जी और उनके हम ख्याल अकाली नेताओं का गुरु बाणी पर विश्वास नहीं रहा, वह गुरु बाणी के अनुकूल चलने की बजाए गुरु बाणी को अपने पीछे चलाना चाहते हैं। वह जिस बाणी में हिन्दू धर्म का समर्थन देखते हैं उसको अज्ञान की

अवस्था कह कर उससे इन्कारी होना चाहते हैं । जिसका साफ अर्थ गुरुओं की सरकशी है। हम सारे सिख जगत को चैलेन्ज करते हैं कि वह ग्रन्थ साहिब में दर्ज हुए एक शब्द को भी अज्ञान अवस्था की बाणी सिद्ध करें। है कोई माई का लाल अकाली जो मैदान में आए और अपने दाअवा को सिद्ध करें।

एक अकाली भाई ने एक ट्रैक्ट लिख मारा कि "सिख हिन्दू नहीं" इस ट्रैक्ट की सराहना गुरु द्वारा प्रबन्धक कमेटी और बड़े बड़े अकाली नेताओं ने की। हालांकि इस के सफा (पन्ना) २८ पर लिखा गया है कि "ग्रन्थ साहिब में हिन्दू भगतों और भाटों की बाणी में कुछ हिन्दुओं के से ख्याल और मुसलमान फकीरों की बाणी में इस्लाम के ख्याल पाए जाते हैं; इनमें कुछ ऐसे हैं जो कि सिखी के मुताबिक(अनुकूल) नहीं। कुछ लोग इन हवाला-जात (प्रमाणों) से सिखों को भूल में डालते हैं। मगर वह बाणी दूसरे मज़ाहब (पंथों) के भगतों की है न कि सतगुरुओं की। बेशक इसकी गुरु ग्रन्थ साहिब में मौजूदगी (विद्यमानता)जरूर है परन्तु इसका दर्जा गुरु बाणी का नहीं। भगत बाणी का है"। गोया यह बाणी सिखों को मान्नीय नहीं।

प्यारे भाई! जब गुरु अर्जुन देव जी ने इसको ठीक मान कर गुरु ग्रन्थ साहिब में दर्ज कर लिया, और दसम पादशाह ने एक एक अक्षर समेत इसको गुरयाई बख्श दी, तो भला वह कौन गुरु का सिख होगा जो इनसे इनकार करेगा। जबकि सारा ग्रन्थ यह कह रहा है कि गुरु ग्रन्थ साहिब प्रकट गुरुओं का शरीर है,अकाली बाणी और दसों गुरुसाहिबान की जोत है,सिख जो भी काम करे गुरुरूप ग्रन्थसाहिब की हजूरी(उपस्थिति)में गुरुको साक्ष

मान कर करें, तो फिर गुरु के इस शरीर में से भगतों की बाणी को कैसे जुदा (पृथक) किया जा सकता है। हम बड़े पुर जोर (स्पष्ट) शब्दों में घोषणा करते हैं कि कोई बहादर सिख भगतों की इस सिद्धान्त विरुद्ध बाणी को निकाल कर एक नया सिखी सिद्धान्त अनुकूल गुरु ग्रन्थ साहिब तय्यार करके दिखलाए। जिसमें से हिन्दू धर्म या इस्लाम के विचारों को अलग कर दिया जावे। हम दाअवा से कहते हैं कि कोई बड़े से बड़ा पन्थ रत्न भी ऐसा करने का साहस नहीं कर सकता, जब यह बात है तो गुरु ग्रन्थ साहिब में लिखा हुआ एक एक शब्द गुरु बाणी का दर्जा रखता है और इसमें जो कुछ भी दर्ज है वह हर गुरु सिख के लिये गुरु आज्ञा के समान है और प्रमाणिक भी।

भगत नामदेव जी का जन्म गुरु नानक देव जी से दो साल पहले हुआ था जिससे सिद्ध है कि गुरुओं के जन्म से पहले ही उन धार्मिक सिद्धान्तों का प्रचार था जिनको दसों गुरु साहिबान ने दोहराया। इस लिये दसों गुरु साहिबान ने कोई नया पन्थ नहीं चलाया बल्कि उन्होंने पौराणिक हिन्दू धर्म का ही समर्थन और अनुमोदन किया है। इस लिये अकाली सिखों का कोई अलग पन्थ, सभ्यता या धर्म नहीं।

वास्तव बात यह है कि

मुसलमान फौजें (सेना) इस्लामी सभ्यता को ले कर नदी के परवाह की भान्ति उमडी हुई भारत में आईं। उस समय हिन्दू जाति अपने घमण्ड में सुख की नींद सो रही थी। आपस की

फूट के कारण हिन्दू राजे इस परवाह को रोक न सके। इसलामी ताकत दिल्ली में स्थापित हो गई तब हिन्दू राजे अपने महल्लों में ही कांपने लगे, उस समय हिन्दुओं की आंखें खुलीं। इस का पहला प्रभाव हिन्दुओं में धार्मिक बेदारी था। इस का पता भगत कबीर की शिक्षा और विचारों से लगता है। कबीर स्वामी रामानन्द जी का चेला था। यद्यपि कबीर ने हिन्दू मुसलमान दोनों के धार्मिक सिद्धान्तों की आलोचना की, परन्तु वास्तव में वह पक्का हिन्दू था। उस के विचारों ने इसलाम के परवाह के आगे बांध खड़ा कर दिया। इस का तात्पर्य हिन्दुओं को यह जतलाना था कि यद्यपि मुसलमान लोग हिन्दुओं के अन्ध विश्वास, कुरीतियों और मूर्ति पूजा का खण्डन करते हैं परन्तु उनके अन्दर भी जहालत (अज्ञानता) और अन्ध विश्वास की कमी नहीं, इस लिये हिन्दुओं को अपना धर्म छोड़ इस्लाम की ओर रुचि रखना ऐसा है जैसा तवे से गिर कर आग में जा पड़ना। कबीर के बहुत से शब्द इसका प्रमाण हैं, जिनमें से कुछ एक को यहां दर्ज किया जाता है :—

सुन्नत किये तुर्क जे होएगा औरत का क्या करिये।
अर्ध शरीरी नार न छोड़िये तां ते हिन्दू ही रहिये॥

अर्थात— सुन्नत कराने से यदि मुसलमान बनता है तो औरत का क्या बनेगा अर्थात उस की सुन्नत कैसे करोगे। औरत तो आदमी (पुरुष) का आधा अंग है उस को तो छोड़ा नहीं जा सकता, इस लिये अच्छा तो यही है कि हिन्दू धर्म पर ही दृढ़ रहा जावे। फिर कहा :-

कहत कबीर राम गुण गावो—हिन्दू तुर्क दोऊ समझाओ।

अर्थात हिन्दू और मुसलमान दोनों को समझाओ कि वह राम का गुण गान करें।

रोज़ा धरे मनावे अल्लाह—स्वादत जेहां सं घारे।
आपा देख और नहीं देखे काहें को झक मारे।

अर्थात — ऐ मोमन! तू रोज़ा (व्रत) रख कर अल्लाह (परमात्मा) को प्रसन्न करना चाहता है अपनी जीह्वा के स्वादके लिये जानवरों को मारता है तू अपना आप तो देखता है परन्तु दूसरों के दुख का अनुभव नहीं करता इस लिये क्यों झक मारता है। फिर कहा :-

अल्लाह गैब सकल घट भीतर—हृदय लयो बिचारी।
हिन्दू तूर्क दोएं एको--कहें कबीर पुकारी॥

अर्थात- परमात्मा निराकार और सर्व व्यापक है, उस को अपने हृदयमें विचार करके अच्छी प्रकार देख लो, वह परमात्मा तो हिन्दू मुसलमान दोनों में एक समान रमा हुआ है कबीर जी इस सिद्धान्त का पुकार पुकार कर प्रचार कर रहे हैं।

प्यारे भाई! मुसलमानों के राज्य में कबीर जी का ऐसे विचारों का प्रचार करना उनके कट्टर हिन्दू होने का प्रबल प्रमाण हैं। इस रगड़ से पैदा हुई आग ही गुरु नानक जी के हृदय में काम करती थी, इसी लिये तो गुरु जी ने भगत कबीर को शिरोमणि भगत माना हैं। शताब्दयों की परतन्त्रता के पश्चात गुरु नानक देव पहला हिन्दू था जिस ने अन्याय तथा पन्थिक पक्षपात के विरुद्ध आवाज उठाई, उन के अन्दोलन ने हिन्दू विचार मण्डल में वह प्रभाव किया जो आटे में खमीर करता है इस के प्रमाण में एक इतिहासिक घटना लिखी जाती है :-

गुरु अर्जुन देव जी के समय गुरु नानक जी का धार्मिक आन्दोलन राजनैतिक रूप में तबदील हो गया। जहांगीर का लड़का खुसरो अपने बाप से बागी (विद्रोही) हो कर पंजाब आया, गुरु अर्जुन देव जी ने उसे पनाह दी अर्थात अपने पास रखा। इस से बादशाह गुरु जी पर नाराज हो गया, साथ ही जहांगीर के पास शिकायत पहुंची कि गुरु अर्जुन देव जी ने कुरान के मुकाबले में ग्रन्थ तय्यार किया है जिसमें इस्लाम की तौहीन (निरादर) है। बादशाह स्वयं आया गुरु अर्जुन देव जी से कहा कि इस नई पुस्तक में इस्लाम के विरुद्ध लिखा गया है, गुरुजी ने कहा कि आप परीक्षा करके देख लें यह आरोप झूठा है अतः जैसे ही एक पन्ना उलटा गया तो उसमें ईश्वरीय भगती का प्रसंग था। बादशाह ने कहा कि यदि आप की दृष्टि में सभी पन्थ एक जैसे हैं तो इस ग्रन्थ में पैगम्बरे इस्लाम (मुसलमानों के गुरु) की प्रशंसा में भी एक शेअर (काव्य पद) लिख दीजिये।

यह बड़ा भयानक समय था, दिल्ली के बादशाह की आज्ञा मजहबी रवादारी के सिद्धान्त पर उसने यह प्रश्न रखा था, इसको न मानना शाही आज्ञा भंग के समान था। कोई साधारण आदमी होता तो समझता कि इसमें हर्ज ही क्या है एक शब्द लिख देने से बादशाह प्रसन्न हो जायेगा, सम्भव है बादशाह कोई जागीर ही दे दे, इस के बाद तो सिख मत का प्रचार आसान हो जाएगा, किन्तु गुरु अर्जुन देव जी सच्चे नेता तथा पक्के हिन्दू थे उन्होंने उत्तर दिया कि ग्रन्थ साहिब में जो कुछ लिखा गया हैं वह आदि गुरु (परमात्मा) की प्रेरणा से लिखा गया है मैं उसको बदल नहीं सकता। इस उतर ने जहांगीर जैसे

नेक स्वभाव और बिना पक्षपात के बादशाह को आग बगोला बना दिया। इसका जो परिणाम हुआ वह इतिहास के जानकार लोगों को भली भान्ति पता ही है।

कहने का तात्पर्य यह कि गुरु ग्रन्थ साहिब में वेद सत्शास्त्रों की महिमा और हिन्दू धर्म का मण्डन उपस्थित है इसमें जो कुछ लिखाहै वह गुरु अर्जुन देवजी और उनके बाद दसम गुरुगोविन्द सिंह जी की पूर्ण इच्छा से लिखा गया है। फिर इस सारे के सारे ग्रन्थ साहिब को गुरुयाई मिली है इस लिये अकाली सिखों का इसमें कच्ची बाणी का लिखा हुआ मानना गुरु आशय को उलटना और गुरुओं को अपने पीछे लगाने के अनुसार है।

नवीन सिख– भाई मनी सिंह जी ज्ञान रत्नावली में लिखते हैं कि जब मुसलमानों ने गुरु नानक देव जी से पूछा कि आप कौन हैं तो उन्होंने उत्तर दिया कि :—

हिंदू कहां ता मारई, मुसलमान भी नाही–
पंच तत् का पुतला खेले ग़ैबी माहीं।

इससे गुरु जी ने हिन्दू मुसलमान दोनों से इनकार किया है और अपना एक अलग पन्थ माना है जिसको दसम गुरु ने खालसा पन्थ नाम दिया है।

समालोचना- यदि ऐसा था तो गुरु जी साफ ही कह देते कि मैं हिन्दू मुसलमान से अलग एक नया पन्थ का प्रचारक हूँ

उलटा इस शब्द में तो वह हिन्दू धर्म का समर्थन कर रहे हैं न कि खालसा पन्थ का।

प्यारे भाई ! उस समय इस्लामी राज्य था वह लोग हिन्दुओं को काफर कहते थे और काफर को मारने के योग्य। इस लिये गुरु जी ने कहा कि यदि मैं अपने आपको हिन्दू कहूँगा तो यह लोग मुझे मार देंगे परन्तु मैं मुसलमान भी नहीं तब उन्हों ने कहा कि मैं तो पांच तत् का पुतला हूँ निराकार (गैबी) सर्व व्यापक परमात्मा का उपासक हूँ।

देखिये ! मुसलमान लोग परमात्मा को सातवें आसमान पर और चार तत्वों को जगत का कारण मानते हैं इसके मुकाबला में हिन्दू धर्म में परमात्मा को गैबी (निराकार) और सर्वव्यापक माना गया है और सृष्टि का कारण पांच तत् को माना गया है। इस लिये यह उत्तर देकर गुरु जी ने तो साफ हिंदू सिद्धांतों का मण्डन करदिया था और उनसे अपना पीछा भी छुड़ा लिया था।

आज कल अकाली नेता जो बहकी बहकी बातें कर रहे हैं यह केवल अपने चौधरीपन को स्थिर रखने के लिये हैं, वह अपनी लीडरी को सुरक्षित रखने के लिये देश और जाति में फूट फैलाना चाहते हैं अतः उनका कोई निश्चित विश्वास नहीं वह बेपैंदे के लोटे की भान्ति कभी इधर कभी उधर लुढ़कते दिखाई पड़ते हैं। यह हमारा ही विचार नहीं किन्तु सिखों के विख्यात समाचार पत्र "शेरे पंजाब" ने २१ मार्च १९५४ई० के सम्पादकीय लेख में "सिखों की बदबख्ती (दर्भाग्य) के वाज़ेह (प्रत्यक्ष) निशानात" के

सिर लेख से लिखा था कि :—

"१९३१ ई० में मास्टर तारा सिंह जी ने यह एलान (घोषणा) की थी कि सिखों के कोई जुदागाना मुतालिबात (पृथक मांगें) नहीं, अगर किसी ने सिखों को अलेहदा (पृथक) ताकत बनाने की कोशिश की तो मैं इसकी मुखालफित (विरोध) करूंगा सिखों के लिये अलेहदा हकूक (पृथक अधिकार) नौकरियां या मैम्बरियां तलब करना (मांगना) मुलक से गद्दारी (विद्रोहपन) है, जिसकी मैं इजाजित (आज्ञा) न दूंगा। परन्तु कांग्रैस ने जब मास्टर जी को वर्किंग कमेटी में शामिल न किया तो मुखालिफ (विरोधी) बन गए।"

" अंग्रेज ने कम्यूनिल एवार्ड जारी किया तो मास्टर जी ने एलान (घोषणा) किया कि जब तक सरकार अंग्रेजी, सिखों से इन्साफ न करेगी वह उससे तुआवन (सहयोग) न करेंगे और इसके विरुध अपनी जदोजहद (संघर्ष) जारी रखेंगे और यह भी एलान किया कि ए गुरु गोविन्द सिंह जी! यदि आप ने इस जदोजहद (संघर्ष) में हमारी मदद (सहायता) न की तो तू हमारा गुरु नहीं और यदि हमने पीठ दिखाई तो हम तेरे सिख नहीं।"

"किन्तु हुआ क्या ? गुरु को चैलेंज करने वाले मास्टर जी स्वयं ही शहादरा में बैठ गए और जिला लाहौर में दाखल होने का साहस न कर सके। मास्टर जी के समय में गुरुद्वारे धार्मिक प्रचार के मम्बा (स्थान) की बजाए स्यासत का अखाड़ा बन गए। यहां उन सिखों को ही रहने दिया गया जो स्यासी शोबदा बाजी(चालाकी)का ढंगऔर गुरजानते थे। धार्मिकविचार के लोगों

को बुद्धू मूर्ख और पागल कहा गया। उनको नौकरी और मैम्बरी से खारज किया गया, गुरुद्वारों की पवित्रता का अनुचित प्रयोग किया गया, उनका धन इलैक्शनों (चुनावों) में शराब में रिश्वत में और पट्रोल पर ज़ाएआ होने लगा और रूहानियत के इस गढ़ में शैतानियत का नन्गा नाच होने लगा।"

प्यारे पाठक! "शेरे पंजाब" के ऊपर लिखे शब्दों को पढ़ें, लुध्याना और अमृतसर के फसादात (झगड़ों) के हालात को सामने रखें, फालशा रिपोर्ट का अध्ययन करें और गरीब सिखों की कमाई का धन जो अपनी लीडरी को स्थिर रखने के लिये बेदर्दी से कान्फरैंसों के ढूंग रच कर खर्च किया जा रहा है को देखें तो पता लगेगा कि इन पन्थ रत्नों की मानसिक अवस्था क्या है।

पाठकगण! यह कुछ पंक्तियें केवल देश और जाति में एकता पैदा करने के लिये लिखी गई हैं ताकि जनता ठीक हालात का जाएज़ा (समझ कर)लेकर कल्याण का मार्ग अपनाए। ईश्वर सबको सुमिति प्रदान करे।

ओम शम्

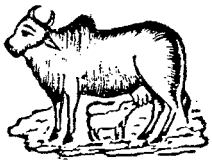

यज्ञोपवीत संस्कार और सिख गुरु

स्वामी अमृतानन्द सरस्वती

★ ओ३म ★

प्रस्तावना

हमारी यह बलपूर्वक प्रतिज्ञा है कि सिक्खों के दस गुरु महानुभाव पक्के वैदिक धर्मी थे। वे संसार में एक वेदोक्त धर्म को फैलाना चाहते थे। उनका कभी भी यह उद्देश्य न था कि जहां देश में आगे ही इतने मत प्रचलित हैं, वहां सिक्ख मत की वृद्धि करके संसार में परस्पर विरोध और साम्प्रदायिक द्वेष की खाड़ी को विस्तृत किया जाय। वे स्वयं, उनकी सन्तान और सिक्ख बराबर वेदोक्त संस्कारों को करते कराते आए। परन्तु मेकालफी मनोवृत्ति के सिक्खों ने गुरुओं के मिशन को साम्प्रदायिक रंगत दे दी। उन्होंने आर्य (हिन्दू) धर्म से पृथक अपनी सत्ता को स्थिर करने की ओर देश और जाति में भेदभाव डालने का यत्न किया। अपने धार्मिक चिह्न पृथक बना लिए। यज्ञोपवीत आदि पवित्र बल और तेज के देने वाले संस्कारों का परित्याग कर दिया गया। जिस से जाति और देशको बहुत हानि हो रही है। इस लिए हम ने उचित समझा कि उनको प्रामाणिक गुरुवाणी और इतिहास के आधार पर सन्मार्ग पर लाया जाए। इस पवित्र उद्देश्य की पूर्ति के लिये ही हमने इन शब्दोंको लेखनीबद्ध किया है। आशा है, कि विद्वान पाठक इससे लाभ उठाएंगे।

स्वामी अमृतानन्द सरस्वती
(तारा चन्द आर्य्य)

* यज्ञोपवीत संस्कार और सिख गुरु *

विचारारम्भ

शास्त्रों में जनेऊ अथवा यज्ञोपवीत संस्कार का बड़ा महत्व है। जिस दिन आर्य्य बालक आचार्यकुल में जाकर अपने गले में उसको धारण कर लेता है, उस दिन से मानो उसका दूसरा जन्म होता है। उस के धारण करने के पश्चात ही वह द्विज बनता है। पहिला जन्म तो उसका माता पिता द्वारा होता है। परन्तु इस दूसरे जन्म में गुरु पिता के समान और विद्या माता के स्थान पर होती है। गुरु इस ब्रह्मचारी को पुत्र की भान्ति ग्रहण कर विद्या के भूषण से विभूषित करने का उत्तरदायित्व लेता है। इससे पूर्व बच्चे को उसकी अबोधता, बेसमझी और बाल-पन के कारण यज्ञ करने का अधिकार नहीं होता क्योंकि शिशु अवस्था के कारण वह शुभ कर्मों के करने और समझने में असमर्थ होता है। उपनयन के समय गुरु उसको यज्ञोपवीत अथवा जनेऊ पहना कर यज्ञ करने का अधिकारी बना देता है। यज्ञ का अर्थ केवल अग्निहोत्र अथवा हवन करना ही नहीं अपितु वेदादि सत्यशास्त्रों में यह बड़े विस्तृत अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। संसार में जितने भी अच्छे, परोपकार और धर्म के काम हैं, वे सब यज्ञ ही कहलाते हैं। अभिप्राय यह कि आर्य बालक वेदारम्भ से लेकर तीनों आश्रमों तक अथवा आयु भर के लिए यह प्रण करता है कि मैं स्वयं विद्या पढ़कर और दूसरों को पढ़ाकर संस्कार से अविद्या और अज्ञान को दूर करता हुआ सेवा और परोपकार का जीवन व्यतीत करूंगा। यज्ञोपवीत धारण न करने अथवा विद्या और

यज्ञ के अधिकार से अनभिज्ञ रहने पर एक बालक द्विज नहीं बन सकता वह शूद्रवत अर्थात अनपढ़ और मूर्ख ही रहता है।

देखिये ! उपनयन संस्कार में जब ब्रह्मचारी आचार्य के पास जाता था तो वह पूछता था कि तेरा नाम क्या है ? उसके उत्तर में ब्रह्मचारी अपना नाम लेता था। तब गुरु पूछता था-तू किस का ब्रह्मचारी है ? बालक कहता था गुरुवर ! मैं आपका ब्रह्मचारी हूँ। तब आचार्य बड़े उत्तम शब्दों में कहता था कि हे बालक ! तू परमेश्वर का ब्रह्मचारी है। तेरा पूजनीय ईश्वर ही तेरा आचार्य है और वही शुद्ध आचार का सम्पादक है और इसके पश्चात् मैं भी तेरा आचार्य हूँ क्योंकि मैं भी चाहता हूँ कि तू वेद विद्या को प्राप्त करके शुद्ध और पवित्र आचरणों वाला बने। तब आचार्य कहता था कि हे बालक ! तू किस निमित ब्रह्मचारी है ? सुन ! तू प्राण विद्या के लिये ब्रह्मचारी हुआ हैं। तुझे कौन सुख पहुँचाता है ? तुझे केवल कर्मानुकूल फल देने वाला ईश्वर ही सुख पहुंचाता है। इस लिये मैं ईश्वर के लिए अथवा ईश्वर की आज्ञानुसार चलने के लिए तुझे समर्पित करता हूँ। सब का उत्पत्तिकर्ता ईश्वर का स्वरूप जानने के लिए तुझे समर्पित करता हूँ। पृथिवी और अन्तरिक्ष के पदार्थों के ज्ञान के लिए तथा सब अग्नि आदि देवताओं के जानने के लिए और जल विद्या ज्ञान के लिए तुझे समर्पित करता हूँ। सब प्राणियों की शान्ति तथा कल्याण के लिए तुझे समर्पित करता हूँ। अर्थात तू इस लिये यज्ञोपवीत धारण कर रहा है कि तू मेरे आश्रम में रहकर ईश्वर के नित्य ज्ञान वेद को पढ़कर उस परमपिता परमात्मा का सच्चा भक्त बनेगा और उसकी वेदोक्त आज्ञाओं का पालन

करेगा और संसार को सुख पहुंचाने के लिए अथवा प्राणिमात्र के कल्याण के लिये प्राण विद्या, जल विद्या, अग्नि विद्या, शारीरिक और मानसिक चिकित्सा आदि संसार की समस्त विद्याओं का विद्वान बन कर इस यज्ञोपवीत को केवल धागे के तीन तार न समझता हुआ बल्कि इसको परम पवित्रता का चिह्न मानता हुआ परोपकार का जीवन व्यतीत करेगा। यह यज्ञोपवीत धर्म, बल और तेज का देने वाला है। तू ईश्वर को साक्षी रखकर प्रतिज्ञा कर, कि इस को धारण करके उपरोक्त सब गुणों को धारण करूंगा।

पाठक गण! सोचिए तो सही कि सूत की इन तारों के अन्दर हमारे प्राचीन ऋषियोंने कितना ऊंचा भाव भर रखा है। आहा! इसके उत्तर में ब्रह्मचारी वेद के पांच मन्त्रों द्वारा परमात्मा को साक्षी रखकर प्रतिज्ञा करता था, कि है बृहस्पते! सच्चे यज्ञपति पूजनीय परमात्मा! मैं यज्ञोपवीत को धारण करके ब्रह्मचर्य व्रत का भली भांति पालन करूंगा। इसलिए आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप कृपा करके मुझे इस व्रत के पालन करने की शक्ति प्रदान करें। जिसके द्वारा झूठे और खोटे कर्मों को त्याग कर यज्ञ (भले और परोपकार) के कर्मों को करूं और तुझ सर्वव्यापक को अपने हृदय मन्दिर में प्राप्त होऊं। ब्रह्मचारी के इसप्रकार प्रतिज्ञा और प्रार्थना कर लेने के पश्चात आचार्य परमात्मा से प्रार्थना करता था कि हे अग्ने (प्रकाशस्वरूप)! परमदेव; ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने वाले इस ब्रह्मचारी के साथ हम सब मेल कर चुके हैं, अर्थात् इस को विद्या ग्रहण करने में सहायता देने का वचन दे चुके हैं। इस लिये इस बालक को अच्छे मनुष्यों से

अच्छे प्रकार युक्त कीजिए। हम इस बालक के विद्या प्राप्ति के मार्ग में आने वाले समस्त विघ्नों के दूर करने का कार्य अपने ऊपर लेते हैं और आशा करते हैं। कि आपकी कृपा और सहायता से यह बालक कल्याणपूर्वक विचरेगा। अन्त में ब्रह्मचारी गुरुके चरणों में प्रार्थना करता था कि हे गुरु! मैं ब्रह्मचर्य व्रत को स्वीकार कर चका हूं। अब आप मुझे विधिपूर्वक अपने आश्रम में अपनी छत्रछाया में रखें।

अब जो यज्ञोपवीत आचार्य ब्रह्मचारी बालक के गले में डालता है। इस यज्ञोपवीत की तीन तारें होती हैं और वह इस लिए कि गुरु मन्त्र अथवा गायत्री मन्त्र में जो सब से पहिले ब्रह्मचारी को याद कराया जाता है, भूः भुवः स्वः तीन महाव्याहृतियां होती हैं और इस मन्त्र के पाद अथवा चरण भी तीन ही हैं और परमात्मा का सर्वोत्तम नाम ओ३म् भी तीन अक्षरों से बना है। अर्थात अ, उ, और म् और जिन वेदों को इसने पढ़ना है इसमें भी तीन काण्ड हैं अर्थात् ज्ञान कर्म, और उपासना! इसलिए यह तीन तारें परमात्मा केप्रति कर्तव्य का बोध कराने के लिए ब्रह्मचारी के गले में डाली जाती है।

प्रत्येक मनुष्य पर चाहे वह किसी भी विशेष जातिं का क्यों न हो तीन कर्तव्य अथवा ऋण हैं। देव ऋण, ऋषि ऋण, और पितृ ऋण। प्रत्येक मनुष्य को इन कर्तव्यों का पूरा करना आवश्यक है। इस यज्ञोपवीत को धारण करके प्रत्येक मनुष्य इन तीन ऋणों के चुकाने का व्रत लेता है। ईश्वर की आज्ञाओं का पालण करके, उसकी भक्ति करके उसके वेदोक्त धर्म पर आचरण करके और जलवायु को हवन द्वारा सुगन्धित और

रोग रहित कर के संसार के लिए सुखदायक और अपने लिए स्वास्थ्य दायक बनाने का यत्न करके वह देव ऋण को चुकाता है ऋषि मुनि, महात्माओं, उपदेशकों, महापुरुषों और आचार्यों के दिए उपदेश को भी क्रियात्मक रूप देकर और जिस प्रकार उनका उपकार का जीवन रहा है, वैसा ही अपना जीवन बना और बिता कर दूसरों का भला, उपकार और सेवा करके ऋषि ऋण को उतार कर अपने कर्तव्य को पूरा करता है। माता पिता आदि बड़ों की सेवा करके और जिस प्रकार माता पिता ने उसका लालन पालन किया, विद्या शिक्षा देकर योग्य बनाया; उसी प्रकार अपनी सन्तान का पालन पोषण करके और उनको योग्य धर्मात्मा और सच्चा नागरिक बनाकर दया, संतोष, जप, तप आदि शुभ कर्मों के करने का उत्तरदायित्व लेता है और इसलिए इस यज्ञोपवीत को प्रत्येक समय अपने कन्धे पर और शरीर के अंगसंग रखता है कि किसी समय भी अपने कर्तव्य से उपेक्षा न करेगा और अपने इस तीन ऋणों को चुकाने को स्मरण रखेगा। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए ऋषि मुनियोंने यज्ञोपवीत की तीन तारें रखी थीं और इस पर ब्रह्मगांठ लगाई थी कि वह तीनों कर्तव्यों को एक साथ पूरा करेगा। क्योंकि एक कर्तव्य की भी उपेक्षा करनेसे शेष दो का कोई महत्व नहीं रहता अर्थात देवऋण को चुकाने के लिए प्रभु की भक्ति तो करे परन्तु बड़ों और पिता माता की सेवा न करे तो ईश्वरभक्ति किसी काम की नहीं और यदि बड़ों की सेवा तो करे परन्तु ईश्वर की सत्ता और अज्ञाओं को न माने तो वह ऋषि और पितृभक्ति व्यर्थ है।

पाठकगण ! देश और जाति के दुर्भाग्य से समय आया जब लोग इसके महत्व को भूल गये। जन्म के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों और ठाकुर राजपूतों ने ही इसका पहिनना अपना अधिकार समझ लिया। विद्या का ग्रहण करना और सदाचार आवश्यक न रहा। अर्थात केवल जात्यभिमान का चिह्न रह गया। स्त्रियों का विद्या का अधिकार छीन कर यज्ञोपवीत उनके गले से उतार लिया गया और उनको शूद्र की पदवी दे दी गई। एक आचार-हीन और धर्म पतित व्यभिचारी तथा जुएबाज़ जन्माभिमानी ब्राह्मण अथवा राजपूत क्षत्रिय तो उसको पहिन सकता था। परन्तु कबीर जैसे भक्त को जन्म का मुसलमान अथवा जुलाहा होने के कारण इसके पहिनने का अधिकार न था। इस अन्धकार और अविद्या को देख कर कुछ सुधारकों ने इसके विरुद्ध आवाज़ उठाई। जैसा कि कबीर जी ने फरमाया :—

जो तू ब्राह्मण ब्राह्मणी जाया ,तो आन बाट काहे नहीं आया।
तुम कित ब्राह्मण हम कित शूद्र। हम कित लहू तुम कित दूध ॥

अर्थात तू यदि जन्म के कारण ब्राह्मण है तो किसी और मार्ग से क्यों पैदा नहीं हो गया !

तू किस प्रकार ब्राह्मण है, और दूसरे किस कारण से शूद्र हैं ? भला क्या हमारे भीतर रुधिर है तो तेरे अन्दर दूध है ?

कई सज्जनों का विचार है कि श्री गुरु नानक देव जी, दस गुरु दहानुभावों नेभी यज्ञोपवीत का खण्डन किया है और अपने सिक्खों को इसके पहिनने का निषेद किया है। परन्तु गुरुवाणी और सिक्ख इतिहास के देखने से ज्ञात होता है कि दसों गुरु

महानुभाव वेदोक्त धर्म को मानने वाले थे। इसलिए यह हो न सकता था कि वह इस पवित्र वेदोक्त मर्यादा का निषेद करते। जैसा कि दसम गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज ने 'बिचित्र नाटक' में लिखा कि :—

जिनहें वेद पठयो सो बेदी कहाए।
तिन्हें धर्म के कर्म नीके कमाए॥

अर्थात जिन्होंने वेदों का अध्ययन किया, वही वेदी कहलाए उन्होंने धर्म के जितने भी शुभ कार्य और मर्यादाएं रखीं थी, उन को पूरा किया।

इन वेदियन की कुल विखे प्रगटे नानक राये

और इन ही वेदोक्त धर्मी बेदियों की कुल में श्री गुरु नानक देव जी उत्पन्न हुए। परन्तु हमारे सिक्ख सज्जन इस को नहीं मानते। जैसा कि ज्ञानी प्रतापसिंह जी ने अपनी 'गुरुमत लैक्चर' नामक पुस्तक में लिखा है कि गुरु जी ग्यारह वर्ष के हुए तो कालूराम जी ने पुरोहित हरिदयाल को बुला कर यज्ञोपवीत पहिनाना चाहा। जब पण्डित यज्ञोपवीत पहिनाने लगे तो आपने (गुरु जी ने) कहा कि यह सूत का यज्ञोपवीत टूट जाने वाला है। शरीर के जल जाने पर यह जल जायगा। कोई ऐसा यज्ञोपवीत पहिनाओ जो न कभी टूटे और न मैला हो। पण्डित जी ने उत्तर दिया-नानक जी! मेरे पास तो धागे का ही यज्ञोपवीत है। गुरुजी ने फ़रमाया:—

दया कपाह सन्तोख सूत जत गण्ढी सत वट।
एह जनेऊ जिया का है तां पाण्डे घत।
न ओह टुटे न मल लग्गे न ओह जल्ले न जाय।
धन सो मानस नानका जो गल्ल चल्ले पाय।

कहते हैं कि गुरु जी ने यज्ञोपवीत धारण नहीं किया। इस लिए हमारे सिक्ख भाई भी अब गले में यज्ञोपवीत धारण नहीं करते। आज से चालीस वर्ष पूर्व प्रायः सिक्ख भाई यज्ञोपवीत पहिना करते थे। क्योंकि सिक्ख इतिहास इस बात का साक्षी है कि गुरु नानकजी ने स्वयं भी यज्ञोपवीत धारण किया था और उनके पश्चात् शेष नौ गुरुओं ने और उन के सिक्खों ने भी इसको यथापूर्व धारण किया। बल्कि गुरु तेगबहादुर जी ने इसी यज्ञोपवीत और चोटी की रक्षा के लिए अपना और अपने पुत्र और पोतों का बलिदान दिया। अर्थात इस वेद मर्यादा को स्थिर रखने के लिए तीन पीढ़ी तक बलिदान दिया।

गुरु नानक जी के यज्ञोपवीत धारण करने का प्रसंग जन्म-साखी भाई बाला के २१ पृष्ठ से लेकर २३ पृष्ट तक और 'नानक प्रकाश पूर्वार्द्ध के अध्याय ८ पर लिखित है। वहां लिखा है कि गुरु नानक जी को जिस दिन यज्ञोपवीत पहिनना था, उस दिन बड़ा भारी उत्सव मनाया गया। बेदी वंश के सब स्त्री, पुरुष, सम्बन्धी और दूसरे इष्टमित्र परिवार समेत बुलाए गए।

कालू बहोरी कीन विचारा। यज्ञोपवीत देन हित धारा।
पुरोहित जो तेरे हर दयाला। सो बुलाए लीनो तत्काला॥

अर्थात् कालू जी ने यह विचार करके कि अब नानक जी की आयु यज्ञोपवीत धारण करने के योग्य हो गई है, उनको यज्ञोपवीत पहनाने का विचार किया। उनके कुल का पुरोहित जो हरदयाल था, उसको तुरन्त बुलाया गया।

खत्रियन रीति जो होत पुरातन, सो कीनो द्विजवर सब भांतिन।
कुल आचार सिखावन लागा, पुन पावन जंजू अनुरागा।

(नानक प्रकाश पूर्वार्ध अध्याय ५)

अर्थात प्राचीन काल से जो क्षत्रियों की रीति चली आ रही थी, उसको पुरोहित जी ने भली प्रकार कराया। फिर कुल आचार का उपदेश देने लगा।

जन्म साखी, भाई बाला के अनुसार पुरोहित हरदयाल जब यज्ञोपवीत पहिनाने लगा तो नानक जी ने उसका प्रयोजन पूछा। परन्तु पुरोहित इसका संतोषजनक उत्तर न दे सका तो नानक जी ने कहा-

सुनो पण्डित जी! क्षत्रिय, ब्राह्मण हो कर यज्ञोपवीत गले में डाला और बुरे कर्म से न हटा। खोटे कर्म करता ही रहा तो ब्राह्मण क्षत्रिय यज्ञोपवीत पहिन कर बाहिर के धर्म को क्या करेगा? धन केलिए हिंसा, धर्म, अधर्म, दुष्टता, झूठ, चुगली करता रहा तो वह क्षत्रिय ब्राह्मण नहीं बल्कि चाण्डाल है। उसको यज्ञोपवीत पहिनने का क्या फल हुआ।

इसके पश्चात् नानक जी ने वार आसा वाला श्लोक (दया कपाह संतोख आदि) उच्चारण किया। जिसका अर्थ और भाव

वेदोक्त यज्ञोपवीत संस्कार के अनुसार और सिद्धान्तानुकूल हैं। अर्थात् यज्ञोपवित धारण करने वाले का कर्तव्य है कि दया को कपास, संतोष को सूत, जत अथवा इन्द्रियों के संयम को गाण्ठ और सत्य को वट समझे और ब्राह्मण अथवा आचार्य का कर्तव्य है कि वह इस प्रकार का यज्ञोपवीत अथवा यजमान को पहिनाए। यदि ऐसा यज्ञोपवीत पहिना और पहिनाया जायगा तो यह न टूटने का है और न मैला होगा, न यह जलेगा और न पृथक होगा। धन्य वे मनुष्य हैं जो इस प्रकार का अथवा ऐसे पवित्र भावों से भरा हुआ यज्ञोपवीत धारण करते हैं। नानक जी का उपदेश सुनकर उपस्थित लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए। चुनांचि लिखा है कि यह उपदेश हरदयाल ने मन में धारण किया और नानक जी को धन्य २ कहा। फिर पण्डित बोला- महता कालू! तेरा पुत्र कोई देवता है। यह आप ही यज्ञोपवीत पहिने। तब महता कालू ने कहा-महापुरुष भी जगत् की चाल करते आए हैं। तो बाबे (नानक) ने कहा—जैसी आपकी इच्छा। तब पण्डित ने कहा-इस यज्ञोपवीत को पवित्र करो। तब बाबा जी ने यज्ञोपवीत पहिन लिया। इस पर खुशी के बाजे बजे और बड़ी खुशी मनाई गई। इस के पश्चात सब बेदी वंश को और ब्राह्मणों को भोजन करवाया गया और बड़े उत्साह के साथ ब्राह्मणों को दक्षिणा दी गई। सब ब्राह्मण आशीरवाद देकर अपने अपने घरों को गए। (जन्म साखी भाई बाला)

इस विध सिरि नानक गति दानी, उपदेशन की उचरत बानी।
बदन विदित विप्रिन वर आई, यज्ञोपवीत दियो पहराई।।

(नानक प्रकाश गुरुजी हरदयाल संवाद अध्याय ६)

अर्थात् इस प्रकार धर्म की गति जानने वाले श्री नानक जी, उपदेश की सीं वाणी को उच्चारण करने लगे। जो ब्राह्मणों के मन को बहुत प्यारी लगी और बड़ी प्रसन्नता के साथ नानक जी को यज्ञोपवीत पहिनाया गया।

इतने स्पष्ट प्रमाण की विद्यमानता में पता नहीं हमारे सिक्ख सज्जनों को क्यों भ्रम हो गया कि गुरु जी ने यज्ञोपवीत धारण नहीं किया। हालांकि इस समय ही नहीं बल्कि आप ने तो विवाह के समय भी यज्ञोपवीत धारण कर रखा था। जैसा कि नानक प्रकाश अध्याय २२ के पृष्ठ १०७ पर लिखा है कि 'गुरु नानक जी ने विवाह के समय पीले (बसन्ती रंग) के वस्त्र धारण किए हुए थे और गले में यज्ञोपवीत पहिना हुआ था। महा छवि हो रही थी। जन्म साखी में भी ऐसा ही वर्णन आया है और साथ ही यह भी लिखा है कि सुलखनी जी (गुरु नानक जी की धर्मपत्नी) को स्नान करा कर नये वस्त्र पहिनाए गए और वेद विधि अनुसार खारों पर बिठाया गया। अग्नि देवता को प्रकाश करके गणेश पूजा करके घृत की अहुतियां डाल कर वधू ने फेरे लिए।

पाठक गण! विवाह के समय गुरु जी की आयु बीस वर्ष की थी। वे पूरे समझदार युवक थे। यदि उनको यज्ञोपवीत पर और वेदविधि पर आपत्ति होती तो उसी समय वे उसके पहिनने से इन्कार कर देते और फिर उस अवस्था में जब कि सिक्खों के विचार के अनुसार वे ग्यारह वर्ष की आयु में यज्ञोपवीत संस्कार के समय उस के पहिनने से इनकार कर चुके थे।

इतिहास तो बतलाता है कि केवल विवाह के समय ही नहीं बल्कि गुरु जी ने तो तब भी यज्ञोपवीत धारण कर रखा था जब वे पूर्णतया उपदेशक बन कर गुरु रूप में धर्मोपदेश के लिए और सिक्खों के सिद्धान्तानुसार संसार का उद्धार करने के लिये देश का भ्रमण कर रहे थे। चुनाचि लिखा है कि जब आप लालो तरखान के घर गए तो लालो खोंटे (कीले) बना रहा था वह अपने काम में लीन था। जब उसने दृष्टि उठा कर देखा तो अपने सम्मुख एक तपस्वी महात्मा (नानक जी) को खड़ा पाया, देखा कि उन के गले में यज्ञोपवीत है और एक डोम (मरदाना) उन के साथ है। लालो सम्मान के लिए उठ खड़ा हुआ। बड़ा आदर सत्कार किया। खूब अतिथि सत्कार किया और आपके लिये भोजन तय्यार करवाया। कहते हैं मलिक भागो जो वहां का धनाढय और मालदार था, ने भी भोजन का निमन्त्रण दिया। परन्तु आपने उसका स्वीकार न किया और कहा कि हम तो लालो तरखान के घर ही भोजन करेंगे। मलिक भागो ने कहा कि महाराज! आप एक कुलीन के अन्न को स्वीकार न करके एक छोटी जाति के कमीन का भोजन स्वीकार करते हैं अर्थात् आप तो यज्ञोपवीत धारी हैं और वह शुद्र है। इस पर लिखा तो यह हैं कि गुरु जी ने दोनों के भोजन को लेकर हाथों से दबाया तो मलिक भागो के बढ़िया पदार्थों से लहू की धारा और लालो के सादा भोजन से दूध की धारा बह निकली। परन्तु ठीक आशय यह है—आपने कहा कि लालू की परिश्रम की नेक कमाई है और आपकी अत्याचार की। माना उसकी सूखी रोटी में नेक कमाई का दूध है और आपकी पूरी कचौरी में निर्धनों का रक्त।

(जन्म साखी भाई बाला)

पाठकगण गुरु नानक देव जी के पश्चात दूसरे गुरु महानुभाव भी यज्ञोपवीत धारण करते रहे। अपने सिक्खों को भी पहिनने की आज्ञा देते रहे, बल्कि अपने प्राणोंसे प्यारे पुत्रों और पोतों का बलिदान करके भी इसकी उन्होंने रक्षा की। इसकी पुष्टि के लिए निम्नलिखित प्रमाण हैं :—

(१) गुरुओं के काल में यह रिवाज था कि विवाह संस्कार के समय वर का पहिला यज्ञोपवीत बदल कर नवीन पहिनाया करते थे। जब पुरोहित अपने यजमान वरको यज्ञोपवीत पहनाने लगता था तो उस समय यज्ञवेदी में बैठे वर के पिता और बूढ़े बजुर्गों से आज्ञा लेकर पहनाया करता था भाव यह था कि सन्तान गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने के पश्चात भी द्विजों के कर्तव्य और यज्ञोपवीत की महानता को स्मरण रखे। चुनांचि गुरु हर गोबिन्द जी सिखों के छटे गुरुका जब विवाहसंस्कार होने वाला था तो लिखाहै कि-

गुरुनिदेश सुन वीर तब शुभ जंजू कर धार।
कर पूजा गुरु पुत्र गर लागो पुरोहित डार॥

अर्थात-गुरु अर्जुन देवजी की आज्ञा पाकर ब्राह्मण देवता ने अपने हाथोंमें यज्ञोपवीत लिया और पूजा अर्थात ईश्वर प्रार्थना-स्वस्ति वाचन आदि के पश्चात गुरु पुत्र (हर गोबिन्द) के गले में पुरोहित ने डाल दिया।

इसका विस्तृत वर्णन गुरुबिलास पातशाहीं ६ अध्याय ५ कविता अंक ६०, ६१ में लिखा हैं। वहां स्पष्ट वर्णन है कि गुरु हरगोबिन्द जी ने अपने विवाह पर यज्ञोपवीत धारण किया था।

(२) दशम गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज जो सिक्ख पन्थ के वाली और खालसा पन्थ के साजने वाले थे, ने अपनी सुसराल में यज्ञोपवीत धारण किया था, लिखा है कि :—

पीत पुनीत अवरना धोती, ज्योति रवि नभ छाजे।
पीत जनेऊ मनो वदन, सीस पै बिजरी बिजरी भ्राजे॥

(पन्थ प्रकाश अध्याय दस १६४६)

अर्थात-गुरु गोबिन्द सिंह जी ने पीले रंग की धोती और दुपट्टा धारण किया हुआ था मानो आकाश सूर्य की भांति ज्योति प्रकाशमान थी। इस पर पीले रंग का यज्ञोपवीत कन्धे पर ऐसी शोभा देता था मानो आकाश में बिजली चमक रही है।

(३) काश्मीर के ब्राह्मण, क्षत्रिय दुखी होकर गुरु के सिक्खों समेत इकट्ठे होकर डको-डोले खाते आनन्दपुर में गुरु तेग बहादुर के पास आए और नम्रता पूर्वक बिनती की कि महाराज औरङ्गज़ेब के अत्याचारों का तूफान हिन्दू धर्म की खेती को नष्ट भ्रष्ट कर रहा है। जो पाप तथा अत्याचार सुनते भी न थे अब वे आंखों से देखने में आ रहे हैं। जिस बादशाह का धर्म समस्त प्रजा को एक जैसा सन्तान की भांति देखना था वह पक्षपाती व हठी हो रहा है बुरेसे बुरे मुहमदीको अच्छे से अच्छा और श्रेष्ठ से श्रेष्ठ हिन्दू को बुरे से बुरा समझा जाता है। ठौर ठौर गौओं का घात हो रहा है। फिर जब कोई गाय बैल बीमार होता है तो हमारे घरों में आकर हमारे सम्मुख हलाल करके काट फाड़ दिया जाता है। बल्कि उसको हमारे ही सिरों पर उठवा कर ले जाते हैं। यदि हम न उठाऐं तो हमें वध कर दिया

जाता है। हमको इस समय बड़ा क्लेश है। आप ही इस समय हमारी सहायता करने में समर्थ हैं। गुरु तेगबहादुर जी सिक्खों की यह बात सुन कर चिन्तित हो गए। गुरु गोबिन्द सिंह जी उस समय सात वर्ष की आयु के थे, परन्तु बुद्धि सौ वर्ष की रखते थे। पिता जी को चिन्तित देख कर उसका कारण पूछने लगे तो आपने सारा वृतान्त कह सुनाया और कहा कि जब तक हिन्दू धर्म, गोरक्षा और यज्ञोपवीत तथा चोटी की रक्षा के लिए किसी महापुरुष का बलिदान नहीं होता तब तक इस कष्ट का दूर होना असम्भव है।

गुरु गोबिन्द सिंह जी ने उत्तर दिया- पिता जी! आपसे बढ़ कर और कौन महापुरुष होगा जो इस समय तिलक और यज्ञोपवीत की रक्षा करेगा। गुरु जी ने पुत्र के ऐसे उत्साह-पूर्ण शब्द सुन कर मन में तसल्ली की कि अब गोबिन्द सिंह जी प्रत्येक प्रकार से योग्य हैं और मेरे उत्तराधिकारी हो सकते हैं। गद्दी का अधिकार पुत्र को दिया और सिक्खों तथा सेवकों को कहा-आप औरङ्गजेब को जाकर कह दीजिए कि गुरु तेगबहादुर हिन्दुओं के पीर ने यदि इसलाम स्वीकार कर लिया तो हम भी मुसलमान हो जायेंगे। चुनांचि हिन्दू धर्म, गोरक्षा, यज्ञोपवीत, चोटी और तिलक के लिए नवें गुरु तेगबहादुर जी ने दिल्ली में अपना सीस बलिदान कराया और और आपके पश्चात आपका अनुसरण करते हुए दशम गुरु गोबिन्द सिंह जी और उनके चार सुपुत्र बलिदान हुए। इसके सम्बन्ध में गुरु गोबिन्द सिंह जी ने विचित्र नाटक में अपने मुख्य वाक्य लिखे हैं जिन को समस्त सिक्खों ने प्रमाणित माना है। आप कहते हैं कि :—

हर गोबिन्द प्रभु लोक सिधारे, हर राय तंह ठाऊं बैठारे।
श्री कृष्ण तिन के सुत दिए, तिन ते तेग़ बहादर भये।

तिलक जंजू राखा प्रभु ताका, कीनों बड़ो कलू में साका।
साधन हित इति जिन करी, सीस दिया पर सी न उचरी।

धर्म हेत साका जिन किया, सीस दिया पर सिर्र न दिया।
नाटक चेटक किए कुकाजा, प्रभ लोगन को आवत लाजा।

दोहरा

ठीकर फोड़ो दिल्लाश सिर प्रभु पुर कियो पयान।
तेग़ बहादर सी किया, करी न किन्हों आन।

तेग़ बहादर के चलत, भयो जगत को सोग।
है है है सब जग भयो, जय जय जय सुर लोक।

अर्थात-गुरु हरगोबिन्द जी का जब परलोक गमन हुआ तो उनके स्थान पर गुरु हरराय जी को गुरु गद्दी पर बिठलाया गया। फिर आठवें गुरु उनके पुत्र हरिकृष्ण जी हुए। उनके मरने के पश्चात गुरु तेग बहादुर जी गुरु गद्दी पर विराजमान हुए परमात्मा ने उनके यज्ञोपवीत और तिलक की रक्षा की। उन्होंने कलियुग में बड़ा साका किया। साधु पुरुषों अथवा भले आदमियो के लिए जिन्हों ने इतना बलिदान दिया कि सीस दे दिया परन्तु मुँह से आह तक न निकाली। धर्म की रक्षा के हित उन्होंने साका किया परन्तु अपनी आन को न छोड़ा। हकूमत ने जो अत्याचार किए उनको सुन कर समझदार बड़े आदमियों को तो लज्जा आती है। गुरु तेग बहादुर जी ने दिल्ली में औरङ्गजेब के सिर पर ठीकरा फोड़ कर परलोक गमन किया। (इन अवस्थाओं में)

गुरु तेग बहादर जैसी क्रिया अथवा वीरता किसी ने भी नहीं की गुरु तेग बहादर के चलने पर अथवा बलिदान पर जगत को शोक हुआ। उनकी मृत्यु पर सारे जगत ने हाहाकार किया। परन्तु मृत्युलोक में देवताओं ने जय जयकार की।

(४) भक्त रत्नावली भाई मनी सिंह साखी १४५ में लिखा है कि बहुत सारे सिक्ख दशम गुरु गोबिन्द सिंह जी की सेवा में उपस्थित हुए और निवेदन किया कि सच्चे बादशाह! हम यज्ञोपवीत पहिनने के समय पुत्रों का भदन (मुण्डन) भी करते थे, ऐसा हमारे वंशों में पुराना रिवाज चला आता था। अब जैसी आप की आज्ञा हो, हम वैसा ही करें। तब दशम गुरु की आज्ञा और हस्ताक्षर हुए कि सहजधारी के बेटे की क़ैंची से रीत करो और केसधारी को केसी स्नान कराओ जनेऊ पावन के समय।

(५) इन प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध है कि दसों गुरु महानुभाव यज्ञोपवीत संस्कार को धर्मानुकूल और कुल का आचार मानते थे। वे नवीन सिक्खों और अकालियों की भांति मुण्डन कराने वालों से घृणा न करते थे। आजकल के सिक्खों की भांति आर्य्य (हिन्दुओं) को सिर गुमा अथवा सिर घिसा के घृणास्पद नाम से स्मरण न करते थे। बल्कि दूसरे सिक्खों की भांति इनको भी अपना प्यारा सिक्ख मानते और प्रेम की दृष्टि से देखते थे। साथ ही यज्ञोपवीत धारण करना तो सहजधारी और सिक्ख दोनों के लिए सम्मान आवश्यक और कर्तव्य कर्म मानते थे।

उपरोक्त प्रमाण इस लिए भी प्रमाणिक हैं कि इसको पण्डित तारा सिंह जी जैसे ज़िमेवार और विद्वान सिक्ख नेता ने गुरु मत

निर्णय नामक पुस्तक में जो रायबहादुर सरदार बूटा सिंह जी रावलपिण्डी वालों ने छपवाया था, के ५०८ पृष्ठ पर दर्ज करके स्वीकार किया है।

इस पर हमारे कई सिक्ख भाई प्रश्न कर सकते हैं कि क्या गुरु ग्रन्थ साहिब में किसी स्थान पर भी यज्ञोपवीत का निषेध नहीं किया गया ? तो उसका उत्तर यह कि गुरु ग्रन्थ साहिब में इसका कई स्थानों में निषेध भी है परन्तु वहां इस लिए खण्डन किया गया है कि जहां इसके वास्तविक अर्थ को छोड़ कर गुणोंका त्याग करके चिह्न मात्र अथवा भेख के रूप में धारण किया गया है और वास्तव में है भी ठीक। जब तक मनुष्य यज्ञोपवीत के वास्तविक आशय को नहीं समझता और इसके अनुसार कर्तव्य का पालन कहीं करता, तब तक इन धागों के गले में डाल लेने का कोई फल नहीं और यही कारण है कि जिस यज्ञोपवीत के उतारने में औरङ्गजेब को इतना यत्न और रक्तपात करना पड़ा, उसको पश्चिमी सभ्यता के पुजारी और उसके भाव और महत्व को न समझने वाले दूसरे लोग स्वयं उतारते जा रहे हैं। आज हमारे सिक्ख सज्जन भी पांच ककार को तो भेख नहीं समझते। परन्तु यज्ञोपवीत को भेख समझ कर उस का त्याग कर चुके हैं। हालांकि इन समस्त धार्मिक चिह्नों का भेख के रूप में धारण करना दसों गुरु महानुभावों ने अशुद्ध तथा धर्म विरुद्ध बतलाया है और गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज ने इनको बहुरूपियापन और पाखण्डपन माना है। आप फरमाते हैं कि :—

तीरथ कोट किए अश्नान, दिए बहु दान महाव्रत धारे।
देस फिरयो कर भेस तपोधन, केस धरे न मिले हरि प्यारे।
आसन कोट करे अष्टांग, धरे बहुन्यास करे मुख कारे।
दीन दयाल अकाल भजे बिन, अन्त को अन्त के धाम सिधारे।

अर्थात–तीर्थों के भ्रमण करने और बहुत सा दान देने तथा व्रतों को धारण करने से परमेश्वर नहीं मिलता और न ही ईश्वर की प्राप्ति देश देशान्तरों में तपोधन अर्थात् तपस्वी का बेष करके भ्रमण करने से हो सकती है और सिर पर केसों के धारण करने से न ही ईश्वर मिलता है। यद्यपि इस सवैये के अर्थ करने में कई सिक्ख सज्जनों ने बहुत खींचातानी की है और कुछ ने केस शब्द के दो टुकड़े करके इधर उधर मिला कर उसको लोप ही करना चाहा है परन्तु भाई काहन सिंह जी नाभा वाले ने गुरू मत सुधाकर, नामक ग्रन्थ में इसको स्पष्ट कर दिया है। वह इस शब्द पर अनेक खालसा महानुभावों की सम्मति लिखते हुए फुटनोट में अपनी सम्मति स्पष्ट लिखते हैं कि :–

"प्रसंगानुसार गुरु साहब का सिद्धान्त यह हैं कि केवल केश धारण करने मात्र से ही वाहगुरु की प्राप्ति नहीं होती जब तक कि मन के प्रेम से परमात्मा का स्मरण न किया जाय।

(गुरमत सुधाकर पृ० ३६)

भाई गुरुदास जी ने भी लिखा है कि:—

वाल वधाइये पाइये; बड़ वड जटां पलासी।

अर्थात-यदि बालोंके बढ़ाने से परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है तो वट आदि वृक्षों को सब से पहिले होनी चाहिए।

इन प्रमाणों की विद्यमानता में मानना पड़ेगा कि गुरु महानुभाव ने भेख का खण्डन तो किया है परन्तु वेदोक्त यज्ञोपवीत संस्कार का खण्डन नहीं किया। अतः सिक्ख मात्र का कर्तव्य है कि वह इस विषय पर गम्भीरता पूर्वक विचार करे और जिस वेदोक्त कर्म को गुरु महानुभाव मानते मनाते आए हैं, उसका त्याग न करें अपितु विद्याप्राप्ति में यत्न करके संसार से अज्ञान को दूर करें। उस का त्याग न करें और वास्तविक अर्थों में यज्ञोपवीत को धारण करें।

ओम शम्

ॐ

सिक्ख गुरुओं की मातृ भाषा

अमृतानन्द सरस्वती

ओ३म्

प्रस्तावना

पूर्वी पंजाब की भाषा का प्रश्न बहुत उलझा हुआ प्रश्न है। हमारे कई सिक्ख सज्जन इसको शान्त हृदय से विचारने के लिए तैयार नहीं। इस गर्मी के अन्दर उन्होंने अपने धार्मिक साहित्य को भी दृष्टि से ओझल कर रखा है। यदि यह प्रश्न न सुलझे तो प्रान्त में एकता का पैदा होना कठिन है। एकता के पैदा न होने से अनेक दुःखों की सम्भावना है। इस लिए इस पर हठधर्मी को छोड़ कर ही विचार होना आवश्यक है। हमारा यह अटल विश्वास है कि गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज सारे देश की एक भाषा करना चाहते थे, इसलिए उन्हों ने अपनी सारी पवित्र बाणी पवित्र हिन्दी भाषा में उच्चारण की। उन के दरबार में हिन्दी के दर्जनों कवि थे और दर्जनों ही संस्कृत के विद्वान। वह स्वयं हिन्दी के महाकवि थे किन्तु आज उनके नाम लेवा उन के चरण चिह्नों पर चलने को तैयार नहीं इस लिए ऐसे सज्जनों की सेवा में यह थोड़े से शब्द रखने का तुच्छ प्रयत्न किया है। परमात्मा करे वह पक्षपात को छोड़कर इस पर विचार करें और प्रान्त की ही नहीं अपितु भारत की एक भाषा बना कर यश और पुण्य के भागी बनें।

स्वामी अमृतानन्द
(ताराचन्द आर्य)

ओ३म्

सिक्ख गुरुओं की मातृभाषा

(विचारारम्भ)

यह संसार उस रचने हारे परमात्मा की अद्भुत रचना है। यह चराचर जगत् उस विचित्र चित्रकार की विलक्षण चित्रकारी है। इस में उस चतुर कारीगर ने नाना प्रकार की रचना करके अपनी असीम चतुराई का प्रमाण दिया है। उसने सभी योनियां और असंख्य प्रकार के देहधारी जीव एक विशेष नियम के अधीन उत्पन्न किये हैं। परन्तु यह बात प्रत्यक्ष देखी जा रही है कि मनुष्य के अतिरिक्त जितने भी प्राणी हैं वह सारे के सारे बिना किसी नैमित्तिक शिक्षा के अपने स्वाभाविक या प्राकृतिक ज्ञान से ही अपनी जीवन यात्रा के सभी आवश्यक कार्यों को पूरा कर लेते हैं। भोजन ढूंढना, घर का बनाना, सन्तान उत्पन्न करना और उन के पालन का ज्ञान उन्हें बिना किसी प्रकार की शिक्षा के स्वयमेव आ जाता है और उत्पत्ति से लेकर मरण पर्यन्त एक समान रहता है। न्यूनाधिक नहीं होता, परन्तु मनुष्य का व्यवहार नितान्त प्रतिकूल है। वह नैमित्तक ज्ञान के बिना न भोजन पहिचान सकता है, न कपड़े बना और पहन सकता है, न घर बनाने का ढंग और न ही स्त्री पुरुष में भेद कर सकता है। न वह अपने आप मिल बैठ सके, न बोल सके न खड़ा हो सके, न हाथों से पकड़ सके, न हाथ से खा सके और न एक दिन जीवित रह सके। तात्पर्य यह कि यह बिना सहायता अन्य या दूसरे से शिक्षा प्राप्त किये बिना किसी प्रकार का कोई कर्म नहीं कर सकता।

पिछले दिनों भेड़ियों के भट से मिले हुए बच्चों को देखने से पता चला कि वह ज्ञान के बिना खड़े हो कर चल भी न सकते थे। वह पशुओं की भांति चार पैरों से चलते थे कोई भाषा बोल न सकते थे बल्कि भेड़ियों की तरह गुर्राते थे। वह हाथों से पकड़ कर खाना न जानते थे बल्कि पशुओं की भांति ही मुंह से खाते और पानी पीते थे। इन बातों से सिद्ध होता है कि यदि मनुष्य को अपनी प्राकृतिक दशा में रखा जाये और उस को शिक्षा न मिले तो वह नये उत्पन्न हुए बच्चे की न्याईं ही रहेगा। मनुष्य के बच्चे को उत्पन्न होने के पश्चात् जितना भी ज्ञान मिलता है वह दुसरों के द्वारा मिलता है। यदि वह पशुओं की संगति में रहे तो उसमें पशुओं का सा ज्ञान होगा, यदि वह मूढ़ गंवार मनुष्यों का संग करे तो वैसा ही बनेगा और यदि किसी ज्ञानी या विद्वान से शिक्षा प्राप्त करे तो ज्ञानवान् बन जाएगा। कहने का अभिप्राय यह कि मनुष्य बिना किसी से शिक्षा प्राप्त किये स्वयमेव किसी प्रकार का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। जो लोग कहते हैं कि मनुष्य ने क्रमशः उत्तरोतर ज्ञान प्राप्त किया और कि आज का मनुष्य अज्ञान की अवस्था से निकल कर ज्ञान की मंजिलों को पार करता हुआ एक विशेष अवस्था को पहुंच गया है ऐसे लोग भूले हुए हैं। यदि इसी प्रकार क्रमशः उन्नति होती तो निर्जन वनों और मरुस्थलों में रहने वाले जंगली मनुष्य ज्योतिष और गणित विद्या में निपुण होते, किन्तु देखने में आता है कि ऐसे मनुष्य दस तक गिनना भी नहीं जानते। भारत में डेढ़ सौ वर्ष पर्यन्त अंग्रेज शासक रहे किन्तु भारतवासी यह न जान सके कि बिना तार के तार कैसे जाती है और फोनोग्राफ कैसे बजता है, क्योंकि वह भारतियोंको क्लर्क बनानेके अतिरिक्त

और कुछ भी न बनाना चाहते थे। अतः इन के लिए शिक्षा का भी वैसा ही प्रबन्ध था। योरुप वालों को यदि युनान न सिखाता तो सारा योरुप शिक्षा से कोरा रहता। यदि युनान भारत से न सीखता तो वह निपट जङ्गली अवस्था में ही होता। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य के पिछले जन्म के संस्कार चाहे कितने प्रबल क्यों न हों जब तक उस को शिक्षा देने वाला न मिले तो वह कुछ भी नहीं सीख सकता। जब यह प्रत्यक्ष है तो कैसे मान लिया जाय कि मनुष्य स्वयमेव शनैः शनैः ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इस वास्ते तो प्रोफैसर मैक्समूलर ने एक स्थान पर लिखा है कि "आदि सृष्टि से ले कर आज तक संसार में कोई भी नितान्त नया धर्म नहीं हुआ।" उपरोक्त प्रमाणों और युक्तियों से स्पष्ट सिद्ध है कि ज्ञान अथवा इल्म न तो मनुष्य का बनाया हुआ है और न ही क्रमशः उत्पन्न हुआ है। सत्यज्ञान निस्संदेह ईश्वर का दिया हुआ है और आदि सृष्टि से प्रकाशित किया हुआ है। गुरु नानक जी के शब्दों में :—

"जो कुछ पाया सो एकावार" (जप जी)

अर्थात उस परमेश्वर ने अपने भण्डारे को आरम्भ से ही हर एक पदार्थ से भर दिया है। उसको संसार के लिए नित नये सूर्य या किसी पदार्थ के बनाने की अवश्यकता नहीं रहती।

(टीकाकार ज्ञानी शेर सिंह)

अब जिस मनुष्य जाति को ज्ञान ईश्वर से मिला है तो उसको भाषा या वाणी भी ईश्वर की ओर से मिली है और उस प्रभु की प्रेरणा से ही आदि सृष्टि में मनुष्य सार्थक बोल सका है। क्योंकि

ज्ञान बिना भाषा या वाणी के ठहर नहीं सकता। भाषा या वाणी ही ज्ञान के प्रकाश का एकमात्र साधन है। ज्ञान और भाषा का या शब्द और वेद का सम्बन्ध तो जोड़े अथवा एक साथ होने वाले भाई बहिन का सा है जैसा कि गुरु नानक देव जी ने कहा-

विस्माद नाद विस्माद वेद (आसा दी वार)

अर्थात् हे प्रभो! तेरा शब्द और ज्ञान आश्चर्यजनक और चकित करने वाला है। फिर कहा :—

सब नाद वेद गुरु वाणी, मन दाता सारंग पानी

अर्थात् सारे का सारा शब्द और ज्ञान भंडार तो उस आदि गुरु, सच्चे गुरु परमात्मा की वाणी है। जिस विचित्र वाणी के अन्दर या सारंग पानी परमात्मा के ज्ञान में मेरा मन रत हो रहा है। यह नाद और वेद तो एक दूसरे बिना रह ही नहीं सकता। इस लिए तो गुरु नानक देव जी ने स्पष्ट बतलाया है कि :—

गुरुमुख नादंग गुरुमुख वेदंग गुरुमुख रिहा समाई।

इसका अर्थ करते हुए ज्ञानी शेर सिंह जी ने लिखा है कि गुरु के मुख की वाणी नाद है और गुरु के मुख की वाणी वेद है। और फिर लिखा कि यहां गुरु से तात्पर्य वाहगुरु और वाणी से अभिप्राय उसका आदेश है। आगे आया कि

गुरु ईश्वर गुरु गोरख ब्रह्मा गुरु पार्वती माई

इस पर ज्ञानी जी लिखते हैं कि यहां भी गुरु का अर्थ वाहगुरु है।

यह भी स्मरण रखिए कि जिस प्रकार ज्ञान बिना सिखलाए के नहीं आता। उसी प्रकार भाषा भी बिना सिखलाए नहीं आती मनुष्य तो वही भाषा बोलता है जो वह सुनता है। माता पिता की गोद में या परिवार में सुनता है, उसका उच्चारण करता है। यही कारण है कि देश देश प्रान्त प्रान्त और ग्राम ग्राम की भाषा में अन्तर है। तात्पर्य यह है कि मनुष्य बिना सिखाए कोई भाषा बोल ही नहीं सकता और न ही कोई नवीन भाषा बना ही सकता है। इस लिए मानना ही पड़ेगा कि मनुष्य को भाषा, आदि सृष्टि में, परमात्मा की ओर से प्राप्त हुई है और यह जान लेने पर कि मनुष्य जाति को आदि सृष्टि में भाषा अपने आप प्राप्त नहीं हुई अपितु परमात्मा की ओर से उसके हृदय में इस प्रकार प्राप्त हुई जिस प्रकार कि ज्ञान प्राप्त हुआ तो यह भी जानना और मानना पड़ेगा कि एक ही स्थान पर पैदा होने वाले आदि मनुष्यों का ज्ञान और भाषा एक ही थी। उसको गुरुबाणी में नाद और वेद के नाम से पुकारा गया हैं क्योंकि दल बांध कर रहने वाले इस सामाजिक प्राणी मनुष्य की भाषा यदि एक न होती तो उस का कोई भी प्रयोजन सिद्ध न होता। इस लिए तो गुरु नानक देव जी ने "जपजी साहिब" में लिखा है कि :—

स्वस्ति अथिवाणी बरमाओ, सत सुहान सदा मन चाओ

अर्थात् आदि सृष्टि में ब्रह्मा की बाणी या परमात्मा की दी हुई ज्ञान युक्त भाषा या वेद बाणी कल्याण करने वाली, ज्ञान प्रदान करने वाली, सत (सच्ची) सुहावनी सुन्दर पूर्ण और सदा मन को (चाओ) प्यारी लगने वाली और लुभाने वाली आनन्द दायक है।

परन्तु अब प्रश्न यह होता है कि भाषाएं अनेक क्यों हैं ? एकही आदि भाषा के भिन्न भिन्न अनेक रूप होने के क्या कारण हैं ? तो इस बात का समाधान यह है कि एक ही बोली या भाषा अनेक शाखाओं में फैल कर अनेक विभागों में बंट जाती है। यहां हम उन में से कुछ कारणों का वर्णन करते हैं जिन से भाषाओं में परस्पर विरोध उत्पन्न होता है।

(१) प्राय. देखा जाता है कि मूर्खों और विद्वानों के उच्चारणों अथवा बोल चाल का अन्तर एक नई भाषा के बनने का कारण बन जाता है। तीर्थ यात्री और देश विदेश में घूमने वाले व्यक्ति एक देश से दूसरे देश में आया जाया करते हैं। उन में मूर्ख और विद्वान दोनों प्रकार के लोग होते है। इस प्रकार जिन तीर्थों में नगरों अथवा प्रान्तों में वह आते जाते हैं वहां भी विद्वान और मूर्ख दोनों प्रकारके लोग होते हैं अब जब वह दोनों परस्पर एक दूसरे से बातचीत करते हैं तो विद्वानों के उच्चारण किए हुए शुद्ध शब्दों के बदले सर्व साधारण और अनपढ़ मनुष्यों के उच्चारण के कारण अन्तर पड़ जाता है। उदाहरण के रूप में देखिये एक विद्वान ने कहा दुग्ध तो अनपढ़ कहने लगा दूध, विद्वान ने कहा सूक्ष्म तो साधारण आदमी बोल उठा छूछम। विद्वान बोला प्रत्यक्ष तो साधारण आदमी कहने लगे परतख, विद्वान ने कहा मनुष्य तो साधारण बोला मनुख। बिगड़ते और अन्तर पड़ते पड़ते यह मित्रता एक ग्राम या एक नगर या एक प्रान्त की भाषा में परिवर्तित हो गई और प्रतिदिन की बोलचाल में लोग सुनने सुनाने और प्रयोग करने लग गए अर्थात वहां के विद्वान और साधारण एक साथ उन शब्दों को बोलने लग

गए जिसने एक पृथक् भाषा का रूप धारण कर लिया। इस प्रकार प्रदेश और प्रान्तों की भिन्न भिन्न भाषायें बन गई। उदाहरण के रूप में गुरु अर्जुन देव जी ने मारु राग में एक शब्द उच्चारण करते हुए लिखा कि :—

पुरख पूरन सुख दाता, संग बसो नीत ।
मरे न आवे न जाये न बिनसे, व्यापत ऊसन न सीत ॥

अब यह है पंजाब की हिन्दी भाषा इसको एक यू० पी० का हिन्दी जानने वाला इस प्रकार भी उच्चारण कर सकता है कि

पूर्ण पुरुष सुख दाता, संग बसे है नित्य ।
मरे न आवे न जाये विनाशे, व्यापे ऊषन न शीत ॥

अर्थात् वह पूर्ण पुरुष परमात्मा सुखों को देने वाला है क्योंकि वह अनादि काल के मनुष्यों के संग व्यापक है। वह परमात्मा न मरता है और न आता है न जाता है न ही उसका नाश होता है और न ही उसमें उष्णता अर्थात गर्मी और शीत अर्थात सरदी व्यापत अथवा प्रभाव कर सकती है।

(२) लिपि में अक्षरों की न्यूनाधिकता के कारण भी शब्दों का रूप बिगड़ जाता है। जैसे यूनानी भाषा में "चकार" न होने के कारण महाराजा चन्द्रगुप्त का नाम "सैंडरो कोटकिस" लिखा गया। अरबी में चरक को सरक बनाया गया। कोटपाल को कोतवाल और कोपीन को कफन लिखा गया। चक्र को चर्ख यक्ष्म को ज़ख़्म उच्चारण किया गया। इस प्रकार धनी को ग़नी

कह कर पुकारा गया। गुरुमुखी लिपि में (ष) न होने के कारण सृष्टि को सरठ लिखा गया। और शिष्य को सिक्ख नाम से पुकारा गया।

इस पर एक और उदाहरण लीजिए। बंगला के प्रसिद्ध वैज्ञानिक जगदीशचन्द्र बोस और प्रसिद्ध नेता सुभाषचन्द्र बोस या सरिशचन्द्र बोस के नाम में जो बोस शब्द है वह संस्कृत का बिगड़ा हुआ रूप है। बंगाली लोग "व" को 'ब' आ' को 'ओ' उच्चारण करते हैं। इस लिए वसु शब्द बोस बन गया और अंग्रेजी जानने वालों ने उसे बना दिया।

(३) उत्तम व्याकरण के न होने से भी भाषा में शुद्धता स्थिर नहीं रहती। बल्कि कुछ काल के पश्चात उस का रूप और का और हो जाता है। सब लोग जानते तथा मानते हैं कि भारतवर्ष की वर्तमान प्रान्तिक भाषाएं संस्कृत से बिगड़ कर बनी हैं। परन्तु संस्कृत का "द्विवचन" इन में नहीं है। एक वचन है और बहुवचन है। इस प्रकार सैंकड़ों बातें हैं जो प्राचीन प्रथम भाषा में थीं किन्तु नवीन भाषामें नहीं हैं। अनपढ़ों की साधारण और प्रामीन गंवार भाषा में व्याकरण के इतने नियम नहीं हैं जितने पढ़े लिखे विद्वानों की भाषा में होते हैं, इस कारण से भाषा का रूप और का और हो जाता है। अब हम बुद्धि की कसौटी पर परख कर देखते हैं तो पता चलता है कि वैदिक भाषा की वर्णमाला संसार की सम्पूर्ण भाषाओं से विस्तृत, वैज्ञानिक और पूर्ण है। गुरु ग्रन्थ साहिब में आई बावन अक्षरी और गुरुमुखी की पैंतीस अक्षरी इसका स्पष्ट प्रमाण है। तब सिद्ध हो

जाता है कि यही प्राचीन और आदि लिपि और आदि भाषा है और यही ज्ञानियों की, तथा वास्तविक भाषा है। शेष सभी भाषाएं इस की बिगड़ी हुई शाखाएं और प्रशाखाएं हैं। ज्ञानी ज्ञान सिंह जी ने भी "तवारीखे खालसा" में पुराने हालात की भूमिका में साफ लिखा है कि संस्कृत भाषा सभी भाषाओं की माता है, यही भाषा सभी भाषाओं का स्रोत आदि और विकास का स्थान है और कि संसार भर में जितनी भी विद्या फैली है सब भारतवर्ष से फैली है। परन्तु समय आया जब आर्यों के भाग्य का सूर्य अस्त हो गया और हम भारतवासी दुर्भाग्य से अपनी मातृभाषा संस्कृत से ही नहीं अपितु देवनागरी अथवा हिन्दी भाषा से दूर जा पड़े। जैसे कि जन्म साखी भाई बाला में वर्णन है कि गुरु नानक देव जी के समय में उनके सिक्खों में नागरी अक्षर कोई विरला ही जानता था। चुनांचि सुलतानपुर से मोरखा खत्री को जो नागरी अक्षर जानता था पता लगने पर बड़े यत्न से बुलवाया गया और गुरुनानक देव जी की जन्मपत्री दिखाई गई। फिर जन्मसाखी के ४ पृष्ठ पर लिखा है कि उस समय में शास्त्री समझनी और पढ़नी कठिन दिखाई देती थी। गुरु नानक जी ने लोगों की बुद्धि मोटी जानकर गुरुमुखी अक्षर बनाए। उस समय शास्त्री पढ़नी क्यों कठिन थी और उस समय देश की कैसी बुरी अवस्था थी इस का वर्णन भाई गुरु दास जी अपनी वारों में, जिन को गुरुग्रन्थ साहिब की चाबी कहा गया है यों कहते हैं :—

जुग गरदी जब होए है, उलटे जुग क्या होए वरतारा।
उठे ग्लानि जगत् विच, वरते पाप भ्रष्ट संसारा ।।

वरण आश्रम न भावनी, खै खै जलन बांस अंगियारा।
निन्दिया चाले वेद की, सम्झिन नहीं अज्ञान गुबारा।।
वेद ग्रन्थ गुरु हट है, जिस लग भौ जल पार उतारा।
(वार प्रथम शब्द १७)

अर्थात जुग गरदी अथवा क्रान्तिमय काल में संसार का उलटा चलन हो जाया करता है, धर्म में अधोगति आ जाती है। पाप फैल जाता है। संसार भ्रष्ट और आचार हीन हो जाया करता है। लोगों को वर्ण आश्रम मर्यादा नहीं भाती। परस्पर फूट के कारण बांस की भान्ति लोग रगड़ खा कर द्वेष की अग्नि में जल मरते हैं। वेद की निन्दा आरम्भ हो जाती है। लोग वेदों को भूल जाते हैं उनके भाव को नहीं समझ सकते। अज्ञान और अन्धकार फैल जाता है। पर, हे मनुष्यो! वेद ग्रन्थ तो गुरुहट अथवा परमगुरु परमात्मा का सच्चा ज्ञान है जिनको पढ़ने और आचरण करने से मनुष्य संसार सागर से पार उतर जाया करते हैं।

आगे चल कर भाई साहिब यवन राज्य का वर्णन करते हुए उस काल के अत्याचार तथा अनाचार का वर्णन इस प्रकार करते हैं :—

कल आई कुत्ते मूहीं, खाज होया मुरदार गोसाईं।
राजे पाप कमांवदे, उलटी बाड़ खेत को खाए।
प्रजा अन्धी ज्ञान बिन, कूड़ कुसत मुखों अलाईं।
(वार प्रथम शब्द ३०)

अर्थात देश में लोग कल्याई (काले मुख वाले) कुत्ते के स्वभाव वाले हो गए हैं, क्योंकि सर्व साधारण का भोजन मुरदार अर्थात मांस हो गया है। राज्य कर्मचारी पापी हो गए हैं, जिस राज्य को प्रजा की बाड़ होना चाहिए था वह उल्टा प्रजा रूपी खेती को खा रहा है। प्रजा को किसी प्रकार भी स्वतन्त्रता से सुख और चैन नहीं लेने दिया जाता और प्रजा भी सत्य ज्ञान के बिना अन्धी हो रही है।

ठाकुर द्वारे ढा के तह ठोड़ी मसीत उसारा।
मारन गौ ग़रीब नूं, धरती ऊपर पाप वथारा
(वार प्रथम)

अर्थात यवन राज्य में मन्दिरों को गिरा कर उन के स्थान मस्जिदें निर्माण करवाई और गरीब और महोपकारक गौओं का वध किया जा रहा है। जिससे अत्याचार तथा अनाचार का झंडा ऊंचा और धरती पर पाप का विस्तार हो रहा है।
फिर लिखा :—

पाप गरासी पृथ्वी, घोल खड़ा धर हेठ पुकारा।

अर्थात पापों ने पृथ्वी को हड़प कर रखा है, बैल पृथ्वी के नीचे खड़ा पुकार रहा है।

गुरु नानक देव जी ने जन्मसाखी में कहा है कि:-

लेच्छ जामा बहुत होय के, करे हिन्दुओं पर जोर।
क वर्ण सब सृष्टि होय, वरते धन्दों कोर॥

अर्थात मुसलमान राज्याधिकारियों का ज़ोर बहुत बढ़ गया है वह हिन्दुओं पर हर प्रकार का अत्याचार कर रहे हैं, सब को एक वर्ण अथवा एक सम्प्रदायी (मुसलमान) बनाना चाहते हैं। संसार में अन्धकार फैल रहा है। गुरु नानक देव जी ने देश और जाति की इस गिरी हुइ अवस्था को देख कर ही बड़े दुःख के साथ यह कहा था कि:—

खत्रियां तां धर्म छोड़िया, मलेच्छ भाखा गहि ।
सृस्ठ सभ एक वर्ण होई, धर्म की गति रही ॥
(धनासरी म० १)

जन्म साखी भाई बाला पृष्ठ ३६१ पर साखी भाई राम तीर्थ के नाम से गुरु नानक देव जी ब्राह्मण को ऊपर लिखित उपदेश स्वयं करते हैं और इस का अर्थ बतलाते हैं कि ऐ स्वामी कलियुग में खत्री ब्राह्मण संसार में सुखी थे सो उन्होंने अपना धर्म छोड़ दिया और पाप बुद्धि पकड़ी सो कौन कौन सा पाप करते हैं। एक तो लड़की का धन लेते हैं सो बड़ा ही पापों का पाप है। दूसरा खत्री ब्राह्मण हो कर तुरकों (मुसलमानों) के साथ वाणिज्य व्यापारकरते हैं। अपनी भाषा को छोड़कर तुर्कों की भाषा बोलते हैं यह भी अत्यन्त पाप है।

इस प्रकार जन्म साखी के पृष्ठ ४२ पर वर्णन है कि-

जब गुरु नानक देव जी अपने बहनोई जयराम जी भल्ला के हां गए तो उस ने नानक जी को किसी काम में लगाने का विचार किया तो उस ने पूछा, हे नानक जी!

क्या आप तुर्की (फ़ारसी) भी पढ़े हो तो नानक जी ने कहा नहीं मैं हिन्दगी (हिन्दी) भाषा ही पढ़ा हूँ चुनांचि जयराम जी ने आपको नवाब दोलत खां के पास मोदीखाना पर कारिन्दा नियुक्त करा दिया।

गुरुनानक देव जी स्वयं संस्कृत न पढ़े थे तो भी वेद आदि सत्यशास्त्रों में उनकी पूरी श्रद्धा थी। संस्कृत भाषा को अपनी धर्मभाषा मानते थे। जैसा कि जन्मसाखी भाई बाला के पृष्ठ २७ पर वर्णन आता है कि जब पिता कालू जी ने आप को कहा कि हे बेटा! अब तू नवयुवक है तुझे किसी कारोबार में लगना चाहिए यदि चाहे तो दुकान कर ले अथवा इच्छा हो तो घोड़ों का व्यापार कर ले, दोनों कार्य अच्छे सम्मान पूर्ण और लाभप्रद हैं तो आपने कहा :-

सुन शास्त्र सौदागरी, सत घोडे लें चल।
खर्च बनह चंगाइयां मत मन जाने कल।
निरंकार के देस जा तां सुख लहे मल।

इसका अर्थ भी पिता जी को स्वयं करके बतलाया कि हे पिता जी! सत्यशास्त्रों को श्रवण करना और उनको मन में धारण या मनन करना यह तो हम ने व्यापार किया है और जो सच बोलना है वह हमने घोड़े लिये हैं। बुरे कर्मों का त्याग और शुभ कार्यों का ग्रहण करना यह खर्च बांधा है और मन में यह दृढ़ता है कि परमेश्वर सब जगह व्यापक है हमारे अंग संग हैं सो उस भगवन्त की कृपा से निरंकार के देश में जा प्राप्त हुए हैं, बड़े आनन्द में मग्न हैं। ज़रा बिचार करिए तो सही कि अपने मातृ

धर्म मातृभाषा और मातृ-सभ्यता से गुरु जी को कितना अगाध प्रेम था।

एक और प्रमाण लीजिए, जन्म साखी भाई बाला पृष्ठ १० पर वर्णन है कि बाल्यकाल में गुरुनानक जी ने "ओ३म् इति एक अक्षर ब्रह्म" सप्तश्लोकी गीता का श्लोक उच्चारण किया तो माता पिता ने कहा हे पुत्र! हमारी समझ में यह संस्कृत नहीं आती, हमें इसका अर्थ सुनाओ, तो गुरुनानक जी ने कहा -- भगवान कृष्ण ने अपने भक्त अर्जुन को उपदेश दिया है कि हे अर्जुन! ओ३म कार जो प्रथम अक्षर वेद में है और प्रणव भी उसीका नाम है सो ओंकार परम पुरुषोत्तम जिसको पूर्णब्रह्म भी कहते हैं तिस के सांत का शब्द है सो वाणी रूप होकर प्रथम ब्रह्मा के हृदय में प्रवेश किया। सो इसी वाणी के बल से संसार रचा और चार वेद भी संसार में प्रवृत्त किये और भक्ति परमेश्वर का भजन भी प्रवृत्त किया। जो कोई इस ओंकारका जाप करेगा और मैं जो परम ईश्वर हूँ जो मेरा ध्यान धरेगा, जब वह प्राणी शरीर का त्याग करेगा सो परम धाम को प्राप्त करेगा।

ऊपर लिखित प्रमाणों से पाठकों को यह पता लग गया होगा कि गुरुमुखी लिपि क्यों बनाई गई है।

यवन राज्य में प्रायः, और औरंगजेब के शासन काल में विशेषतः हिन्दुओंके लिए स्वतन्त्रता से संस्कृत विद्या अथवा देव नागरी अक्षरों का सीखना और पढ़ना कठिन हो गया था धर्म मन्दिर गिराए जा रहे थे। जहां ब्राह्मण लोग बैठ कर विद्या पढ़ा सकते थे और पंजाब प्रान्त जो बाहरी आक्रमणकारिओं का पग-

घर (पायदान) बन गया था जो भी आता पहले इसे नष्ट भ्रष्ट करता। इन कारणों से यह देश सुसंस्कृत विद्या से खाली हो गया था जिसके सम्बन्ध में जन्मसाखी में बतलाया कि उस काल में शास्त्र पढ़ना और समझना कठिन था। उस आपत्ति काल को देख कर गुरु अंगद देव जी ने उचित जान कर और भाई मोखा खत्री के परामर्श से महाजनी अक्षरों अथवा लंडे अक्षरोंकी जिन को खत्री महाजन बहीं खाता के लिए सुगमता से घर पर ही पढ़ लिया करते थे शुद्धि कर दी अर्थात उन अक्षरों पर हिन्दी की भांति आड़ी लकीर लगा दीं और बारह स्वरों की मात्राए लगा कर गुरुमुखी अक्षरों का रूप दे दिया। कारण यह है कि यदि महाजनी में ग्रन्थ लिखे जाते तो स्वरों के न होने से उनका ठीक पढ़ना असम्भव सा हो जाता। सो इस लिपी को रच कर धार्मिक वाणी द्वारा लोगों में आर्य (हिन्दू) धर्म का प्रचार आरम्भ किया गया।

अब हम न्याय प्रिय सिक्ख विद्वानों और भाईयों से ही पूछते हैं कि क्या अब यवन राज्य की सख्तियां और अत्याचार, अनाचार प्रचलित हैं? और क्या अब तक लोगों की बुद्धि मोटी है। जब यह दोनों बातें नहीं, देश स्वतन्त्र है और विद्या प्राप्त करने के सभी साधन विद्यमान हैं तो फिर क्यों और किस लिए आपत्ति काल की प्रचलित भाषा को अपना कर प्राचीन विद्या से घृणा की जा रही है। जबकि वेद आदि सत्य शास्त्रों में इस लोक और परलोक की धार्मिक और सांसारिक दोनों प्रकार की पूर्ण और निर्भ्रांत विद्या विद्यमान है जिस के प्रचलित होने पर अब भी पहले की भांति हमारी जाति संसार की शिरोमणी, नेता

और गुरु बन सकती है तो फिर क्यों और किस लिए जाति के टुकड़े करके सम्प्रदायिकता को बढ़ा कर अपनी सत्ता को पृथक रखने और अपनी अढ़ाई चावल की पृथक खिचड़ी पकाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

समय की विचित्रता देखिये कि आप इस मातृ धर्म, मातृ भाषा और मातृ सभ्यता के प्रेमी गुरुओं के अनुगामी सिक्ख ही गुरु बाणी को छोड़ कर सय्यद वारिस शाह की पंजाबी के समर्थक बने बैठे हैं। आज सिख नेता हीर रांझा और सोहनी फज़लशाह की पंजाबी को सिखों के हृदयों की धड़कन मानते और बतलाते हैं। किन्तु हमें ज्ञानी शेर सिंह जी के शब्द स्मरण आते हैं जो उन्हों ने नित नेम की टीका करते हुये लिखे हैं कि गुरु ग्रन्थ साहिब की भाषा का हमारी पंजाब की भाषा से बहुत अन्तर हो गया है और भय लगता है कि कहीं गुरुबाणी की भाषा से हमारा सम्बन्ध टूट न जाए।

आज इन झूठा प्रचार करने वाले सज्जनों के सामने हम कुछ और प्रमाण उपस्थित करना अपना कर्तव्य समझते हैं ताकि वह न स्वयं सत्यमार्ग से भटकें और न अपने साथियों और सिक्खों के भटकने का कारण बनें। देखिये:—

(१) नामधारियों के अतिरिक्त शेष सभी सिक्खों का सिद्धांत है कि दसम गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज ने अपने पीछे श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी को गुरु गद्दी पर स्थापित किया और आदेश दिया कि:—

आज्ञा भई अकाल की तभी चलायो पन्थ,
सब सिखन को हुकम है गुरु मानयो ग्रन्थ।
गुरु ग्रन्थ जी मानयो प्रगट गुरां की देह,
जा का हृदय शुद्ध है, खोज शब्द में लेह।

अब यदि गुरु कलगीधर जी की यह आज्ञा सिक्खों के लिये प्रामाणिक माननीय है और वह उस को सोलह आने ठीक मानते हैं तो यह शत प्रतिशत हिन्दी भाषा के अन्दर है। सम्भव वारिस शाह की पंजाबी से, जिस की मांग सिख सज्जन कर रहे हैं, उस का दूर का सम्बन्ध भी नहीं। अब चूंकि सिखों के मन्तव्य के अनुसार इस आज्ञा ने सृष्टि के अन्त तक पूर्णतया स्थिर रहना है अर्थात गुरु ग्रन्थ साहिब के स्थान प्रलय तक कोई दूसरा गुरु नहीं बन सकता, तो मानना पड़ेगा कि यह आज्ञा प्रलय काल तक अटल और स्थिर रहेगी। इस में से एक अक्षर का भी परिवर्तन न होगा। अब जबकि इस में किञ्चिन्मात्र भी परिवर्तन नहीं हो सकता तो गुरु आज्ञा मानते हुए सिख, हिन्दी भाषा से प्रलय काल तक विद्रोह नहीं कर सकते और न ही वारिस शाह की पंजाबी को अपनाने के अधिकारी हो सकते हैं।

(२) दशम गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज ने जिस गुरु ग्रन्थ साहिब को गद्दी पर स्थापित किया है उस का पहला शब्द ही यही है कि.-

एक ओंकार सत नाम करता पुरख निरभौ निर वैर
अकाल अमूरत अजोनि सैं भंग गुर प्रसाद।

यह शब्द केवल ग्रन्थ साहिब के आदि में ही नहीं आया बल्कि जहां भी नया राग या बाणी का आरम्भ होता है इस को उस से पहले स्थान दिया है। दसों गुरु महोदय हर लेख के आरम्भ में इस को लिखा करते थे और गुरु सिख भी सदा से इस का हर लिखत और पढ़त के आरम्भ में मान करते आए हैं, बल्कि इस पर सभी सिख विद्वानों का एक मत है कि यह शब्द सिख धर्म का मौलिक श्लोक है अर्थात इस के अन्दर सिख धर्म के सभी सिद्धांत विद्यमान हैं। इस शब्द की व्याख्या जपजी साहिब है और कि जपजी साहिब की व्याख्या सम्पूर्ण गुरु ग्रन्थ साहिब है। इस लिए सिख मन्तव्य के अनुसार ऊपरोक्त शब्द का एक अक्षर भी अनन्त काल तक परिवर्तन शील नहीं, और यह सारे का सारा शब्द शत प्रतिशत हिन्दी भाषा का अपितु संस्कृत प्रधान हिन्दी भाषा का है।

तो भला फिर बताईये कि कोई सच्चा गुरु सिख किस प्रकार हिन्दी भाषा को पीठ दे कर या इस से विद्रोह करके सय्यद वारिस शाह की पंजाबी का समर्थन कर सकता है।

गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज ने जो सिक्ख मन्तव्य के अनुसार सिक्ख पन्थ को पूर्ण करने वाले और साजने वाले गुरु माने जाते हैं अपने जीवन का उद्देश्य बतलाते हुए कुछ शब्द उच्चारण किये हैं जिनको हम पाठकों के परिचय के लिए अर्थ सहित लिखते है। माता चण्डी के आगे अरदास करते हुए आप बतलाते हैं —

न छाडूँ कहूँ दुष्ट असुरन निशानी,
चले सब जगत में धर्म की कहानी
छत्र धारियन को करूं बेग नाशा,
आपन दास का देखियो तब तमाशा

अर्थात-हे जगत माता! मैं दुष्ट राक्षसों का चिह्न तथा नाम ही मिटा दूंगा ताकि सारे जगत् में धर्म की कहानी चले। मैं छत्र धारी राज्यशासकों का शीघ्र नाश करूंगा। तब आप दास का तमाशा देखना। फिर कहा:—

धर्म वेद मर्याद जग में चलाऊँ,
गौ घात का दोष जग से मिटाऊँ

अर्थात- मैं वेदोक्त धर्म की मर्यादा को संसार में फैलाऊँ और गौ घात का दोष जगत से मिटा दूं।

एक स्थान पर दशम ग्रन्थ में दुःख से कहा है :—

नहीं वेद प्रमान हैं मत भिन्न भिन्न बखान हैं (कलकी अवतार)

अर्थात- देश के अन्दर ऐसे मत उत्पन्न हो गए हैं जो वेदों को प्रमाण न मान अपना अपना भिन्न पन्थ बनाए बैठे हैं फिर कहा कि:-

हम इह काज जगत मो आए, धर्म हेत गुरुदेव पठाये।
जहां तहां तुम धर्म बथारो, दुष्ट दोखियन पकड़ पछाड़ो।
इह काज धरा हम जन्मम, समझ लियो साधुजन मन मम
धर्म चलावन सन्त उबारण, दुष्ट समन को मूल उपारन
(विचित्र नाटक)

अर्थात-मैं तो केवल इसी काम के लिए संसार में जन्म लेकर आया हूँ। (वेद) धर्म मर्यादा को जीवित करने के लिए ही परम गुरु उस गुरु परमात्मा ने मुझे भेजा है। उसकी परम आज्ञा है कि तुम हर जगह जाकर धर्म का विस्तार करो और दोषी दुष्टों को पकड़ कर पछाड़ दो अथवा उनको नीचा दिखलाओ। मैं ने केवल इस काम के लिए जन्म धारण किया है सभी साधु जन अथवा भले मनुष्य भली प्रकार इस मेरी प्रतिज्ञा को समझ लें कि मैं धर्म को चलाने के लिए सन्तों की रक्षा के लिए और उन को उत्साहित करने और दुष्ट मनुष्यों को जड़ से उखाड़ने के लिए ही इस संसार में आया हूँ।

पाठक ध्यान दें कि दशम गुरु जी ने कितनी शुद्ध हिन्दी का अपनी बाणी में प्रयोग किया है और कितनी प्रबल अभिलाषा और प्रतिज्ञा प्रगट की है कि मैं वेदोक्त धर्म मर्यादा को फैलाने के लिये आया हूँ।

(४) गुरु रामदास जी ने सूही महल्ला चार में कुछ शब्द उच्चारण किये हैं जिन को लावां अथवा मंगल फेरों के नाम से माना जाता है। १९१० ई० तक तो सभी गुरु सिखों के विवाह आदि संस्कार आर्य (हिन्दू) रीति के अनुसार हुआ करते थे, किन्तु १९१४ ई० में चीफ खालसा दीवान ने गुरु मर्यादा करण विधि के नाम से एक संस्कार विधि बनाई जिस में गुरु रामदास जी के शब्दों को लावां के रूप में रखा अर्थात इन शब्दों के बिना आनन्द कारज हो ही नहीं सकता। परन्तु इन मंगल फेरों का पहला शब्द ही यह है कि:-

बाणी ब्रह्मा वेद धर्म दृढ़ो, पाप तजाया बलराम जियो।

अब यह शब्द शुद्ध हिन्दी भाषा का है और गुरु रामदास जी ने इसमें स्पष्ट आज्ञा दी है कि ब्रह्मा (ईश्वर) की वाणी वेद को दृढ़ करो, इसके अनुसार दृढ़ता से अपना आचरण बनाओ इस से आप के सम्पूर्ण पाप दूर हो जावेंगे।

(५) आदि गुरु ग्रन्थ साहिब में, जो इस समय गुरु गद्दी पर विराजमान है, सिक्खों को शुद्ध हिन्दी शब्दों में उपदेश देते हुए वेदों के विषय में आदेश दिया है कि:-

हरि सिमरण कर भक्त प्रगटाये, हरि सिमरण लग वेद उपाये।

अर्थात ईश्वर भक्ति और प्रभु स्मरण करने से ही आदि भक्त अथवा ऋषि प्रकट हुए जिन्होंने हरि स्मरण में लग कर ही वेदों का प्रकाश किया अर्थात उस परम पिता परमात्मा ने ही उन के हृदयमें सत्य ज्ञान देकर संसार में वेदोंको उत्पन्न किया फिर कहा-

ओंकार वेद निर्मय

परम पिता परमात्मा ने जिसका निज नाम ओ३मकार है वेदों का निर्माण किया। फिर कहा—

चचा चार वेद जिन सा चारे खानी चार जुगां।

अर्थात परमपिता ईश्वर ने चारों वेदों को प्रकट किया और चार प्रकार की प्रजा उत्पन्न की और काल को चार युगों में विभक्त किया।

चारे वेद होए सचियार, पढ़े सुने तिन चार विचार

अर्थात चारों वेद ही सत्यविद्याओं के भंडार हैं। हे मनुष्य! तू इन चारों को ही विचार पूर्वक पढ़, इनका मनन कर और इनके अनुसार आचरण कर।

(६) गुरु नानक जी ने जब जगन्नाथ तीर्थ में पुजारियों को ठाकुरजी की आरती उतारते देखा तो उनको उपदेश देते हुए ऊंचे दर्जे की संस्कृत मिली हिन्दी में उनको समझाया कि हे पुजारियो! इस आकार वाले मन्दिर में सीमित ठाकुर की आरती उतारते हो, उस निराकार भगवान की आरती जो स्वयं ही जगत के अन्दर हो रही है उसको देखो और उसका गान करो। तो आदेश किया-

गगन मय थाल रवि चन्द दीपक, बने तार का मण्डल जनक मोती
धूल मलियन लो पवन चंवरो करे, सगल बनराय फूलंत ज्योति
कैसी आरती होय भव खण्डना, तेरी आरती अनहतशब्द वाजन्तभेरी

रहाओ

सहस तो नैन, ननह नैन है तोहे को, सहस मूरत ननह एक तू ही
सहस पदुमिल ननह एक पद, गंध बिन सहस तौगंधअविचलत मोही

(अर्थ) हे प्रभो! यह आकाश रूपी थाल जिस में चान्द और सूर्य दो दीपक प्रकाशित हैं और उस थाल के अन्दर तारे और सितारे मोतियों की न्याईं धरे हैं। मलयागिरि पर्वत के चंदन और सुगन्धित लताएं और फूल धूप का उदाहरण हैं और पवन देवता अथवा वायु चंवर कर रही है और सभी फूले हुए हरे भरे वन वृक्ष ज्योति के समान हैं। हे प्रभो! तेरी कैसी अद्भुत और विचित्र आरती हो रही है, हे भव खण्डन देव! तेरी आरती में

अनहद शब्द रूपी भेरी बज रही है। संसार के अन्दर जितनी भी आंखे हैं यह तेरी ही तो हैं। तू ने ही तो इनको देखने की शक्ति प्रदान कर रखी है। परन्तु हे पिता तेरी कोई आंख नहीं। यह जितने भी देह और चराचर जगत हैं सब तेरी बनाई हुई मूर्तियां हैं परन्तु तेरी कोई मूर्ति या आकार नहीं। तू रूप रंग से न्यारा है संसार के पांव सब तेरी देन हैं जिनके सहारे यह जगत चल रहा है परन्तु हाथ पांव आदि कर्मेन्द्रियों से तू रहित है।

तू बिना नाक के है परन्तु संसार के अन्दर सब तेरी ही सुगंध और तेरी प्रदान की हुई नासिका इन्द्रियां हैं अर्थात तू ज्ञान इन्द्रियोंके बन्धन से भी रहित है। हे दयामय भगवान! इसप्रकार से तेरे चरित्रों ने संसारको मोह रखा है, अचम्भे में डाल रखा है।

(७) गुरु राम दास जी ने गुरु अर्जुन देव को योग्य समझ कर गुरु गद्दी का अधिकारी बनाया तो उनका बड़ा लड़का पृथ्वी चन्द क्रुद्ध हो गया, उसने कहा कि मैं बड़ा हूँ। गुरु गद्दी का अधिकार मेरा है। उसने अपने पिता गुरु राम दास जी से बहुत झगड़ा किया और बहुत ही खोटी खरी सुनाई, तो गुरु राम दास जी ने पृथ्वी चन्द को उपदेश के कुछ शब्द कहे, जो शुद्ध हिन्दी भाषा में हैं जिनसे साफ २ सिद्ध है कि सिक्ख गुरु अपनी घरेलू समस्याओं में भी हिन्दी भाषा का प्रयोग किया करते थे। यह प्रमाण इसलिए भी सच्चा और प्रमाणिक है कि यह गुरु ग्रन्थ साहिब में आया है और पृष्ठ ४९७ पर राग सारंग में सम्मिलित है आपने आदेश किया:-

काहे पूत झगरत हो संग बाप
जिनके जने बडेरे तुम हो, तिन स्यों झगरत पाप। रहाओ
जिस धन का तुम ग़रब करत हो, सो धन किसी हो न जात
खिन में छोड़ जाए विख्यारस, तो लागे पछताय।
जो तुमरे प्रभु होत स्वामी, हरि तिन के जापो जाप
उपदेश करत नानक जन तुमको जो सुनो तो जाए सन्ताप
(सरंग मुहल्ला ४)

(अर्थ) हे पुत्र ! तुम अपने पिता के साथ क्यों झगड़ा करते हो। जिनसे तुम बड़े हुए उन माता पिता से झगड़ा करना पाप है। जिस धन का तुम अभिमान करते हो यह तो किसी के साथ नहीं जाना, यह तो पल ही में विषय रस को छोड़ जाता है, फिर मनुष्यों को पछताना होता है हे पुत्र ! जो मेरा वास्तविक स्वामी है उस परमात्मा का जाप करो। इसलिए मैं तुझे उपदेश करता हूँ यदि तुम इसको सुनोगे, इस पर ध्यान दोगे तो तुम्हारा सन्ताप या दुखी होना दूर हो जावेगा।

(८) जिन दिनों मुसलमानों का जोर अत्याचार बढ़ रहा था वह आर्यों (हिन्दुओं) का तलवारसे वध कर रहे थे तो छटे गुरु हर गोविन्द जी ने पवित्र हिन्दी शब्दों में एक जीवन सन्देश दिया था जिसके पढ़ने से पता चलता है कि सिक्ख गुरु किसी प्रकार परस्पर के अपने कार्य व्योपार और वार्तालाप में हिन्दी भाषा का प्रयोग करते थे और कि वह कितने पक्के आर्य (हिन्दू) या वैदिक धर्मी थे। आपने बतलाया:-

यवनन की बांह सहस्र नहीं, मुख चार न नैन हज़ार नहीं
नहीं धार के उनके शरीर बने, लकड़ी की तेरी तलवार नहीं

अधिक नहीं बल में तुमसे, वह सिंह नहीं तुम सियार नहीं।
उठ कर तुर्कण को रण में, क्यों देते तुम पछाड़ नहीं।

अर्थात-हे आर्यो (हिन्दुओ) ! मुसलमानों की कोई हजार भुजाएं नहीं। न ही उनके चार मुख अथवा हजार आंखे हैं। उनके शरीर कोई लोहे के बने हुए नहीं और न ही तुम्हारी तलवारें लकड़ी की बनी हुई हैं। वह बल में भी कोई तुमसे अधिक नहीं। वह शेर नहीं और तुम कोई गीदड़ नहीं। हे वीरो ! तुम उठ कर उन मुसलमानों को रणभूमि में क्यों नहीं पछाड़ देते ?

पाठकगण ! उपरोक्त आठों प्रमाण इतने प्रमाणिक हैं कि उन से इन्कार करने का किसी भी सिक्ख सज्जन को साहस नहीं हो सकता। मैं समझता हूं कि इनकी विद्यमानता में अधिक और प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं। वरन् मैं अपने पक्ष में गुरु बाणी, गुरु घर के इतिहास और गुरु सिक्खों की पुस्तकों से सैंकड़ों प्रमाण उपस्थित कर सकता हूँ। इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि सिक्ख गुरुओं की भाषा पवित्र हिन्दी भाषा थी और वह वेद के मानने वाले और वेदोक्त धर्म के पूरे भक्त थे।

अब सत्य के प्रेमी सज्जनों का कर्तव्य है कि वह इन थोड़े से शब्दों को पढ़ कर सत्य को ग्रहण करें और असत्य को त्यागकरने का प्रयत्न करें। यदि मेरे इस लेख से किसी को मतभेद हो तो वह बड़े चाव से मेरे साथ लेखबद्ध विचार विनिमय कर लें। मैं सत्यके निर्णयके लिए सर्वदा और सर्वथा तत्पर हूँ। इति ओम्।

अमृतानन्द सरस्वती (स्वामी)
(तारा चन्द आर्य)

पुस्तकों की सूची

स्वामी आत्मा नन्द जी लिखित पुस्तकें	रु-पै०
मनोविज्ञान तथा शिव संकल्प	३-५०
वैदिक गीता	२-५०
सन्ध्या अष्टांग योग	०-७५
कन्या और ब्रह्मचर्य	०-१५
आदर्श ब्रह्मचारी	०-१५
स्वर्ग लोक के पांच द्वारपाल	०-१५
ईश्वर जगत कर्ता है !	०-२०
उपासना का वैदिक प्रकार	०-१२
गो मेध यज्ञ पद्धति	०-३१
आत्मोपदेश	०-३५
स्वामी अमृतानन्द लिखित पुस्तकें	
सुखी गृहस्थ	०-१५
ब्रह्मस्तोत्र (सन्ध्या जपजी)	०-१५
ओंकार स्तोत्र	०-१५
धर्म विचार अमृत	०-१२
सतसंग भजन संग्रह बड़ा	०-४०
प्यारे ऋषि की रसीली कहानियां	०-३१
देव यज्ञ प्रकाश (हवन मन्त्र अर्थ सहित मोटे अक्षर	०-५०
ऋषि दयानन्द की एकसौ बातें	०-२०
देश भक्तों की कहानियां दोनों भाग	०-५०
स्वामी आत्मानन्द का जीवन चरित्र	०-१२
सदाचार शिक्षा	०-२५
ईशोपनिषद हिन्दी अनुवाद दोहावली सहित	०-२०
छत्र पति शिवा जी	०-२५
नादानों की कहानियां	०-३०
खण्डन कौन नहीं करता	०-३०
गायत्री गीता	०-२५

भगवत गीता सार	०-२०
आर्य सत्संग गुटका अर्थ सहित मोटे अक्षर	०-७५
देश का विनाश कैसे हुआ	०-१०
सिनेमा या सर्वनाश	०-३०
भक्ति मार्ग	०-२५
ओंकार उपासना	०-२५
गड़गज चिमटा भजन	०-२५
देवियों के गीत	०-२५
वैदिक विवाह मोटे अक्षर	०-६०
प्राचीन धर्म वाटिका	०-७५
प्रार्थना पुस्तक	०-२५
शूरवीरों की कहानियां	०-३०
भूत प्रेत	०-१३
भूत सुधार २ पे० या सकड़ा	१-२५
कर्मवीरों की अमर कथाएं	०-५०
दृष्टान्त दीपिका	०-३०
धर्मवीरों की कथाएं १ भाग ०-२५ दूसरा भाग	०-५०
भारत की आदर्श देवियां	०-५०
गुरु ग्रन्थ का वैदिक पन्थ खालसा ज्ञान प्रकाशभाग १	०-७५
,, ,, ,, ,, ,, भाग २	२-००
दहेज प्रथा	०-१०
शिवाजी के यज्ञोपवीत की करुण कहानी	०-१०
इसाईमत पोल प्रकाश	०-०६
यदि चाणक्य प्रधान मन्त्री होते	०-०५
धर्म शिक्षा	०-२५
सरोज के नाम पत्र	०-३१
वैदिक प्रश्नोत्तरी] प्रति सैकड़ा	०-०५
पूजा किसकी] ३—००	०-०५

उर्दू की पुस्तकें

गुरु मत सार	०-१२
गुरु ग्रन्थ साहिब की आत्म कथा	०-१२
बिला शुबा नवीन सिख हिन्दू नहीं	०-१२
प्राचीन सोलह संस्कार	०-१२
वैदिक सन्ध्या (जप जी)	०-१०
हवन मन्त्र	०-१०
भक्ति मार्ग	०-२५
वैदिक धर्म की खूबियां	०-२५

पंजाबी की पुस्तकें

वैदिक सन्ध्या (जपजी)	०-१२
दहेज प्रथा	०-१०
गुरुमतसार	०-१०
भूत प्रेत	०-२०

सूचना

ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थ, सार्वदेशिक प्रकाशन, गोविन्द राम हासानन्द, देहाती पुस्तक भण्डार की धार्मिक पुस्तकें तथा सत्यार्थ प्रकाश मोटे अक्षरों का, छोटा, संस्कार विधि बढ़िया आदि पुस्तकें हमारे हां से हर समय स्टाक में मिल सकती हैं।

अतः सज्जन पुरुष हमारी सेवाओं से लाभ उठावें।

पता— स्वामी आत्मानन्द प्रकाशन मन्दिर

वैदिक साधन आश्रम, यमुनानगर (अम्बाला)

यूनाईटिड प्रिंटिंग प्रैस गली ५ नवांकोट अमृतसर में छपी

स्वामी आत्मानन्द प्रकाशन मन्दिर

वैदिक साधन आश्रम, यमुनानगर (अम्बाला)

शुभ चिन्तकों की सेवा में

श्री स्वामी आत्मानन्द प्रकाशन विभाग की प्रचार योजना को सफल बनाने के लिये आप निम्न प्रकार से हमें सहयोग देकर अपने कर्तव्य का पालन करें।

१— प्रकाशन के होता सदस्य बनिये और बनाईये, अपना नाम दानियों में छपवा कर अपने दान से पुस्तकें प्रकाशित करवाईये ताकि प्रकाशन का क्षेत्र बढ़ता जाये।

२— प्रकाशन का सस्ता साहित्य खरीदिये और दूसरों को खरीदने की प्रेरणा कीजिये।

३— शुभावसरों तथा पारितोषिक आदि के अवसर पर प्रकाशन की पुस्तकें उपहार में दीजिये।

४— प्रकाशन के स्थाई ग्राहक बनिये और बनाइये।

५— जिस पुस्तक को आप प्रचारार्थ उपयोगी समझें उस की प्रति प्रकाशनार्थ हमें भेजिये।

६ — हमारी तीन इच्छायें:-

(i) वेद को विश्व धर्म बनाना।

(ii) वेद संदेश अधिक सज्जनों तक पहुँचाना।

(iii) सार्वभौम आर्य विचार धारा का प्रचार करना।

निवेदक—अमृतानन्द सरस्वती
(स्वामी)

प्रबन्धकः—

श्री स्वामी आत्मानन्द प्रकाशन

वैदिक साधन आश्रम यमुनानगर (अम्बाला)